शाहजहाँ ।

लेखक—
स्व० द्विजेन्द्रलाल राय ।

हिन्दी-ग्रन्थ-रत्नाकर-सीरीजका २३ वाँ ग्रन्थ ।

शाहजहाँ ।

सुप्रसिद्ध नाटककार

स्वर्गीय बाबू द्विजेन्द्रलाल रायके

बंगला नाटकका हिन्दी अनुवाद ।

अनुवादकर्त्ता—

पण्डित रूपनारायण पाण्डेय ।

प्रकाशक,

हिन्दी-ग्रन्थ-रत्नाकर कार्यालय,

हीराबाग, गिरगाँव, बम्बई ।

चैत्र १९८० वि० । मार्च १९२३ ।

द्वितीय संस्करण ।] [मूल्य एक रुपया ।

जिल्द सहितका १॥)

सम्पादक और प्रकाशक
श्रीनाथूराम प्रेमी,
हिन्दी-ग्रन्थ-रत्नाकर कार्यालय,
हीराबाग, बम्बई ।

मुद्रक—
श्रीरामकिशोर गुप्त,
साहित्य प्रेस, चिरगाँव (झाँसी)

वक्तव्य।

(प्रथमावृत्तिसे ।)

मेवाड़-पतनकी भूमिकामें बंगभाषाके ख्यातनामा नाट्यकार और सुकवि श्रीयुक्त द्विजेन्द्रलाल राय और उनकी रचनाका यत्किञ्चित् परिचय दिया जा चुका है। आज हम उन्हींके एक और नाटक—'साजाहान'—का हिन्दी अनुवाद लेकर पाठकोंके सामने उपस्थित हुए हैं। इसके पहले इस ग्रन्थमालामें द्विजेन्द्र बाबूके दो नाटक—दुर्गादास और मेवाड़-पतन प्रकाशित हो चुके हैं। 'पुनर्जन्म' नामक प्रहसनका अनुवाद भी 'सूमके घर धूम' के नामसे हमने प्रकाशित किया है।

नाट्यशास्त्रके प्रधान प्रधान मर्मज्ञोंका कथन है कि द्विजेन्द्रबाबूकी नाट्यप्रतिभाका सबसे श्रेष्ठ विकास उनके नूरजहाँ-शाहजहाँ नाटकोंमें हुआ है। ये दोनों ही नाटक उद्देश्यहीन हैं, अर्थात् इनमें कविने नाटकीय सौन्दर्य और चरित्रविकासके सिवा किसी नीतिविशेषके या किसी खास तरहकी शिक्षाके प्रचारका प्रयत्न नहीं किया है। और बहुतोंका यह मत है कि सुकुमार काव्यकलाके मूलमें कोई खास उद्देश्य नहीं होना चाहिए। अन्यथा उद्देश्यकी कैदके मारे उसका सर्वोत्तम विकास नहीं होने पाता। कलाकी प्रतिभाका पूरा विकास तभी होता है जब उसका उद्देश्य कला ही होता है—Art for art's sake. स्वर्गीय बंकिम बाबूके जितने उपन्यास हैं उनमें केवल दो ही उपन्यास ऐसे

हैं जिन्हें हम उद्देश्यहीन कह सकते हैं—एक 'विषवृक्ष' और दूसरा 'कृष्णकान्तका विल'। ये 'देवी चौधरानी' और 'आनन्दमठ' आदिके समान उद्देश्यमूलक नहीं हैं और इसी कारण उनके यही दो उपन्यास सर्वश्रेष्ठ समझे जाते हैं।

रुचिभेदके अनुसार नूरजहाँ और शाहजहाँमेंसे कोई नूरजहाँको सर्वश्रेष्ठ बतलाता है और कोइ शाहजहाँको। बंगालके प्रसिद्ध साहित्यज्ञ श्रीयुक्त देवकुमारराय चौधरी नूरजहाँके भक्त हैं, वे उसे ही द्विजेन्द्रबाबूका सर्वश्रेष्ठ नाटक बतलाते हैं और श्रीयुक्त प्रफुल्लकुमार सरकार महाशय शाहजहाँपर अनुरक्त हैं। आप बंगदर्शन नामक पत्रमें लिखते हैं कि "शाहजहाँको बंगसाहित्यका सर्वश्रेष्ठ नाटक कहनेमें भी हमें संतोष नहीं होता। बंगलासाहित्यमें संसारको दिखलाने योग्य जो दो एक वस्तुयें हैं, उनमेंसे यह एक है।" जो हो इस मतभेदकी मीमांसा करनेकी आवश्यकता नहीं है। हमारी समझमें ये दोनों ही नाटक अद्वितीय हैं और द्विजेन्द्रबाबूके यशोगगनके प्रकाशमान नक्षत्र हैं।

जिस समय यह नाटक कलकत्तेके 'मिनर्वा' थियेटरमें खेला गया, उस समय लोग इस पर मुग्ध हो गये। दर्शकोंके द्वारा इसका इतना अधिक आदर हुआ जितना द्विजेन्द्र बाबूके अन्य किसी नाटकका नहीं हुआ था। इस नाटककी कृपासे ही 'मिनर्वा थियेटर' प्रसिद्ध हो गया और उसकी प्रशंसाकी धारा अरोक गतिसे बहने लगी। इसके कुछ ही समय पीछे 'शाहजहाँ नाटक' की भी साहित्यसंसारमें प्रसिद्ध हुई और वह (प्रसिद्धि) अब तक ज्योंकी त्यों बनी हुई है। स्वयं द्विजेन्द्रबाबूकी भी आगेकी कोई रचना उसके गौरवको हरण नहीं कर सकी है। यह नाटक आजसे कोई ९ वर्ष पहले प्रकाशित हुआ था।

श्रीयुक्त बाबू नवकृष्ण घोष बंगला साहित्यके बड़े ही मार्मिक समालोचक हैं। आपने इस नाटककी एक विस्तृत समालोचना माघ-फाल्गुन-

चैत्र सं० १९६७ के 'साहित्य' में प्रकाशित कराई थी। उक्त समालोचनासे पाठकगण इस नाटकके मर्मको और इसके गुणदोषोंको अच्छी तरह समझ सकेंगे और जान सकेंगे कि अन्य भाषाओंमें पुस्तकसमालोचनायें कितने परिश्रमसे की जाती हैं, इसलिए हम उसका भी अनुवाद प्रकाशित कर देना उचित समझते हैं। आशा है कि हमारे पाठक नाटकको समाप्त करके उसे भी एक बार अवश्य पढ़ जायँगे।

इस नाटकका अधिकांश अनुवाद फार्सी-मिश्रित हिन्दीमें किया गया है और यह इसलिए कि मुसलमान पात्रोंके मुँहसे यही भाषा अच्छी मालूम होती है। महामाया, जसवन्तसिंह आदिके मुँहसे संस्कृतमिश्रित हिन्दी कहलवाई गई है; पर ऐसे पात्रोंकी बातचीत बहुत ही कम है। मालूम नहीं, पाठकोंको यह ढंग कहाँतक पसन्द आवेगा। हमें भय है कि कहीं इससे हमारे शुद्ध हिन्दीके प्रेमी पाठक हम पर अप्रसन्न न हो जायँ। पर वास्तवम यह ढंग अभिनयकी स्वाभाविकता तथा सुन्दरताको बढ़ानेसे लिए ही पसन्द किया गया है।

हमें आशा है कि हिन्दी-संसार मेवाड़-पतन और दुर्गादासके समान इस नाटकका भी आदर करेगा और आगे शीघ्र ही प्रकाशित होनेवाले, ताराबाई, चन्द्रगुप्त, नूरजहाँ आदि नाटकोंके पढ़नेके लिए उत्कण्ठित रहेगा।

हम श्रीमान् दिलीपकुमार राय महाशयके बहुत ही कृतज्ञ हैं जिनकी कृपासे यह नाटक प्रकाशित हो रहा है और जिन्होंने हमें अपनी स्वाभाविक उदारतासे अपने पिताके समस्त ग्रन्थोंके हिन्दी अनुवाद प्रकाशित करनेकी अनुमति दे दी है।

ज्येष्ठ कृष्णा ९,
सं० १९७४ वि०।

निवेदक—
नाथूराम प्रेमी।

निवेदन।

लगभग छः वर्ष के बाद 'शाहजहाँ' का यह दूसरा संस्करण प्रकाशित हो रहा है। अबकी बार इसकी भाषा पहलेकी अपेक्षा अधिक साफ़ और बामुहाविरा कर दी गई है और यत्र तत्र जो अशुद्धियाँ रह गईं थीं वे भी ठीक कर दी गईं हैं।

शाहजहाँ कला की दृष्टिसे जितना उच्चश्रेणीका नाटक है, हिन्दी में आदर भी इसका उतना ही कम हुआ है; फिर भी इस आशा से कि हिन्दीमें अच्छे पाठकोंकी संख्या बढ़ रही है और उनकी रुचि भी 'कला' का मूल्य समझनेकी ओर झुक रही है हम इसे पुनः प्रकाशित कर रहे हैं। अबकी बार शायद हमें निराश न होने पड़े।

चैत्र कृष्णा ५,
सं० १९७९ वि०।

—प्रकाशक।

समालोचना।

ऐतिहासिक नाटकोंके लिखनेमें बड़ी भारी कठिनाई यह है कि यदि इतिहासकी रक्षा की जाती है तो कल्पनाको दबाना पड़ता है और यदि कल्पनाकी गतिमें रुकावट डाली जाती है तो नाटक अच्छा नहीं बनता। इस लिए किसी सुपरिचित ऐतिहासिक चरित्रका अवलम्बन करके श्रेष्ठ श्रेणीके नाटककी रचना करना बहुत ही कठिन कार्य है। एक बात और भी है और वह यह कि नाटकका प्रधान पात्र पवित्र और उन्नत होना चाहिए। इसके विना उच्च श्रेणीका नाटक नहीं बन सकता। क्योंकि कवि अपने हृदयकी बात—अन्तर्जीवनका गंभीरतत्त्व—नाटकके प्रधान पात्रके ही कण्ठसे कहलवाता है। यदि प्रधान पात्र अपवित्र या अवनत हो, तो कविको ऐसा करनेका अवसर नहीं मिलता। अपात्रके द्वारा यदि वह अपने हृदयकी बात कहलवाता है तो वह अस्वाभाविक जान पड़ती है। कविवर शेक्सपियरने अपने मनोराज्यकी उच्च श्रणीकी बातों और मानवहृदयके गभीर तत्त्वोंको भावुक हेम्लेट और पागल लियरके मुँहसे प्रकट किया है; परन्तु कृतघ्न और घातक मेकबेथके मुँहसे वे ऐसी बातें नहीं कहला सके। जीवनकी जिस नीची और पापपूर्ण सीढ़ी पर मेकबेथ, खड़ा था, उस परसे मनकी पवित्र और उन्नत सीढ़ी पर उठाकर रखनेकी शक्ति इनमें भी

नहीं थी। नाटक भरमें केवल तीन ही बार मेकबेथके शोकसन्तप्त मस्तिष्कमेंसे कविने उसके विना जाने अपने मनकी बातें कहला पाई हैं। इसी कारण जब मेकबेथ नाटककी लियर और हेम्लेटके साथ तुलना की जाती है तब वह उच्च श्रेणीके नाटककी दृष्टिसे निकृष्ट जान पड़ता है। यह बात दूसरी है कि स्टेज पर खेले जाने की दृष्टिसे वह श्रेष्ठ नाटक है।

शाहजहाँ प्रसिद्ध ऐतिहासिक पुरुष है। उसकी जीवनी महत् पवित्र या आदर्श चरित्रके अनुकूल नहीं है। इस बातको द्विजेन्द्र-बाबू जानते थे और इसी लिए उन्होंने शाहजहाँ नाटकको उच्चश्रेणीके श्राव्यकाव्यके रूपमें नहीं, किन्तु दृश्य नाटकके रूपमें स्टेज पर खेले जानेके लिए लिखा है। सबसे पहले यह देखना चाहिए कि इस नाटकके पात्रोंको स्टेज पर अभिनय करनेके योग्य बनानेमें कवि इतिहासकी रुकावटोंको कहाँ तक हटा सका है।

नाट्यकारने शाहजहाँको वृद्ध, सन्तानस्नेहप्रवण, कोमलप्राण, शान्तिप्रयासी और क्षमाशीलके रूपमें चित्रित किया है। प्रत्येक दृश्यमें शाहजहाँके चरित्रका विकास होता गया है। उसकी छवि सर्वत्र ही उज्ज्वल और सुन्दर है। उससे जब अपने विद्रोही पुत्रोंका शासन करनेके लिए अनुरोध किया जाता है, तब वह कहता है—"ये मेरे बेटी-बेटे बे-माँके हैं। उन्हें किस जीसे सजा दूँ जहानारा! वह देख—उस संगमरमरके बने हुए (लंबी साँस लेना)–उस ताजमहलकी तरफ देख और फिर उन्हें सजा देनेके लिए कहना।" यहाँ उसके सन्तानस्नेहकी गभीरता देखकर मुग्ध होना पड़ता है। उसकी प्यारी बेगम मुमताजके प्रति जो उसकी जीवनव्यापिनी ममता थी, उसका स्मरण हो आता है, ताजमहल-के मंत्रपूत उच्चारणसे उसके अक्षय और अपूर्व स्थापत्यकीर्तिकलाप-

की याद आ जाती है और आगरेके किलेके अतुल शोभामय द्वारपरसे यमुना-तटपरके ताजमहलका दृश्य देखते देखते उसके सदाके लिए सो जानेकी कवित्वमय मृत्युकहानी भी हृदयपट पर लिख जाती है । जब औरंगजेबकी आज्ञासे अपने कैद हो जानेकी बात सुनकर शाहजहाँ निष्फल क्रोधसे गरज उठता है—कहता है कि "तुमने सोचा है, यह शेर बूढ़ा है इसलिए तुम्हारी लातें सह लेगा ? मैं बूढ़ा शाहजहाँ हूँ सही, लेकिन मैं शाहजहाँ हू ।— ए कौन है ! ले आओ मेरा जिरहबख्तर और तलवार ।—" तब उसकी अहमदनगरादिके विजय करनेकी वीर कहानियाँ स्मरण हो आती हैं और उस पञ्जरबद्ध जराजर्जर केसरीकी व्यर्थ गर्जना-से हृदय चंचल हो उठता है । जिस समय दाराके पराजयकी और औरंगजेबके दिल्लीमें मयूरसिंहासन पर आसीन होनेकी खबर सुनकर शाहजहाँ एक बार किलेके बाहर जाकर प्रजाके सामने पहुँचनेके लिए व्यग्र हो उठता है, उस समय उसके सुशासनकी, प्रजावात्सल्यकी, न्यायविचारकी और राज्यमें चोरों-डकैतोंसे रहित अभूतपूर्व शान्तिस्थापन करनेकी बातें याद आ जाती हैं और उस-की दुरवस्थासे मन करुणार्द्र हो जाता है । दाराकी हत्या रोकनेके लिए जब वह आगरेके किलेके ऊपरसे कूद पड़नेके लिए तयार होता है और फिर दाराकी हत्याके समाचारसे उन्मत्तवत् होकर क्षमावती धरती पर शापकी वर्षा करता है, उस समय उसके दुर्वह शोकका अनुमान करके हृदय व्याकुल हो उठता है । और अन्तमें जब अपने सारे दुःखोंके कारणभूत औरंगजेबको उदास, मलीन और दुर्बलदेह देखकर वह उसके सारे अक्षम्य अपराधोंको क्षमा कर देता है, तब उसके हृदयमें सन्तानस्नेहकी प्रबलता कित-नी अधिक है, यह देखकर मन विस्मयाभिभूत हो जाता है ।

पर जब इतिहासकी बात सोची जाती है तब शाहजहाँकी यह सुन्दर छबि मलिन हो जाती है। पितासे द्रोह करना और सिंहासन प्राप्त करनेके लिए भाइयोंसे युद्ध करना यह मुगल बादशाहोंकी परम्परागत रीति थी। इसमें नूतनता कुछ भी नहीं थी। स्वयं शाहजहाँने ही अपने पिताके विरुद्ध दो बार शस्त्र धारण किया था और उसके पिता जहाँगीरने तो मौतकी सेजपर सोये हुए बादशाह अकबरके विरुद्ध विद्रोहका झगडा खड़ा किया था। मेरी मृत्युके बाद सिंहासनके लिए पुत्रोंमें झगड़ा अवश्य होगा, यह जानकर ही तो शाहजहाँने दाराको अपने पास रख लिया था और शेष तीन पुत्रोंको सूबेदार या राजप्रतिनिधि बनाकर अन्य प्रान्तोंमें भेज दिया था। इन सब बातों पर जब विचार किया जाता है तब पुत्रोंकी बगावतका हाल सुनकर शाहजहाँके मुँहसे "देखूँ, सोचता हूँ—मगर ऐसा कभी सोचा नहीं था। ऐसा सोचनेकी आदत ही नहीं है।" आदि वाक्य असंगत और बनावटी जान पड़ते हैं। विद्रोही पुत्रोंको दमन करनेका अनुरोध किये जाने पर जब वह कहता है—"खुदा, बापोंको यह मोहब्बतसे भरा हुआ दिल क्यों दिया था? उनके दिलों और जिगरोंको लोहेका क्यों नहीं बनाया?" तब यह सोचकर उस पर दया हो आती है कि उसे यह ज्ञान जवानीमें क्यों नहीं हुआ। जब इतिहास कहता है कि उसने अपने बड़े भाईके पुत्रको चतुराईसे प्रतारित करके और दूसरे भाइयों तथा भतीजोंमेंसे जो जो उसके सिंहासनके प्रतिद्वन्दी हो सकते थे, उन सबको ही बिना कुछ सोचे विचारे मार कर अपने कुटुम्बियोंके रक्तसे रँगे हुए हाथोंमें दिल्लीका राजदण्ड धारण किया था, तब उसके मुहँसे " या खुदा मैंने ऐसा कौनसा गुनाह किया है, " यह उक्ति जगदीश्वरके सामने सर्वथा निर्लज्जतापूर्ण जान

पड़ती है। मेनुसी (Signor Manouici) की बात यदि सत्य हो तो शाहजहाँकी निष्ठुरताको बहुत ही आश्चर्यजनक कहना होगा। मेनुसी लिखता है कि शाहजहाँने अपने भाई शहरयार और उसके दो निरीह पुत्रोंको एक कोठरीमें कैद करके उसका द्वार बन्द करा दिया जिससे कि वे तीनों कई दिनोंमें भूखसे छटपटाकर मर गये ! मेनुसी शाहजहाँके व्यभिचारकी, गुप्त हत्याओंकी और इन्द्रियसेवाकी जो सब बातें लिख गया है, यदि उनका थोड़ासा अंश भी सच हो, तो यह स्वीकार करना पड़ेगा कि उसे बुढ़ापेमें जो पुत्रशोक सहन करना पड़ा, कैदका दुःख भोगना पड़ा, सो सब उसके पापोंका उचित प्रतिफल था।

शाहजहाँके इतिहासके साथ लियरकी कहानीका कुछ सादृश्य है। दोनों ही राजा हैं, जराग्रस्त हैं, राज्यभ्रष्ट हैं और सन्तानोंके निष्ठुर व्यवहारसे दुखी हैं। द्विजेन्द्रबाबूने शाहजहाँको लियरकी ही दशामें लाकर खड़ा किया है और शाहजहाँका हृदय भी लियरके समान कोमल और सहज ही विक्षुब्ध होनेवाला बनाया है। परन्तु लियरके आदर्श पर शाहजहाँ नहीं पहुँच पाया। पर इसका कारण नाट्यकारकी चतुराईकी कमी या असामर्थ्य नहीं; किन्तु इतिहास है। यह सच है कि पुत्रोंके, विशेषतः औरंगजेबके दुर्व्यवहारसे और दाराकी हत्यासे शाहजहाँके हृदय पर गहरी चोट लगी थी; परन्तु धीरे धीरे समय बीत जाने पर उसके हृदयका वह घाव सूख गया था और वह प्रकृतिस्थ हो गया था—उसकी हालत ज्योंकी त्यों हो गई थी। किन्तु कृतघ्न कन्याओंके पैशाचिक आचरणसे लियरका हृदय जो टूट गया सो टूट गया, उसमें फिर जोड़ नहीं लगा और कार्डेलियाकी मृत्युकी अन्तिम चोटसे तो वह सर्वथा ही चूर चूर हो गया। लियर नाटकके पहले तीन अङ्कोंके बड़े बड़े दृश्य क्षोभ,

रोष, विस्मय, अनुताप, करुणा आदिकी हलचलसे मनको उथल पुथल कर डालते हैं; परन्तु शाहजहाँ नाटकमें इस प्रकारके किसी दृश्यका समावेश नहीं हो सका है। महम्मदको छोड़कर विद्रोही पुत्रोंके पक्षके अन्य किसी पात्रके साथ शाहजहाँका साक्षात् नहीं हुआ और महम्मदने भी सिवा यह कहनेके कि 'अब्बाके हुक्मसे आप कैद हैं' शाहजहाँसे न तो कोई बुरा शब्द कहा और न निष्ठुर व्यवहार ही किया। अन्तिम दृश्यमें नाट्यकारने शाहजहाँके साथ औरंगजेबका जो काल्पनिक साक्षात् कराया है, वह विद्रोह, हत्या आदिकी घटनाओंके बहुत वर्ष पीछेका है। उस समय शाहजहाँके मनका ताप शीतल हो गया था। लियरने कार्डेलियाको वंचित करके अपनी दोनों अत्याचारिणी कन्याओंको सर्वस्व दान कर दिया था, किन्तु शाहजहाँने दाराको वञ्चित करके औरंगजेबको सर्वस्व दान नहीं किया था। अतएव औरंगजेबके ऊपर आदान-प्रदानसम्बन्धी कृतघ्नताका दोष नहीं आया। औरंगजेबने रिगन और गनेरिलके समान अपने पिताके ऊपर न तो मर्मभेदी वाग्बाणोंकी बर्षा की और न उसे कोई कष्ट दिया। इसके सिवा शेक्सपियरने गनेरिल और रिगनके काल्पनिक चरित्रकी कालिमा बहुत ही गहरी करके दिखलाई है, परन्तु द्विजेन्द्रलालने औरंगजेबके ऐतिहासिक चरित्रके ऊपर उस प्रकारकी इच्छानुसार स्याही नहीं पोती है। यदि वे ऐसा करते तो इतिहासका अपलाप होता और औरंगजेबके वास्तविक चरित्रके प्रति अविचार भी किया जाता। किन्तु स्याही न पोतनेका फल हुआ है यह कि उत्पीडकके प्रति उदासीनता उत्पन्न न होकर सहानुभूतिका उद्रेक हुआ है और उत्पीडित शाहजहाँके कष्टकी तीव्रता घट गई है। शाहजहाँको भी नाट्यकारने लियरके समान बाह्य जगत्की आँधीके साथ अन्तरकी झञ्झावायुके प्रकोपको मिलानेका

अवसर दिया है। किन्तु दोनोंमें अन्तर यह है कि रातके गहरे अँधेरेमें आश्रयहीन और पथभ्रष्ट हुए लियरके मस्तक परसे तो आँधी निकल गई थी और शाहजहाँने आगरेके महलकी संगमरमरकी जालियोंमेंसे यमुनाके ऊपर जो आँधी पानीका खेल होरहा था उसे देखा था ! दोनोंके वंशगत और शिक्षागत चरित्रमें भी एकसा अन्तर है। ऐसी दशामें नाट्यकारके हाथमें कोई उपाय नहीं था। ;इतिहासने उनकी काव्य-कल्पनाको सैकड़ों रस्सियोंसे बाँध रक्खा था, अतः उसे ऊर्द्ध्वगामी नहीं होने दिया—लियरके आदर्श पर शाहजहाँ नहीं पहुँच पाया।

लियर नाटकमें अकेले लियरने ही प्रधानतः कष्ट पाया है; परन्तु शाहजहाँ नाटकका उत्पीडन कई भागोंमें विभक्त हो गया है। जान पड़ता है, दाराने ही उसका सबसे अधिक क्लेश भोगा है और उसीके भाग्यविपर्यय पर सबसे अधिक चित्तवृत्ति और सहानुभूति आकर्षित होती है। दारा धर्ममतमें उदार, अकपट और वीर था; किन्तु कूटबुद्धि और कर्मपटुतामें औरंगजेबके साथ उसकी कोई तुलना नहीं हो सकती थी। इतिहासके इस चित्रने नाटकमें भी स्थान पाया है। दाराके भाग्यके उलट-फेरकी छबि नाट्यकारने बहुत ही निपुणताके साथ उज्ज्वल रूपमें अंकित की है। दाराको भी नाट्यकारने पत्नीगतप्राण और सन्तान-स्नेह-विगलित-हृदय बनाया है। मरुभूमिमें स्त्रीपुत्रोंके असह्य कष्ट देखकर जब वह उन्मत्तप्राय हो जाता है और अपनी प्यारी स्त्रीकी हत्या करनेको तैयार होता है, उस समयका चित्र भीषण होने पर भी उसके चरित्रसे ठीक मेल खाता है। इतिहास कहता है कि वह अधीर और असहिष्णु था। नादिराकी मृत्यु जिस कमरेमें हुई थी, उस कमरेमें, नीच जिहनखाँके सामने सिपरको रोते देखकर दारा जब रूखे स्वरसे 'सिपर !' कह-

कर उस बालककी दुर्बलता स्मरण करा देता है, तब दाराके आत्मसम्मानज्ञानका बहुत ही सुंदर चित्र खिंच जाता है।

दारा उत्पीडित और औरंगजेब उत्पीडक है। दाराके दुःखमें सहानुभूतिके उद्रेकके साथ साथ औरंगजेब पर घृणा होना स्वाभाविक है। किन्तु नाटकमें औरंगजेबका चरित्र जिस रूपमें चित्रित किया गया है, उससे उक्त घृणा जितनी चाहिए उतनी नहीं बढ़ती। दाराको मृत्युदण्ड देते समय इतस्ततः करना, दाराकी मृत्युपर दुःख प्रकट करना, और जिहनखाँके मरनेकी बात सुनकर संतोष प्रकाशित करना, ये सब घटनायें इतिहाससंगत हैं या नहीं, यह दूसरी बात है; परन्तु नाटकमें वे औरंगजेबकी आंतरिक अनुभूतिके रूपमें वर्णित हुई हैं और इसके फलसे नाटकीय सौन्दर्यकी अवश्य ही कुछ क्षति हुई है। उधर, नाट्यकारने दाराके चरित्रके दोषोंको प्रच्छन्न रखकर उसे दर्शकों और पाठकोंकी अधिक सहानुभूति प्राप्ति करा दी है। दारा दाम्भिक था; वह बादशाहका प्रतिनिधि बन गया था और इस कार्यमें उसे हुकूमतका स्वाद मिल गया था, इस कारण उसकी उद्धतता बढ़ गई थी। वह प्रतिवादको जरा भी सहन नहीं कर सकता था और अमीर उमराका बिना कारण अपमान किया करता था। मेनुसी लिखता है कि दारा अपने एक खरीदे हुए गुलाम 'अरब खाँ' के साथ उन लोगोंकी तुलना किया करता था और उनका मजाक उड़ाया करता था। संगीतकलानुरागी अम्बरनरेश जयसिंहका वह 'उस्ताद जी' कहकर उपहास किया करता था। वह क्रिश्चियन उपपत्नियों पर बहुत ही अनुरक्त था और इस विषयमें बदनाम हो गया था कि उसने शाहजहाँके वर्द्धित-प्रताप मंत्री सादुल्लाखाँको विष देकर मार डाला है। इन्हीं सब कारणोंसे वह विपत्तिके समय अमीर उमराकी सहायता नहीं प्राप्त कर सका।

नाटयकारने औरंगजेबका जो चित्र खींचा है, वह एक बड़े भारी पुरुषार्थका चित्र है। नाटयकारने बहुत ही सावधानी और आन्तरिक सहानुभूतिसे इस चरित्रको परिस्फुट किया है और यह बात प्रत्येक रसज्ञको स्वीकार करनी होगी कि उनका यह प्रयत्न सर्वतो भावसे सफल हुआ है। औरंगजेबके तीक्ष्णबुद्धि, दूरदर्शिता, कार्यतत्परता, विपत्तिमें धैर्य, आत्मदमनका सामर्थ्य आदि गुण उसके प्रति स्वयं ही श्रद्धाको आकर्षित कर लेते हैं। औरंगजेबके महान् चरित्रके साथ तुलना करनेसे उसके भाइयोंका चरित्र बिल्कुल ही तुच्छ जान पड़ता है। उसकी राजनैतिक बुद्धिके साथ प्रतिद्वन्द्विता करनेमें वे बच्चोंके समान सर्वथा असमर्थ थे, यह बात नाटकमें स्पष्टतासे दिखलाई देती है। अन्यान्य पात्रोंके समान औरंगजेबके चरित्रके दोषोंको भी नाटयकारने जहाँ तक बना है, अन्तरालमें ही रक्खा है। किन्तु दोष इतने गुरुतर हैं कि सैकड़ों चेष्टाओंसे भी उनकी कालिमा नहीं धुल सकती। यह बात नहीं है कि औरंगजेब केवल 'शठके प्रति शाठय करता था' नहीं, वह अपनी कार्यसिद्धिके लिए आवश्यकता पड़ने पर जो शठ नहीं है उसके भी साथ शठता या धूर्तता करता था। यह बात नाटकमें भी प्रकाशित हुई है। जहानाराके उकसानेसे मुरादने जब उसको बन्दी करनेका षड्यन्त्र रचा था, उसके बहुत पहलेसे उसने मुरादको 'सम्राट्' कहकर और अपने आपको 'मक्का' जानेवाला फकीर बतलाकर उसको प्रतारित किया था। वह निष्ठुर था, इसका आभास भी नाटकमें मौजूद है। उसने दारा और सिपरको एक बहुत ही दुबले पतले हड्डियाँ निकले हुए हाथीकी पीठ पर मैले कपड़ोंकी पोशाक पहनवाकर दिल्लीके चारों तरफ घुमाया था। यह बड़ी ही भीषण निष्ठुरता थी। बर्नियर लिखता है कि दाराको मृत्युका दण्ड देनेके समय औ-

रंगजेबने जो दुःख प्रकाशित किया था, वह उसकी कूटबुद्धिका केवल एक अभिनय था। मेनुसी लिखता है कि जब उसे दाराका कटा हुआ सिर मिला तब वह हर्षसे फूल गया, तलवारकी नोकसे उसने उसकी एक आँख निकाल डाली, दाराकी एक आँखमें काले रंगका जो एक दाग था उसकी परीक्षा की, और फिर शाहजहाँके भोजनके समय उसने उस सिरको एक बक्समें रखकर और वस्त्र-से ढककर भेटस्वरूप भेज दिया। औरंगजेबके चरित्रके इस काले हिस्सेको प्रकट न करके नाट्यकारने अच्छा ही किया है। और और चरित्रोंमें भी उन्होंने गुणोंपर ही प्रकाश डाला है। इस विषय-में औरंगजेबके चरित्रके प्रति सहानुभूति होनेके कारण कोई खास पक्षपात नहीं किया गया है। उन्होंने औरंगजेबके जटिल चरित्रके परस्परविरुद्ध भावोंका स्वभावोचित रूपमें सुन्दर समन्वय कर दिया है। औरंगजेबने जिस राजनीतिक प्रतिभाके बलसे भारतका साम्राज्य हस्तगत किया था वह अच्छी तरह स्पष्टतासे और मनकी जिस संकीर्णताके दोषोंसे मुगलसाम्राज्यके नष्ट होनेकी व्यवस्थाकी थी वह एक दूरवर्ती तारेकी भाँति कुछ अस्पष्टतासे, नाटकमें झलकती है।

मुरादको नाट्यकारने साहसी, वीर, सुराप्रिय और वेश्यासक्त-के रूपमें चित्रित किया है। इतिहास भी यही कहता है। मुराद पेटू और शिकारी प्रसिद्ध था और यदि वह सम्राट् होता तो मुस-लमान धर्मकी कोई हानि न होती। क्योंकि वह मुसलमान धर्म-में अन्धश्रद्धा रखता था, यह बात भी इतिहासमें लिखी है। वह औरंगजेबसे ठगा गया था, अतएव यह निश्चित है कि उसकी बुद्धि औरंगजेबके समान तेज नहीं थी। नाट्यकारने अपने चित्रमें मुरादकी निर्बुद्धिताका रंग कुछ गहरा भरा है, पर इससे

नाटकके सौन्दर्यमें कोई क्षति-वृद्धि नहीं हुई।

शुजा साहसी और युद्धप्रेमी था और युद्धक्षेत्रकी विभीषिकाके भीतर भी वह नृत्यगीतमें मस्त रहता था। यह बात इतिहाससे मिलती है। ऐतिहासिकोंका मत है कि वह घोर विलासी और अतिशय व्यसनासक्त था; परन्तु नाटयकारने उसे पत्नीगतप्राण, सरलचित्त, उन्नतमना और भावुकके रूपमें चित्रित किया है।

महम्मद पहले पिताका आज्ञानुवर्ती था; पीछे वंशपरम्पराकी प्रथाके अनुसार वह भी विद्रोही हो गया था। शाहजहाँने जब उसे बादशाह बना देनेका लोभ दिखलाया, तब उसने साफ शब्दोंमें कह दिया कि मुझे राज्य नहीं चाहिए। यह ऐतिहासिक घटना है। किन्तु उसके इस स्वार्थत्यागका कारण पिताकी भक्ति थी अथवा पिताके क्रोधकी भीति, इसे कोई नहीं जानता। उसमें यह समझनेकी शक्ति अवश्य ही थी कि जराजर्जर और मतिभ्रान्त शाहजहाँ औरंगजेबकी विजयिनी तलवारसे उसकी रक्षा करनेमें सर्वथा असमर्थ है। क्योंकि वह औरंगजेबका पुत्र था! नाटयकारने महम्मदचरित्रके इस स्वार्थत्यागका और पीछे पिताके परित्याग कर देनेका जो सुन्दर चित्र अंकित किया है, उससे महम्मदके चरित्रका उत्कर्ष तो हुआ ही है, साथ ही नाटकके साधारण सौन्दर्यकी भी बहुत वृद्धि हुई है।

सुलेमान वीर और सुबुद्धि था। मेनुसीने लिखा है कि शाहजहाँ, दाराकी अपेक्षा सुलेमानकी बुद्धि और शक्ति पर अधिक श्रद्धा रखता था। उसके चरित्रको आदर्श चरित्रमें परिणत करके नाटयकारने इतिहासकी अमर्यादा नहीं की है।

शाहजहाँ नाटकके स्त्रीपात्र उच्च श्रेणीके हैं। नादिराकी कोमलता, सहिष्णुता और पतिभक्ति हिन्दूकुललक्ष्मियोंके लिए भी आदर्श-

रूप है। महामायाकी बातें उस राजपूत कुलके सर्वथा उपयुक्त हैं जिसकी कि स्त्रियाँ पति और पुत्रोंको जन्मभूमिकी रक्षाके लिए भेजकर हँसती हुई 'जौहरव्रत'का पालन करती थीं। पितामें भक्ति रखनेवाली तेजस्विनी जोहरतको, बदला लेनेवाली और शाप देनेवाली बनाकर नाट्यकारने इतिहासके साथ चरित्रके सामञ्जस्यकी रक्षा की है। औरंगजेबने जब अपने एक पुत्रके साथ जोहरतके विवाहका प्रस्ताव किया, तब जोहरत अपने साथ एक छुरी दिनरात रखने लगी। वह कहती थी कि पितृघातीके पुत्रके साथ मेरा विवाह हो, इसके पहले ही मैं यह छुरी अपनी छातीमें घुसेड़ लूँगी! जहानारा विदुषी, तीक्ष्ण बुद्धिमती और अलौकिकरूपवती स्त्री थी। शाहजहाँके शेष जीवनका राजकार्य उसीके इशारेसे सम्पादित होता था। उसने अपनी इच्छासे अपने बूढ़े पिताकी शुश्रूषाके लिए उसके साथ कारागृहमें रहना स्वीकार किया था। उसके इच्छानुसार उसकी समाधि खुले मैदानमें बनाई गई थी और वह पाषाण-सौधसे नहीं किन्तु हरित दूर्वादलोंसे अच्छादित की गई थी। इस इतिहासविश्रुत स्त्रीके चरित्रका नाट्यकारने जैसा चाहिए वैसा ही चित्र अंकित किया है। जहानारा मानों शाहजहाँको विपत्तिमें बुद्धि और दुःखमें सान्त्वना देनेके लिए, दारा और नादिराको कर्तव्यका स्मरण करादेनेके लिए, औरंगजेबको उसके पापोंकी गंभीरता और आत्मप्रवञ्चनाको अच्छी तरह साफ साफ दिखलानेके लिए बादशाहके अन्तःपुरमें आविर्भूत हुई थी। जहानाराके चरित्रके इस शुभ्र सौन्दर्यको बचाये रखकर द्विजेन्द्रलाल रायने नाट्यकारके महत्त्वकी रक्षा की है।

पियाराका चरित्र काल्पनिक है। शुजाके दूसरी पत्नी भी रही होगी; परन्तु वह कोई इतिहासप्रसिद्ध व्यक्ति नहीं है और शुजाकी जो पत्नी ईरानके राजाकी कन्या थी वही यह पियारा है, इसका

नाटकमें कोई उल्लेख नहीं है। अतएव पियाराके चरित्रको इच्छानुरूप चित्रित करनेमें कोई बाधा नहीं है। कविने उसे अपने मनके अनुसार ही गढ़ा है। पियारा परिहासरसिका और पतिप्राण्य स्त्रीका एक अपूर्व चित्र है। वह हँसी मजाकका फव्वारा और बिमलानन्दकी स्फटिकधारा है। वह पतिकी विपदामें सहायक, उलझनमें मंत्री और वीरतामें बल बन जाती है। बड़े भारी दुर्दिनोंमें भी वह छायाके समान पतिके साथ रहनेवाली और युद्धमें भी—यमराजके निमंत्रणमें भी--पतिके साथ जानेवाली है। पियाराकी हास्यप्रियता एक प्रकारकी करुण कथा है। उसके 'मुहँमें हँसी और आँखोंमें आँसू' हैं। स्वामीकी आसन्नविपत्तिकी चिन्तामें उसका हृदय रुधिराक्त हो जाता है; परन्तु वह चाहती है मनके दुःखको मनहीमें दबाकर हँसीकी स्निग्ध धारामें पतिकी दुश्चिन्ताग्निको बुझा देना, कौतुककी तरंगमें युद्धकी इच्छाको बहा देना और हँसीसे चमकते हुए नेत्रोंकी बिजलीके प्रकाशमें पतिका अँधेरेसे घिरा हुआ मार्ग प्रकाशित कर देना। बुद्धिमती पियाराके हास्यप्रकाशमें शुजाकी सरलता विकसित हो उठी है।

पियाराकी परिहासरसिकतामें एक त्रुटि भी है। उस दुःसमयमें जब कि भाइ-भाइयोंमें युद्ध हो रहा था, समदुःखभागिनी स्त्रीका स्वामीके साथ परिहास करना, कालविरुद्ध मालूम होता है और सम्पर्कविरुद्ध मालूम होता है और वह पियाराके सुन्दर चरित्रमें मानों एक हृदयहीनताकी छाया डाल देता है। तीक्ष्णदृष्टि नाट्यकारने स्वयं ही इस त्रुटिको देख लिया है और इसी लिए उन्होंने पियाराकी स्वगतोक्तिमें, उसकी पतिके साथकी सहज बातचीतमें और शुजाके 'जो मेरे लिए जीने मरनेका सवाल है उसीको लेकर तुम दिल्लगी करती हो'–इस वाक्यमें उस अनुचित व्यवहारकी एक

कैफियत दी है। वह परिहास मौखिक था, अन्तरंगसे निकला हुआ नहीं।

परन्तु दिलदारके परिहासमें इस प्रकारका कोई दोष नहीं आने पाया है। क्योंकि, उसका बादशाहके वंशसे कोई सम्बन्ध नहीं था और उसका व्यवसाय ही दिल्लगी करनेका था। दिलदार एक छद्मवेशी दार्शनिक या दानिशमन्द बतलाया गया है; परन्तु वह कोई ऐतिहासिक व्यक्ति नहीं है, स्वयं नाट्यकारकी सृष्टि है। लियरके साथ जैसे फूल (Fool) था वैसे ही मुरादके साथ दिलदार था। फूलने जिस तरह उसकी दुष्ट कन्याओंका कपट समझा देनेका प्रयत्न किया था, दिलदारने भी उसी प्रकार मुरादको पितृद्रोहके महा पापसे और औरंगजेबके भयङ्कर छलसे बचानेकी चेष्टा की थी। परन्तु सुनता कौन है ? लियरकी अक्ल ठिकाने नहीं थी और मुराद मूर्ख था। मुगल बादशाहोंके दरबारमें विदूषकोंका रहना इतिहास-प्रसिद्ध बात है, अतएव दिलदारका चरित्र इतिहाससंगत है और शाहजहाँ नाटकमें उस चरित्रकी सार्थकता स्पष्ट है। दिलदारकी व्यंग्योक्तियाँ, पितृद्रोह और भ्रातृहत्याके षडयन्त्रोंसे कलुषित हुई घटनाओंमेंसे मनको खींचकर उसे बीच बीचमें विश्राम लेनेका अवकाश देती हैं और मुरादके चरित्रकी त्रुटियोंको अतिशय स्पष्ट करके उसकी बोधहीन सरलता पर करुणाका उद्रेक कर देती हैं।

द्विजेन्द्रलाल हास्यरसके प्रवीण लेखक हैं। उनकी निर्मल परिहासरसिकता एक हँसीकी लहर या आमोदका बुलबुला बनाकर ही लीन नहीं हो जाती। उनकी हँसीमें एक तीव्र श्लेष है जो हृदयपट पर एक गहरा चिह्न छोड़ जाता है। पियारा जब 'शेरकी ताकत दातोंमें, हाथीकी ताकत सूँड़में' आदि उपमायें देनेके पश्चात् कहती है कि 'हिन्दुस्तानियोंकी ताकत पीठमें' और जयसिंह जब कहते हैं कि 'मैं

औरंगजेबकी अधीनता स्वीकार कर सकता हूँ मगर राजसिंहका प्रभुत्व नहीं मान सकता' और इसके उत्तरमें जब जसवन्तसिंह पूछते हैं कि 'क्यों राजासाहब ? वे अपनी जातिके हैं, इसलिए ?' और पियारा जब कहती है कि 'मैं रिहाई नहीं चाहती । मुझे यह गुलामी ही पसन्द है ।' तथा शुजा इसका उत्तर देता है 'छिः पियारा ! तुम हिन्दुस्तानियोंसे भी नीच हो'*तब कौतुककी हँसी ओठोंमें ही मिल जाती है और प्राण मानों एक तेज कोड़ेकी मारसे काँप उठते हैं ।

इतिहासकी बात छोड़ देने पर हम देखते हैं कि शाहजहाँ नाटकके सभी प्रधान अप्रधान चरित्र सुपरिस्फुट हैं । परस्पर विपरीत प्रकृतिके पात्रोंके चित्रोंको पास पास रखकर नाट्यकारने एककी सहायतासे दूसरेकी उज्ज्वलताको बढ़ाया है । जयसिंहकी विश्वासघातकताके सामने दिलेरखाँका धर्मज्ञान, जिहनखाँकी नीचताके सामने शाहनवाजकी उदारता और जसवन्तसिंहकी मनकी संकीर्णताके सामने महामायाके मनका महत्त्व, ये सब बातें काले परदे पर सफेद रंगके चित्रके समान उज्ज्वल हो उठी हैं ।

मरुभूमिमें प्याससे व्याकुल स्त्रीपुत्रोंकी आसन्न मृत्युकी आशंकासे दाराका भगवानके निकट प्रार्थना करना, उसके थोड़ी ही देर पीछे गऊ चरानेवालोंका आना और जल पिलाना, जयसिंहसे सैन्य न पाकर दुखी हुए सुलेमानका दिलेरखाँसे सहायताकी भिक्षा माँगना और दिलेरखाँसे जिसकी आशा नहीं थी, ऐसा तेजस्वी उत्तर मिलना कि 'उठिए शाहजादासाहब । राजासाहब न दें, मैं हुक्म देता हूँ । मैंने दाराका नमक खाया है । मुसलमानोंकी कौम

* हमारे पास षष्ठ संस्करणकी पुस्तक है । उसमें यह वाक्य नहीं है । जान पड़ता है, यह पहलेके संस्करणोंमें रहा होगा, पीछे किसी कारणसे निकाल दिया गया है ।

नमकहराम नहीं होती।' महम्मदका शाहजहाँका दिया हुआ मुकुट न लेकर चला जाना, युद्धमें पराजित होकर शुजा और जसवन्तके राज्यमें लौटने पर महामायाका फाटक बन्द करवा देना, पियाराका युद्धक्षेत्रमें जाकर मरनेका संकल्प प्रकट करना और अन्तिम दृश्यमें शाहजहाँके पैरोंके नीचे राजमुकुट रखकर औरंगजेबका क्षमाप्रार्थना करना, आदि ऐतिहासिक और काल्पनिक घटनाओंको नाटयकारने बड़ी चतुराईसे चित्रित किया है। जिस समय दारा सिपरसे अन्तिम बिदा लेता है, उस समयका चित्र बड़ा ही करुण और मर्मस्पर्शी है और जिस दृश्यमें औरंगजेब स्वपक्ष और विपक्ष सभीको वक्तृता और अभिनयके मोहसे मुग्ध करके उनके मुखोंसे 'जय औरंगजेबकी जय' की ध्वनि उच्चारित करा देता है, वह दृश्य सचमुच ही जहानाराके शब्दोंमें 'खूब' है। उस वक्तताको पढ़नेसे तीसरे रिचर्डका वह वाक्चातुर्य याद आजाता है जिसमें उसने लेडी एन और विधवा रानीको भुलानेका प्रयत्न किया था। बुढ़ापेमें शाहजहाँकी अधिक धनरत्न संग्रह करनेकी लालसा और उससे औरंगजेबकी शाही जवाहरात माँगनेकी ऐतिहासिक घटना शाहजहाँ और औरंगजेबके काल्पनिक साक्षात् होनेके पहले संभाषणमें अच्छी तरह स्फुटित हुई है।-औरंगजेबने पुकारा, "अब्बा!" शाहजहाँने उत्तर दिया, "मेरे हीरे-मोती लेने आया है? न दूँगा न दूँगा। अभी सबको लोहेकी मुँगरियोंसे चूर चूर कर डालूँगा।"

शाहजहाँ नाटकका एक प्रधान गुण यह है कि इसके प्रत्येक दृश्यमें प्रारंभसे अन्त तक एकसा कुतूहल बना रहता है। वक्तृतायें लम्बी होने पर भी उनसे अरुचि नहीं होती। यह साधारण लेखनशक्तिका काम नहीं है। द्विजेन्द्रबाबूने दाराकी हत्या रंगमञ्च(स्टेज) पर, दर्शकोंके सामने, दीर्घकालव्यापी आडम्बरके साथ, न कराके

परदेके भीतर ही करा दी है, इसके लिए वे प्रत्येक नाट्यरसिकके धन्यवादभाजन हैं।

इस नाटकरचनामें कविने जो रचनाकौशल और कवित्व दिखलाया है, विस्तारभयसे उसका पूरा परिचय नहीं दिया जासका। अब यहाँ मुझे थोड़ी बहुत त्रुटियाँ भी दिखलानी चाहिएँ, नहीं तो समालोचना एकांगी रह जायगी!

दाराकी मृत्यु ही शाहजहाँ नाटककी सबसे बड़ी घटना है। दाराके जीवनके अन्तके साथ ही नाटककी अन्तिम जवनिकाका गिरना उचित था। विद्रोहके पहले शाहजहाँ जिस अवस्थामें था उसी अवस्थामें आगरेके किलेके महलमें भी था, उसकी स्थितिमें कुछ विशेष परिवर्तन नहीं हुआ। केवल दाराने ही सिंहासन और जीवन दोनोंको खोया। वास्तवमें उसके भाग्यके पलटने पर ही नाटककी भित्ति स्थापित है, और उसकी मृत्युघटनासे मन इस प्रकार अवसादग्रस्त हो जाता है कि आगे एकसे एक उत्तम दृश्य आते हैं तो भी उनके देखनेका धैर्य नहीं रह जाता।

नाटकपात्रोंकी बातचीतके ढंगमें यदि व्यक्तिगत विषमता होती, एककी बातोंके ढँगका दूसरेकी बातोंके ढंगसे अन्तर होता, तो नाटकका सौन्दर्य और भी बढ़ जाता। प्रायः सभी प्रधान प्रधान पात्रोंके मुखोंसे कविने अपने हृदयकी बातें कहलाई हैं। शाहजहाँ, जहानारा, शुजा, पियारा, नादिरा, सुलेमान, दिलदार, ये सभी एक एक कवि हैं। यहाँ तक कि तरुणी जोहरतके वाक्योंसे भी कविजनसुलभ भावुकता टपक रही है। पात्रोंकी बातोंमें यह जो वैचित्र्यहीनता है, उसकी ओर सबकी दृष्टि आकर्षित होती है।

अनुवादक—

नाथूराम प्रेमी।

नाटकके पात्र ।

(पुरुष)

शाहजहाँ	... ...	भारतसम्राट् ।
दारा शुजा औरंगजेब मुराद	... ...	शाहजहाँके चारों लड़के ।
सुलेमान सिपर	... ...	दाराके दोनों लड़के ।
महम्मद सुल्तान	... ...	औरंगजेबका लड़का ।
जयसिंह	... ...	जयपुरके राजा ।
जसवन्तसिंह	... ...	जोधपुरके राजा ।
दिलदार	... ...	छद्मवेषी ज्ञानी (दानिशमंद) ।

(स्त्री)

जहानारा	... ...	शाहजहाँकी लड़की ।
नादिरा	... ...	दाराकी स्त्री ।
पियारा	... ...	शुजाकी स्त्री ।
जोहरतउन्निसा	... ...	दाराकी लड़की ।
महामाया	... ...	जसवन्तसिंहकी रानी ।

शाहजहाँ।

पहला अंक।

पहला दृश्य।

स्थान—आगरेके किलेका शाही महल। **समय**—तीसरा पहर।

[शाहजहाँ पलँगपर आधे लेटे हुए, हथेलीपर गाल रक्खे, सिर झुकाये सोच रहे हैं और 'सटक' मुहसे लगाये बीच बीचमें धुआँ छोड़ते जाते हैं। सामने शाहजादा दारा खड़े हैं।]

शाह०—दारा, हकीकतमें यह बहुत ही बुरी खबर है।

दारा—शुजाने बंगालमें बगावतका झंडा जरूर खड़ा किया है, मगर अभीतक उसने अपने आपको बादशाह नहीं मशहूर किया है। लेकिन मुराद गुजरातमें बादशाह बन बैठा है और दक्खिनसे औरंगजेब भी उधर मिल गया है।

शाह०—औरङ्गजेब भी उससे मिल गया है।—देखूँ, सोचता हू–मगर ऐसा कभी सोचा नहीं था। ऐसा सोचने की आदत ही नहीं है। इसीसे कुछ तै नहीं कर सकता। (तमाखू पीना।)

दारा—मेरी समझमें नहीं आता कि क्या किया जाय।

शाह०—मेरी भी समझमें नहीं आता। (तमाखू पीना।)

दारा—मैं इलाहाबादमें अपने लड़के सुलेमानको शुजाका मुकाबला करनेके लिए हुक्म भेजता हूँ और उसे मदद देनेके लिए महाराज जयसिंह और सिपहसालार दिलेरखाँको भेजता हूँ।

[शाहजहाँ नीचेको नजर किये हुए तमाखू पीने लगे।]

दारा—और मुरादका मुकाबला करनेके लिए महाराज जसवन्तसिंहको भेजता हूँ।

शाह०—भेजते हो!–अच्छी बात है। (फिर पहलेकी तरह तमाखू पीना।)

दारा—जहाँपनाह, आप कुछ फिक्र न करें। बागियोंका सिर कुचलना मैं खूब जानता हूँ।

शाह०—नहीं दारा, मुझे इस बात की फिक्र नहीं है। मुझे फिक्र सिर्फ इस बातको है कि यह भाईभाईकी लड़ाई है। (तमाखू पीना थोड़ी देरमें एकाएक।) नहीं-दारा, कुछ जरूरत नहीं। मैंसबको समझा दूँगा। लड़ाई-भिड़ाईका कुछ काम नहीं। उन्हें बेरोकटाक शहरके भीतर आने दो।

[तेजीसे जहानाराका प्रवेश।]

जहा०—कभी नहीं। अब्बा यह हो नहीं सकता। रिआयाने बादशाहके सिरपरजो तलवार उठाई है, वह उसी रिआया के सिर पर पड़नी चाहिए।

शाह०—जहानारा, यह क्या कहती हो ! वे मेरे बेटे हैं ।

जहा०—बेटे हों, इससे क्या ? बेटा क्या बापकी मुहब्बतका ही हकदार है ? बेटेको बापकी ताबेदारी भी करनी चाहिए। अगर बेटा ठीक राह पर न चले तो उसे सजा देना भी बापका फर्ज है।

शाह०—मेरा दिल तो एक ही हुकूमत जानता है, और वह सिर्फ मुहब्बतकी हुकूमत है। ये मेरे बेटी-बेटे बे-माके हैं। उन्हें किस दिल से सजा दूँ जहानारा ! वह देख-उस संगमरमरके बने हुए (लंबी सांस लेकर)-उस ताजमहलकी तरफ देख, फिर उन्हें सजा देनेके लिए कहना।

जहा०—अब्बाजान ! क्या आपके लायक यही बात है ! यह कमजोरी क्या हिन्दोस्तानके बादशाह शाहजहाँ को सोहती है ! बादशाहत भी क्या जनानखाना है ! लड़कोंका खेल है !-एक बड़ी भारी सल्तनतका काम आपके हाथ में है। रिआया अगर बागी हो तो उसे क्या बेटा समझकर बादशाह माफ कर देंगे ? मुहब्बत क्या फर्जका खयाल मिटा देगी ?

शाह०—जहानारा बहस न करो। इस बहसके लिए मेरे पास कोई जवाब नहीं। सिर्फ एक जवाब है-वही मुहब्बत। दारा, मैं सिर्फ यही सोच रहा हूँ कि इस झगड़ेमें चाहे जो हारे, मुझे दुख ही होगा। इस लड़ाईमें अगर तुम हारे तो तुम्हारा उदास और मुरझाया हुआ चेहरा देखना पड़ेगा; और अगर उन लोगोंने शिकस्त खाई तो मुझे उनके उदास और उतरे हुए चेहरेका खयाल होगा। दारा, लड़ाईकी जरूरत नहीं है ! वे यहाँ आवें; मैं उन्हें समझा दूँगा।

दारा—अब्बाजान, अच्छी बात है।

जहा०—दारा, तुम क्या इसी तरह अपने बूढ़े बापकी जगह

काम करोगे ? अब्बा अगर सल्तनतका काम कर सकते तो तुम्हारे हाथमें उसकी बागडोर न छोड़ देते। बेअदब शुजा, अपने आप बना हुआ बादशाह मुराद, और उसका मददगार औरंगजेब, ये सब बगावतका झंडा हाथमें लिये, डंका बजाते आगरेमें घुसेंगे, और तुम अपने बापके कायममुकाम होकर इस बातको खड़े खड़े हँसते हुए देखा करोगे ?—खूब !

दारा—सच है अब्बा, ऐसा कहीं हो सकता है ? मुझे जंगके लिए हुक्म दीजिए।

शाह०—या खुदा ! बापको यह मुहब्बतसे भरा दिल क्यों दिया था ? उनका दिल और जिगर लोहे का क्यों नहीं बनाया ?—ओफ !

दारा—अब्बाजान, यह न समझिएगा कि मैं यह तख्त चाहता हूँ। यह जंग इसके लिए नहीं है। मैं यह तख्त और ताज नहीं चाहता। मैंने दर्शनशास्त्र और उपनिषदोंमें इससे कहीं बढ़कर सल्तनत पाई है। मैं सिर्फ आपके तख्त और ताजकी हिफाजतके लिए यह जंग करना चाहता हूँ ।

जहा०—तुम जाते हो इन्साफके तख्तको बचाने, बुरे कामकी सजा देने, इस मुल्ककी करोड़ों बेगुनाह भोलीभाली रिआयाको जुल्मके पंजेसे छुड़ाने। अगर यह बगावतकी बुरी नियत दबाई न गई तो मुगलोंकी यह सल्तनत कितने दिन तक ठहर सकती है ?

दारा—मैं वादा करता हूँ कि मैं उनमेंसे किसीकी जान न लूँगा और किसीको सताऊँगा भी नहीं। सिर्फ उन्हें कैद करके अब्बाजानकी खिदमतमें हाजिर कर दूँगा। अगर आपका जी चाहे, तो उस वक्त उन्हें माफ कर दीजिएगा। मैं चाहता हूँ वे जान लें कि बादशाह

सलामतके दिलमें मुहब्बत है; मगर वे कमजोर नहीं हैं ।

शाह०—(खड़े होकर) अच्छा तो यही सही । उन्हें मालूम हो जाय कि शाहजहाँ सिर्फ बाप नहीं है, वह बादशाह भी है । जाओ दारा ! लो यह पंजा ! मैंने अपने सब अख्तियारात तुमको दे दिये । बागियोंको सजा दो । (पंजा देना ।)

दारा—जो हुक्म अब्बाजान ।

शाह०—लेकिन यह सजा अकेले उन्हींके लिए नहीं है । यह सजा मेरे लिए भी है । बाप जब लड़केको सजा देता है, तब बेटा सोचता है कि बाप बड़ा बेदर्द है ! वह यह नहीं जानता कि बाप जो बेंत उठाता है, उसका आधा हिस्सा उसी बाप की ही पीठ पर पड़ता है । (प्रस्थान ।)

जहा०—दारा उन लोगोंके यों एकाएक बगावत करनेका सबब भी तुमने कुछ सोचा है ?

दारा—वे कहते हैं कि अब्बाके बीमार होनेकी खबर गलत है । बादशाह सलामत अब इस दुनियामें नहीं हैं और मैं उनके नाम पर अपना ही हुक्म चला रहा हूँ ।

जहा०—यही सही । इसमें गैरमुनासिब क्या है ? तुम बादशाहके बड़े बेटे और होनहार वालिए-मुल्क हो ।

दारा—वे मेरी बादशाहत कुबूल करना नहीं चाहते ।

[सिपरके साथ नादिराका प्रवेश ।]

सिपर—अब्बा क्या वे आपका हुक्म नहीं मानना चाहते ?

जहा०—भला देखो तो, उनकी इतनी हिम्मत होगई ! (हास्य)

दारा—क्यों नादिरा, तुम सिर क्यों लटकाये हो !–कहो, तुम क्या कहना चाहती हो ?

नादिरा—सुनोगे ? मेरी एक बात मानोगे ?

दारा—नादिरा ! मैंने कब तुम्हारा कहना नहीं माना ?

नादिरा—यह मैं जानती हूँ। इसीसे कुछ कहनेकी हिम्मत करती हूँ। मैं कहती हूँ कि तुम यह जंग न ठानो–भाई भाईकी लड़ाई न छेड़ो।

जहा०—यह कैसे हो सकता है ?

नादिरा—सुनो—

दारा—क्या ! कहते कहते चुप क्यों हो गई ?–तुम ऐसा करने के लिए जोर क्यों दे रही हो ?

नादिरा—कल रातको मैंने एक बहुत बुरा ख्वाब देखा है।

दारा—वह क्या ?

नादिरा—इस वक्त मैं उसे बयान न कर सकूँगी। वह बड़ा ही ख़ौफ़नाक है ! नहीं जी ! इस लड़ाईकी जरूरत नहीं—

दारा—नादिरा ! यह क्या ?

जहा०—नादिरा, तुम परवेजकी लड़की हो। एक मामूली जंगसे डरकर आँसू बहा रही हो ? इस तरह घबराई हुई बातें कर रही हो ? ऐसी डरी हुई नजरसे देख रही हो ? ये बातें तुम्हें नहीं सोहतीं।

नादिरा—तुम नहीं जानतीं कि वह कैसा दिलको दहला देनेवाला ख्वाब था !–वह बड़ाही ख़ौफ़नाक था, बड़ाही ख़ौफ़नाक था !

जहा०—दारा ! यह क्या ! तुम क्या सोचते हो !–इतने कमजोर हो। जोरूके इतने बसमें हो ! बापका हुक्म लेकर अब क्या तुम्हें औरतका हुक्म लेना पड़ेगा ? याद रक्खो दारा, तुम्हारे सामने तुम्हारा मुश्किल फर्ज है। अब सोचनेके लिए वक्त नहीं है।

दारा—सच है नादिरा ! इस लड़ाईका रुकना गैरमुमकिन है। मैं जाता हूँ। सचमुच हुक्म देने जाता हूँ। (प्रस्थान।)

नादिरा—हाय बहन, तुम इतनी निठुर हो !—आओ सिपर !

(सिपरके साथ नादिराका प्रस्थान ।)

जहा०—इतना डर और इतनी घबराहट! कुछ सबब नहीं जान पड़ता ।

[शाहजहाँका फिर प्रवेश ।]

शाहजहाँ—जहानारा दारा गया ?

जहा०—जी हाँ अब्बाजान !

शाह०—(थोड़ी देर चुप रह कर) जहानारा—

जहा०—अब्बाजान !

शाह०—क्या तू भी इस झगड़ेमें है ?

जहा०—किस झगड़ेमें ?

शाह०—इसी भाइयोंके झगड़ेमें ।

जहा०—नहीं अब्बा—

शाह०—सुन जहानारा । यह बड़ा ही बेरहमी और बेमुरौवती-का काम है ! क्या करूँ–आज इसकी जरूरत ही आ पड़ी है । कोई चारा नहीं है । लेकिन तू इस झगड़ेमें न पड़ । तेरा काम है—प्यार, रहम, अदब । इस गन्दे काममें तू न पड़ । कमसे कम तू तो इस झगड़ेसे पाक रह ।

दूसरा दृश्य ।

स्थान—नर्मदाके किनारे मुरादका पड़ाव ।

समय—रात ।

[दिलदार अकेला खड़ा है ।]

दि०—मुराद मुझे मसखरा मुसाहब समझता है । मेरी बातोंमें

जो मज़ाक रहता है, उसे वह बेवक़ूफ़ नहीं समझ सकता । वह मेरी बातोंको बेतुकी समझकर हँसता है । मुरादको एक तरफ लड़ाई का खब्त है, और दूसरी तरफ वह ऐयाशीमें डूबा हुआ है । समझ-दारी और तबियतदारी उसके लिए एक ऐसी जगह है जहाँ उसकी पहुंच नहीं ।—वह देखो, इधर ही आ रहा है ।

[मुरादका प्रवेश ।]

मुराद—दिलदार ! जंगमें हमारी फतह हुई । खुशी मनाओ, ऐश करो । बहुत जल्द अब्बाको तख्त परसे उतारकर मैं खुद उस पर बैठूँगा ।—दिलदार, क्या सोचते हो ?—तुम तो सिर हिला रहे हो ?

दिल०—जहाँपनाह, मुझे आज एक नई बातका पता लगा है ।

मुराद—क्या !—सुनें ।

दिल०—मैंने सुना है कि खूनी जानवरोंमें एक यह दस्तूर है कि माँ-बाप अपने बच्चोंको खा डालते हैं ।—है या नहीं ?

मुराद—हाँ है तो । पर इससे मतलब ?

दिल०—लेकिन यह दस्तूर शायद उनमें भी नहीं है कि बच्चे मा बापको खा जायँ ।

मुराद—नहीं ।

दिल०—यह दस्तूर खुदाने शायद आदमियोंमें ही चला दिया है । दोनों ही ढंग होने चाहिए न ! यह उसकी अक्लकी खूबी है ।

मुराद—अक्लकी खूबी है ! हाः हाः हाः ! बड़े मजेकी बात कही दिलदार ।

दिल०—लेकिन इन्सानकी अक्लके आगे खुदाकी अक्ल कोई चीज नहीं । इन्सानने खुदासे भी चाल चली है ।

मुराद—वह कैसे !—

दिल०—जहाँपनाह, उस रहीम (दयामय) ने इन्सानको दाँत किस लिए दिये थे ? जरूर चबानेके लिए दिए थे, खोसें बाहर निकालनेके लिए नहीं । लेकिन इन्सान उन दाँतोंसे चबाता तो है ही, उनसे हँसता भी है । तब यही कहना पड़ेगा कि उसने खुदासे चाल चली है ।

मुराद—यह तो कहना ही पड़ेगा—

दि०—सिर्फ हँसते ही नहीं, बहुतसे लोग मानों हँसनेकी कोशिशमें लगे रहते हैं, यहाँ तक कि इसके लिए रुपये भी खर्च करते हैं।

मुराद—हा: हा: हा: !

दिल०—खुदाने इन्सानको जीभ दी थी–साफ मालूम पड़ता है, जायका चखनेके लिए । लेकिन आदमियोंने उससे बोलनेका काम लेकर तरह तरहकी जबानें (भाषायें)पैदा कर दीं ।—खुदाने नाक क्यों दी थी ? साँस लेनेके लिए ही तो ?

मुराद—हाँ, और शायद सूँघनेके लिए भी ।

दिल०—लेकिन इन्साननें उस पर भी अपनी बहादुरी दिखाई है । वह उस नाकके ऊपर चश्मा लगाता है । इसमें कोई शक नहीं कि खुदाने नाक इस लिए नहीं बनाई थी ।—बहुत लोगोंकी नाक सोतेमें खर्राटे भी लेती है ।

मुराद—हाँ, खर्राटे लेती है । लेकिन मेरी नाक नहीं बजती ।

दिल०—जी, जहाँपनाहकी नाक रातको नहीं, दिन-दोपहर बजती है ।

मुराद—अच्छा, अबकी जब बजे तब दिखा देना ।

दिल०—जहाँपनाह, यह चीज तो ठीक उस खुदाकी तरह है

जिसकी कोई सूरत नहीं है । ठीक ठीक दिखाई नहीं जा सकती । क्योंकि दिखा देनेकी हालत जब होती है तब यह बजती ही नहीं ।

मुराद—अच्छा दिलदार, खुदाने इन्सान को कान भी दिये हैं। इन्साननें उनके बारेमें क्या बहादुरी दिखा पाई है ?

दिल०—लीजिये, इससे तो मैंने यह एक बड़े मतलबकी बात ईजाद कर डाली । कान पकड़नेसे दिमाग ठिकाने आजाता है । लेकिन शर्त यह है कि कानोंके पीछे एक दिमाग होना चाहिए । क्यों कि बहुतोंके दिमाग (समझ) होता ही नहीं ।

मुराद—दिमाग नहीं होता ! यह क्या ! हाः हाः—लो, वे भाई साहब आ रहे हैं । इस वक्त तुम जाओ ।

दिल०—बहुत खूब । (प्रस्थान ।)

[दूसरी ओरसे औरंगजेबका प्रवेश ।]

मुराद—आओ भाईसाहब, मैं तुमको गलेसे लगालूं । तुम्हारी ही अक्लमन्दीकी बदौलत हमें फतह नसीब हुई है । (गले लगाता है ।)

औरंग०—मेरी अक्लमन्दीसे, या तुम्हारी बहादुरी और दिलेरीसे ? तुम्हारे जैसी बहादुरी बेशक कहीं देखनेको नहीं मिल सकती। ताज्जुब ! तुम मौतसे बिल्कुल डरते ही नहीं ?

मुराद—आसफखाँकी यह बात मुझे याद है कि जो लोग मौत को डरते हैं, वे जिन्दा रहनेके लायक नहीं ।—हाँ , यह तो कहो कि तुमने जसवन्तसिंहके चालीस हजार मुगल सिपाहियों पर कौनसा जादू डाल दिया था ! वे आखिरको जसवन्तसिंहकी ही राजपूत फौजके आगे बन्दूकें तान कर खड़े हो गये ! मुझे तो वह सब जादूकासा तमाशा जान पड़ा ।

औरंग०—मैंने लड़ाई छिड़नेके पहले दिन कुछ सिपाहियोंको

मुल्ला बनाकर इस पार भेज दिया था । वे मुगलोंकी फौजको यह कहकर भड़का गये कि काफिरकी मातहतीमें, काफिर के साथ, काफिर दाराकी तरफसे लड़ना बड़ा बुरा काम है, और कुरानकी रूसे नाजायज है । बस, उन सिपाहियोंने इसी पर यकीन कर लिया ।

मुराद०—तुमारी चालें निराली और ताज्जुबमें डाल देनेवाली होती हैं ।

औरंग०—भाई जान, सिर्फ एक तरकीब पर कायम रहनेसे कामयाबी हासिल नहीं हो सकती । जितनी तरकीबें हों, सबको सोचना चाहिए ।

[महम्मदका प्रवेश ।]

औरंग०—महम्मद क्या खबर है ?

महम्मद—अब्बाजान, महाराज जसबन्तसिंह अपनी फौज लिए घोड़े पर चढ़े हमारे पड़ाव के चारों तरफ चक्कर काट रहे हैं । —क्या हम लोग उन पर धावा कर दें ?

औरङ्ग०—नहीं ।

महम्मद०—इसका मतलब क्या है ?

औरंग०—रजपूतीका घमंड ! इसी घमंडसे राजा जसवन्तको नीचा देखना पड़ेगा । मैं जिस वक्त फौज लेकर नर्मदाके किनारे पहुँचा था, उसी वक्त अगर वे मुझ पर धावा कर देते तो मेरा बचना मुश्किल था ।—मुझे जरूर शिकस्त खानी पड़ती । क्योंकि तबतक तुम आये ही नहीं थे, और तुम्हारी फौज भी सफरकी थकी हुई थी । लेकिन मैंने सुना कि इस तरहका वार करना बहादुरीके खिलाफ समझकर ही राजासाहब तुम्हारे आजानेकी राह देखते रहे । जब इतना घमंड है तब उन्हें जरूर नीचा देखना पड़ेगा ।

महम्मद—तो हम लोग उनसे छेड़छाड़ न करें ?

औरंग०—नहीं । हमारे पड़ावके चारों तरफ चक्कर काटनेसे अगर जसवन्तसिंहको कुछ तसल्ली हो तो वे एक नहीं, सौ दफ़ा चक्कर काटा करें। जाओ। (महम्मदका प्रस्थान ।)

औरंग०—शाहजादेको लड़ाईका बड़ा शौक है ।—मेरा यह लड़का सीधा ऊँचे खयालवाला और निडर है । अच्छा मुराद, अब मैं जाता हूँ । तुम भी जाकर आराम करो । (प्रस्थान ।)

मुराद—अच्छी बात है ।—दरबान ! शराब और तवायफ़ !—
(प्रस्थान ।)

तीसरा दृश्य ।

स्थान—काशीमें शुजाकी फौजका पड़ाव ।

समय—रात ।

[शुजा और पियारा ।]

शुजा—पियारा तुमने कुछ सुना ? दाराका बेटा सुलेमान इस जंगमें मेरा मुकाबला करनेके लिए आया है ।

पियारा—तुम्हारे बड़े भाई दाराका बेटा दिल्लीसे आया है ? सच ! तो जरूर अपने साथ दिल्लीके लड्डू लाया होगा । तुम जल्दी उसके पास आदमी भेजो । मेरी तरफ ताक क्या रहे हो ! आदमी भेजो—

शुजा—लड्डू कैसे ! उसके साथ लड़ाई होगी—

पियारा—उसके साथ अगर बेलका मुरब्बा हो तो और भी अच्छा है । मुझे वह भी नापसन्द नहीं है । लेकिन दिल्ली के लड्डू —सुना है, जो खाता है वह भी पछताता है और जो नहीं खाता वह

भी पछताता है। दोनों तरह जब पछताना ही है तब न खाकर पछताने की बनिस्बत खाकर पछताना ही अच्छा—जल्दी आदमी भेजो।

शुजा—तुम एक साँसमें इतना बक गईं कि मुझे जो कुछ कहना था, उसके कहनेकी तुमने फुरसत ही नहीं दी।

पियारा—तुम और क्या कहोगे! तुमतो सिर्फ जंग करोगे।

शुजा—और जो कुछ कहना होगा, वह शायद तुम कहोगी?

पियारा—इसमें शक क्या है! हम औरतें जिस तरह समझा कर साफ साफ कह सकती हैं, उस तरह तुम लोग कह सकते हो? अगर तुम लोग कुछ कहने को तैयार होते हो तो पहले ही ऐसी गड़-बड़ कर देते हो और बोलने की ऐसी ऐसी गल्तियाँ करते हो कि—

शुजा—कि?

पियारा—और लुगत (कोष) के आधे लफ्ज तो तुम लोग जानते ही नहीं। बातें करनेमें तुम कदम कदम पर गल्तियाँ करते हो। गूँगे लफ्जों और अन्धे कायदे (व्याकरण) को मिलाकर ऐसी लँगड़ी जबान (भाषा) बोलते हो कि उसे बहुत ही कुबड़ी होकर चलना पड़ता है।

शुजा—लेकिन मुझे तो तुम्हारी भी ये बातें बहुत दुरुस्त नहीं जान पड़तीं।

पियारा—जान कैसे पड़ें! हम लोगोंकी बातें समझनेकी लियाकत ही तुम लोगोंको नहीं है! या खुदा! ऐसी अक्लमंद औरतोंकी ज़ातको ऐसी अक्लसे खारिज मर्द ज़ात के हाथमें सौंप दिया है कि इसकी बनिस्बत अगर तुम औरतोंको गर्म और खौलते हुए तेल के कड़ाहेमें चढ़ा देते तो शायद वे इस हालतसे मजेमें रहतीं।

शुजा—खैर—तुम बके जाओ।

पियारा—शेर की ताकत दाँतोंमें, हाथी की ताकत सूँड़में, भैंसेकी ताकत सींगोंमें, घोड़ेकी ताकत पिछले दोनों पैरोंमें, हिन्दोस्तानियों-की ताकत पीठमें और औरतोंकी ताकत जबानमें होती है।

शुजा—नहीं, औरतोंकी ताकत उनकी नजरमें होती है।

पियारा—ऊंहूं ! नजर पहले पहल जरूर कुछ काम करती है, लकिन आगे जिन्दगीभर तो मर्द पर औरत इसी जबानके जोरसे हुकूमत करती है।

शुजा—नहीं, देख पड़ता है, तुम मुझे बात कहने का मौका ही न दोगी। सुनो, मैं क्या कह रहा था—

पियारा—यही तो तुममें ऐब है ! तुम्हारी बातोंका दीबाचा (भूमिका) इतना होता है कि वह पूरा ही नहीं हो पाता है और तुम बीचमें ही मतलबकी बात भूल जाते हो।

शुजा—तुम अगर थोड़ी देर और इस तरह बके जाओगी तो सचमुच ही मैं कहनेकी बात भूल जाऊंगा।

पियारा—तो चट पट कह डालो। देर न करो।

शुजा—लो सुनो—

पियारा—कहो। लेकिन मुख्तसर (संक्षेप) में। याद रखना ? —एक साँसमें।

शुजा—इस बक्त मेरे खिलाफ होकर मुझसे लड़ने के लिए दारा का लड़का सुलेमान आया है। उसके साथ बीकानेरके महाराज जयसिंह और सिपहसालार दिलेरखाँ भी हैं।

पियारा—अच्छी बात है, एक दिन उन्हें दावत करके खिला दो।

शुजा—नहीं। तुम लड़कपन ही किये जाओगी ! ऐसा मुश्किल मामला—ख़ौफ़नाक लड़ाई–सामने है ! और उसे तुम—

पियारा---इसीसे तो मैं उसे जरा आसान बनानेकी कोशिश कर रही हूं ! ऐसे गाढ़े मामलेको अगर पतला न बनाया जायगा तो वह हज़म कैसे होगा ! हाँ, कहे जाओ ।

शुजा—अभी राजा जयसिंह मेरे पास आये थे । वे कहते हैं कि बादशाह शाहजहाँकी मौत अभी नहीं हुई । उन्होंने मुझे बादशाहके हाथका लिखा खत भी दिखलाया । उस खतमें क्या लिखा है, जानती हो ?

पियारा--जल्दी कह डालो । अब मुझसे रहा नहीं जाता ।

शुजा--उस खतमें उन्होंने लिखा है कि अगर मैं अब भी बंगाल-को लौट जाऊँ तो मुझसे यह सूबा न छीना जायगा । नहीं तो--

पियारा--नहीं तो छीन लिया जायगा । यही न !—जाने दो ! अब और तो कुछ कहनेको नहीं है ? अब मैं गाना गाऊँ ?

शुजा—जानती हो, मैंने जवाबमें क्या लिख दिया है ? मैंने लिख दिया है—"अच्छी बात है, मैं बिना लड़ेभिड़े बंगालको लौटा जाता हूँ । अब्बाजानके हुक्म और दबावको मैं सिर-आँखोंसे कुबूल कर सकता हूँ। लेकिन दारा का हुक्म मैं किसी तरह माननेको तैयार नहीं हूँ ।"

पियारा—तुम मुझे गाने न दोगे । आप ही बके चले जा रहे हो । अब मैं न गाऊँगी ।

शुजा—नहीं, गाओ ! लो मैं चुप हूँ ।

पियारा—देखो, याद रखना । बोलना नहीं । क्या गाऊँ ?

शुजा—जो जी चाहे ।--नहीं । कोई मुहब्बतका गाना गाओ । ऐसा गाना गाओ, जिसकी जबानमें मुहब्बत, जिसके मतलबमें मुह-ब्बत, जिसके इशारोंमें मुहब्बत, जिसकी तानमें मुहब्बत और जि-

सके सममें भी मुहब्बत हो।—ऐसा ही गाना गाओ, मैं सुनूँगा।

[पियारा गाना शुरू करती है।]

शुजा—पियारा दूर पर एक तरहके शोरगुलकी आवाज सुन पड़ती है।—जैसे बादल गरज रहा है।—यह देखो!

पियारा—नहीं तुम गाने न दोगे। मैं जाती हूं।

शुजा—नहीं, वह कुछ नहीं है। गाओ।

ठुमरी—पंजाबी ठेका।

इस जीवनमें साध न पूरी हुई प्यारकी प्यारे।
छोटा है यह हृदय; इसीसे, इससे, नाथ हमारे—
प्रेम-पुंज आकुल असीम यह उमड़ पड़े दृग-द्वारे॥ इस०॥
अपना हृदय हृदयसे तेरे मिला रखूँ कितना ही;
तो भी युगल हृदय बिच मानों, खटके विरह सदा ही॥ इस०॥
यह जीवन यह दुनिया मेरी, कुछ दिनकी है; इसमें-
सारा प्रेम दे सकूँगी क्या, रसिया, रसमें-रिसमें॥ इस०॥
चाहूँ जितना, और अधिक ही जी चाहे—मैं चाहूँ।
देकर प्रेम न मिटती आसा, ऐसी अकथ कथा हूँ॥ इस०॥
बेहद होवे जगह, अमर हों प्रान, मिटे सब बाधा।
तब पूजेगी आस--प्रेम दे, चुके जनम-ऋन साधा॥ इस०॥

शुजा—यह जिन्दगी एक खुमारी है। बीच बीचमें ख्वाबकी तरह बहिश्तसे एक तरहका इशारा आकर समझा देता है कि इस खुमारी-का जागना कैसा मीठा और प्यारा है!—यह गाना उसी बहिश्तकी एक झनकार है। नहीं तो यह इतना मीठा और दिलचस्प कैसे होता!

[नेपथ्यमें तोपकी आवाज।]

शुजा—(चौंककर) यह क्या!

पियारा—हां ! प्यारे ! इतनी रातको तोपकी आवाज—इतनी नजदीक !—दुश्मन तो उस पार है !

शुजा—यह क्या ! फिर वही आवाज । मैं देख आऊँ।(प्रस्थान)।

पियारा—यही तो मैं भी सोच रही हूं ! बार बार वही तोपकी आवाज सुन पड़ती है ! यह उमंगसे भरा फौजका शोरगुल, हथियारों की झनकार—रातका गहरा सन्नाटा मानों एकाएक चोट लगने से चिल्ला उठा है ।—यह सब क्या है !

[तेजीसे शुजाका फिर प्रवेश ।]

शुजा—पियारा, बादशाही फौजने एकाएक मेरे पड़ाव पर धावा कर दिया है ।

पियारा—धावा कर दिया है ! यह क्या !

शुजा—हाँ ! महाराज जयसिंहने यह दगाबाजी की है !—मैं लड़ाई के मैदानमें जा रहा हूँ । तुम भीतर जाओ । कुछ डर नहीं है, पियारा—

पियारा—शोरगुल धीरे धीरे बढ़ता ही जा रहा है। ओः यह क्या है—

(प्रस्थान ।)

(नेपथ्यमें कोलाहल सुन पड़ता है ।)

[एक ओरसे सुलेमान और दूसरी ओरसे दिलेरखाँका प्रवेश ।]

सुलेमान—सूबेदार (शुजा) कहाँ हैं !

दिलेर०—वे इस दरियाके तरफ भाग गये हैं ।

सुलेमान—भाग गये ? दिलेरखाँ उनका पीछा करो ।

[दिलेरखाँका प्रस्थान । जयसिंहका प्रवेश ।]

सुलेमान—महाराज, हम लोगों की फतह हुई ।

जयसिंह—आपने क्या रातको ही नदी पार होकर दुश्मनकी फौज पर धावा कर दिया था ?

सुलेमान—हाँ, मगर क्या उन्होंने यह सोचा न होगा कि मैं ऐसा करूँगा, लेकिन तो भी मुझे इतनी जल्दी कामयाब होनेकी उम्मेद न थी ।

जयसिंह—सुल्तान शुजाकी फौज बिल्कुल तयार न थी । जब आधेके लगभग आदमी मर चुके, तब भी अच्छी तरह उनकी आँखें नहीं खुली थीं ।

सुलेमान—इसका सबब ? चचाजान तो सच्चे और मुस्तैद सिपाही हैं । वे पहलेहीसे रातको धावा होना मुमकिन समझते होंगे ।

जयसिंह—मैंने बादशाह सलामतकी तरफसे उनसे सुलह कर ली थी । वे लड़ाई किये बिना ही बंगालको लौट जानेके लिए राजी हो गये थे । यहां तक कि लौट जानेके लिए नाव तैयार करनेका हुक्म भी दे चुके थे ।

[दिलेरखाँका फिर प्रवेश ।]

दिलेर०—शाहजादा साहब, सुल्तान शुजा बाल-बच्चोंके साथ नाव पर बैठकर भाग गये ।

जय०—यह देखिए–उसी सजी हुई नाव पर ।

सुले०—पीछा करो–जाओ फौजको हुक्म दो ।

(दिलेरखाँका फिर प्रस्थान ।)

सुले०—राजासाहब आपने किसके हुक्मसे यह सुलह की थी ?

जय०—खुद बादशाहके हुक्म से ।

सुले०—अब्बाजानने तो मुझे कुछ लिखा ही नहीं । और तुमने भी मुझसे पहले नहीं कहा !—तुम बड़े बेवकूफ हो ।

जय०—बादशाहने मना कर दिया था ।

सुले०—फिर झूठ बोलते हो ।—जाओ । (जयसिंहका प्रस्थान ।)

सुले०—बादशाहका कुछ और हुक्म है; और मेरे अब्बाजानका कुछ और हुक्म है ! क्या यह भी मुमकिन है !–अगर यही हो तो ! राजासाहबको मैंने नाहक बताया । और अगर बादशाहका ऐसा ही हुक्म हो तो !–इधर अब्बाने लिखा है कि "शुजा को मय बाल-बच्चोंके कैद कर लो ।"–नहीं, मैं अब्बाके हुक्म की तामील करूँगा । उनका हुक्म मेरे लिए खुदाके हुक्मके बराबर है !

चौथा दृश्य ।

स्थान—जोधपुरका किला । समय—सबेरा ।

[महामाया और चारणियाँ ।]

महामाया—फिर गाओ, चारणियो फिर गाओ।

सोहनी । ताल–धमार ।

(१)

वह तो गये हैं युद्धमें जय प्राप्त करनेको वहाँ ।
　　ऐसे महा आह्वानमें निर्भय विचरनेको वहाँ ॥
यश-मानके हित प्राणका बलिदान देनेको वहाँ ।
　　होने अमर, मथने मरणके सिन्धुको देखो वहाँ ॥
उठ वीरबाला, बाल बाँधो, पोंछ दृग, गौरव गहे ।
　　सधवा रहो, विधवा बनो, ऊँचा तुम्हारा सिर रहे ॥

(२)

निज शत्रुके रणके निमंत्रणमें गये हैं वे वहाँ ।
　　मिलते कवचसे हैं कवच, बढ़ता विकट विग्रह वहाँ ॥

होता कठिन परिचय खुले खर खड्गहीकी धारसे ।
भ्रूभगंसे गर्जन मिले, त्यों रक्त रक्तासारसे ॥
उठ वीर बाला० ॥

(३)

अनुनय, दिखाना पीठ या, होता नहीं रणमें वहाँ ।
लाशें तड़पती सैकड़ों बस एकही क्षणमें वहाँ ॥
तर खूनसे काली बलासी मौत नाचे चावसे ।
बाजे बजें जयके, उधर है आर्त्तनाद् जुझावसे ॥
उठ वीर बाला० ॥

(४)

ज्वाला बुझाने सब गये हैं वे वहाँ संग्राममें ।
आते अभी होंगे यहाँ जय प्राप्त कर निज धाममें ॥
अथवा अमर होकर मरेंगे वीरके उत्कर्षसे ।
ले गोदमें महिमा वही तुम भी मरोगी हर्षसे ॥
उठ वीर बाला० ॥

पहरेदार—महारानी साहब !

महामा०—सिपाही क्या खबर है ?

पहरे०—महाराज लौट आये हैं ।

महामा०—आगये ? युद्धमें विजय पाकर लौट आये ?

पहरे०—जी नहीं ! इस युद्धमें वे हारकर लौटे हैं ।

महा०—हारकर लौट आये हैं ! तुम क्या कहते हो !कौन हारकर लौट आया है ।

पहरे०—महाराज ।

महा०—क्या ! महाराज जसवन्तसिंह हारकर लौट आये हैं ?

यह क्या मैं ठीक सुन रही हूँ ! जोधपुर के महाराज—मेरे स्वामी—युद्धमें हारकर लौट आये हैं ! क्षत्रियोंकी शूरताका ऐसा अन्त—ऐसी बुरी दशा–होगई है !–असम्भव है ! वीर क्षत्रिय युद्धमें हारकर घर नहीं लौटते ! महाराज जसवन्तसिंह क्षत्रियोंके शिरोमणि हैं । युद्धमें हार हो सकती है । अगर वे युद्धमें हार गये तो युद्धभूमिमें मरे पड़े होंगे । महाराज जसवन्तसिंह युद्धमें हारकर कभी लौट ही नहीं सकते । जो लौटकर आया है, वह महाराज जसवन्तसिंह नहीं है । वह उनका भेष धरकर आनेवाला कोई ऐयार है । उसे किलेके भीतर न आने देना । किलेका फाटक बंद कर लो । गाओ, चारणियो फिर गाओ ।

(चारणियाँ फिर वही गीत गाती हैं ।)

पाँचवाँ दृश्य ।

स्थान—ऊसर मैदान । समय—रात ।

[औरंगजेब अकेले खड़े हैं ।]

औरंग०—आसमानमें काले बादल छाये हैं । आँधी आवेगी । एक दरिया पार कर आया हूँ; यह और एक दरिया है । बड़ा ही खौफनाक है–इसमें बड़ी बड़ी लहरें उठ रही हैं । इसका पाट इतना लंबा चौड़ा है कि दूसरा किनारा नहीं देख पड़ता । तो भी पार करना पड़ेगा—और वह भी इसी छोटीसी नावसे ।

[मुरादका प्रवेश ।]

औरंग०—क्यों मुराद ! क्या खबर है ?

मुराद—दाराके साथ एक लाख घुड़सवार फौज और सौ तोपें हैं ।

औरंग०—तो यह खबर ठीक है !

मुराद—ठीक है; हमारे हरएक जासूसका यही अंदाज है ।

औरंग०—(टहलते टहलते) यह–नहीं–यही तो !

मुराद—दाराने इसी पहाड़के उस पार अपना पड़ाव डाला है।

औरंग०—इसी पहाड़के उस पार ?

मुराद—हाँ ।

औरंग०—यही तो !–एक लाख सवार–और—

मुराद—हम लोग कल सबेरे ही—

औरंग०—चुप रहो ! बोलो नहीं । मुझे सोचने दो ।—इतनी फौज दाराके पास आई कहाँ से ।–और एक सौ !–अच्छा मुराद तुम इस वक्त जाओ मुझे सोचने दो। (मुराद का प्रस्थाना ।)

औरंग०—यही तो !– इस वक्त पीछे हटनेसे फिर बचाव नहीं हो सकता; लड़नेमें भी जान गँवानी पड़ेगी ।–एक सौ तोपें । अगर–नहीं–यह हो ही कैसे सकता है ।–हूँ (लंबी साँस छोड़ना)– औरंगजेब ! अबकी या तो तुम्हारी तकदीर खुल गई और या हमेशाके लिए फूट गई !–फूटना ?–गैरमुमकिन है । खुलना !– लेकिन किस तरकीबसे ?–कुछ समझमें नहीं आता ।

[मुरादका प्रवेश ।]

औरंग०—तुम फिर क्यों आये ?

मुराद—उधरसे शायस्ताखाँ तुमसे मिलने आये हैं ।

औरंग०—आये हैं ? अच्छी बात है । इज्जतके साथ उन्हें यहाँ लाओ। नहीं, मैं खुद आता हूँ । (प्रस्थान ।)

मुराद—यही तो ! शायस्ताखाँ हमारे पड़ावमें क्यों आया है !— भाईसाहब भीतर ही भीतर क्या मतलब सोच रहे हैं, समझमें

नहीं आता। शायस्ताखाँ क्या दारासे दगाबाजी करेगा! देखा जायगा। (इधर उधर टहलने लगता है।)

[औरंगजेबका प्रवेश।]

औरंग०—भाई मुराद! इसी वक्त आगरे जानेके लिए मय फौजके रवाना होना होगा। तैयार होजाओ।

मुराद—यह क्या!—इतनी रातको?—

औरंग०—हाँ इतनी रातको। पड़ावके डेरे जैसे के तैसे पड़े रहने दो। दाराकी फौज पर हम धावा नहीं करेंगे। इस पहाड़के दूसरे किनारेसे आगरे जाने की एक राह है। उसीसे चलेंगे। दाराको शक न होगा। दारासे पहले हमें आगरे पहुंचना है। तैयार हो जाओ।

मुराद—तो क्या अभी?

औरंग०—बहस करनेके लिए वक्त नहीं है। तख्त चाहो तो कुछ कहो सुनो नहीं। नहीं तो याद रक्खो, मौत का सामना है।

(दोनोंका प्रस्थान।)

छठा दृश्य।

स्थान—प्रयागमें सुलेमानका पड़ाव।

समय—तीसरा पहर।

[जयसिंह और दिलेरखाँ।]

दिलेर०—आखिरी लड़ाईमें भी औरङ्गजेबकी फतह हुई है। सुना राजा साहब?

जयसिंह—मैं पहले ही जानता था।

दिलेर०—शायस्ताखाँने दगाबाजी की। आगरेके पास बड़ी

भारी लड़ाई हुई। उसमें हारकर दारा दोआबकी तरफ भाग गये हैं। उनके पास सब मिलाकर सौ साथी हैं और तीस लाख रुपये हैं।

जय०—उनको भागना ही पड़ता। मैं जानता था।

दिलेर०—आपतो सभी जानते थे!—दारा भागनेके वक्त जल्दी के मारे बहुतसा रुपया नहीं ले जा सके। लेकिन उसके बाद सुना, बूढ़े बादशाहने सत्तावन खच्चरों पर मोहरें लादकर दाराके लिए भेजीं। राहमें जाटोंने वह रकम भी लूट ली।

जय०—बेचारा दारा!—लेकिन यह मैं पहिले ही जानता था।

दिलेर०—औरंगजेब और मुराद फतहयाबीकी खुशी मनाते हुए आगरेमें दाखिल हुए हैं। मतलब यह कि इस वक्त औरंगजेब ही बादशाह हैं।

जय०—यह सब मैं पहलेहीसे जानता था।

दिलेर०—औरंगजेबने मुझे खत में लिखा है कि अगर तुम मय अपनी फौजके सुलेमानको छोड़कर चले जाओ तो मैं तुम्हें बहुत बड़ी रकम इनाम दूँगा। आपको भी शायद यही लिखा है।

जय०—हाँ।

दिलेर०—राजा साहब इस जंगके आखिरी नतीजेके बारेमें आपकी क्या राय है?

जय०—मैंने कल एक ज्योतिषीसे इसके बारेमें पूछा था। उन्हों-ने कहा, इस समय भाग्यके आकाशमें औरंगजेबका सितारा बुलन्द हो रहा है, और दाराका सितारा डूब रहा है।

दिलेर०—तो फिर हम लोगोंको इस वक्त क्या करना चाहिए?

जय०—मैं जो करूं, उसे तुम देखते भर जाओ।

दिलेर०—अच्छा—इन सब बातोंमें मेरी अक्ल उतना काम नहीं

करती । मगर एक बात—

जय०—चुप रहो सुलेमान आरहे हैं ।

[सुलेमानका प्रवेश ।]

जयसिंह और दिलेर०—शाहजादा साहब तसलीम ।

सुले०—राजासाहब ! अब्बा हारकर भाग गये ।—यह बादशाह शाहजहाँका खत है । (पत्र देना ।)

जय०—(पत्र पढ़कर) कहिए शाहजादा साहब, क्या किया जाय !

सुले०—बादशाहने मुझे अब्बाजानकी कुमकको फौज लेकर जल्द रवाना होने के लिए लिखा है । मैं अभी जाऊंगा । तंबू उतार लिये जायँ,और फौजको हुक्म दिया जाय कि—

जय०—शाहजादासाहब, मेरी समझमें और भी ठीक खबर पाने के लिए रुकना मुनासिब है । क्यों खाँसाहब, तुम्हारी क्या राय है ?

दिलेर०—मेरी भी यही राय है ।

सुले०—इससे बढ़कर ठीक खबर और क्या हो सकती है ? खुद बादशाहके दस्तखत हैं ।

जय०—मुझे यह जाल जान पड़ता है । खासकर बादशाह खुद कुछ काम नहीं कर सकते । उनकी आज्ञा आज्ञा ही नहीं है । आपके पिता की आज्ञा पाये बिना हम यहाँसे एक कदम भी नहीं हट सकते । क्यों दिलेरखाँ ?

दिलेर०—आपका कहना ठीक है ।

सुले०—लेकिन,अब्बा तो भाग गये हैं । वे हुक्म कैसे दे सकते हैं ?

जय०—तो हमको अब उनकी जगह पर औरंगजेबकी आज्ञा की राह देखनी पड़ेगी—अगर यह बात सच हो ।

सुले०—क्या ! औरंगजेबके हुक्म की—अपने वालिद्के दुश्मनके हुक्मकी—मैं राह देखूंगा ?

जय०—आप न देखें, हमको तो देखनी पड़ेगी—क्यों दिलेरखाँ ?

दिलेर०—हाँ, मौका तो कुछ ऐसा ही आ पड़ा है ।

सुले०—तो क्या आप दोनों आदमियोंने मिलकर दगाबाजी करनेकी ठान ली है ?

जय०—हम लोगोंका दोष क्या है—बिना उचित आज्ञा पाये हम किस तरह कोई काम कर सकते हैं ? लाहौरमें शाहजादा दारा के पास जानेकी कोई उचित और माननीय आज्ञा हमने नहीं पाई ।

सुले०—मैं तो हुक्म दे रहा हूं ।

जय०—आपकी आज्ञासे हम आपके पिताकी आज्ञाके विरुद्ध कुछ नहीं कर सकते । क्यों खाँ साहब ?

दिलेर०—कैसे कर सकते हैं ?

सुले०—समझ गया । आप लोगोंने दगाबाजी करनेकी ठानली है । अच्छा मैं खुद ही फौजको हुक्म देता हूं ।

(सुलेमानका प्रस्थान ।)

दिलेर०—राजासाहब आप यह क्या कर रहे हैं ?

जय०—डरनेकी कोई बात नहीं है । मैंने सब सिपाहियोंको अपनी मुट्ठीमें कर रक्खा है ।

दिलेर०—आप जैसा होशियार कामकाजी आदमी मैंने कोई नहीं देखा । लेकिन यह काम क्या ठीक होरहा है ?

जय०—चुप रहो !—इस समय जरा अलग रहकर तमाशा देखना ही हमारा काम है । अभी हम एकदम औरंगजेबकी तरफ झुक भी न पड़ेंगे । कुछ रुकना होगा । क्या जानें—

[सुलेमानका फिर प्रवेश ।]

सुले०—फौजके सिपाही भी सब इस धोखेबाजीमें शामिल हैं।आप लोगोंके हुक्मके बगैर वे टससे मस होना नहीं चाहते।

जय०—यही फौजी दस्तूर है।

सुले०—राजासाहब ! बादशाहने मुझे अब्बाकी कुमक पर जानेको लिखो है। अब्बाके पास जानेके लिए मेरा जी छटपटा रहा है। मैं आप लोगोंसे मिन्नत करता हूं।—दिलेरखाँ! दाराका बेटा मैं हाथ जोड़कर आप लोगोंसे यह भीख माँगता हूं कि आप न जायँ—मेरे सिपाहियोंको मेरे साथ अब्बाके पास लाहौर जाने का हुक्म दे द। मैं देखूं, इस बागी औरंगजेबमें कितनी बहादुरी है। अगर मैं अपने इन दिलेर सिपाहियोंको लेकर अब भो जंगके मैदानमें पहुँच सकता—राजासाहब !—दिलेर खाँ! हुक्म दीजिए। इस मेहरबानी के बदले मैं जिन्दगी भर गुलाम रहूँगा।

जय०—बादशाहकी आज्ञाके बिना हम यहाँसे एक कदम भी आगे नहीं बढ़ सकते।

सुले०—दिलेरखाँ—मैं घुटने टेककर—शाहजादा दाराका बेटा, मैं घुटने टेककर—यह भीख माँगता हूं। (घुटने टेकता है।)

दिलेर०—उठिए शाहजादा साहब। राजा साहब न दें, मैं हुक्म देता हूँ। मैंने दाराका नमक खाया है। मुसलमानोंकी कौम नमकहराम नहीं होती। आइए शाहजादा साहब, मैं अपनी सारी फौज लेकर आपके साथ लाहौर चलता हूँ।—और कसम खाता हूँ कि अगर शाहजादा मुझे छोड़ न देंगे तो मैं खुद शाहजादाको कभी न छोड़ूँगा। मैं जरूरत पड़ने पर शाहजादा दाराके बेटेके लिए जान भी देनेको तैयार हूँ। आइए शाहजादा साहब! मैं इसी वक्त हुक्म

देता हूँ।

(सुलेमान और दिलेरखाँका प्रस्थान ।)

जय०—लो, खाँ साहब एक बूंद पानी में ही गल गये ! अपनी भलाई की तुमने पर्वा नहीं की । मैं क्या करूं ? अपनी सेना लेकर मैं आगरे चलूँ। (प्रस्थान ।)

सातवाँ दृश्य ।

स्थान—आगरेका महल । समय—तीसरा पहर ।

[शाहजहाँ और जहानारा ।]

शाहजहाँ—जहानारा, मैं बड़े शौकसे औरंगजेबकी राह देख रहा हूँ ! वह मेरा बेटा, मेरा जवाँमर्द फतहयाब बेटा है; मेरी लाज और मेरी इज्जत है ।

जहानारा-- इज्जत ! अब्बा इतना मक्कार इतना झूठा है वह ! उस दिन जब मैं उसके खेमेमें गई तब उसके ढंगसे ऐसा मालूम पड़ा कि वह आपको बहुत मानता है और आपकी बड़ी इज्जत करता है । उसने कहा, मुझसे यह बड़ा भारी कसूर हो गया है, मैंने यह बड़ा भारी गुनाह किया है । साथ ही साथ उसने दो-एक बूंद आँसू भी गिरा दिये । उसने कहा, दाराकी तरफ जो बड़े बड़े लायक आदमी हैं, उनके नाम अगर मुझे मालूम हो जायँ तो मैं बेधड़क अब्बाजान के हुक्मके मुताबिक मुरादको छोड़कर दाराकी तरफ हो जाऊँ । मुझे उसकी इस बात पर यकीन हो गया और मैंने बदनसीब दाराके तरफदार दोस्तोंके नाम उसे बतला दिये । बस उसने उन्हें उसी वक्त कैद कर लिया । मैंने दाराको रुक्का भेज दिया था । राह में वह रुक्का भी औरंगजेबने हथिया लिया । वह ऐसा दगाबाज और फरेबी है !

शाह०—नहीं जहानारा। यह वह नहीं कर सकता। ना ना ना। मैं इस बात पर यकीन न करूँगा।

जहा०—आवे वह एक दफा इस किलेमें। मैं धोखा देकर चालाकी से उसे कैद करूँगी। यहाँ मैंने हथियारबन्द सौ सिपाही छिपा रक्खे हैं। उसे मैं आपके सामने ही कैद करूँगी।

शाह०—जहानारा यह क्या बात है !—वह मेरा लख्तेजिगर, तुम्हारा भाई है। नहीं जहानारा, ऐसा करनेकी जरूरत नहीं है। वह आवे। मैं उसे मोहब्बतसे अपने काबू में कर लूँगा। उससे भी अगर वह काबू में न आवेगा—तो उसके आगे, मैं वालिद—उसके आगे घुटने टेककर तुम सब लोगोंकी और अपनी जानकी भीख माँग लूँगा। कहूँगा; हम और कुछ नहीं चाहते, हमें जीने दो, हम लोगों को आपस में एक दूसरे से महब्बत करनेका मौका दो।

जहा०—अब्बा! इस बेइज्जतीसे मैं आपको बचाऊंगी।

शाह०—बेटेसे इल्तिजा करने में बापकी बेइज्जती नहीं हो सकती।

[महम्मदका प्रवेश।]

शाह०—यह देखो महम्मद आगया! तुम्हारे अब्बा कहाँ हैं!

महम्मद—बाबाजान मुझे मालूम नहीं!

शाह०—यह क्या! मैंने तो सुना था, वह यहाँ आनेके लिए घोड़े पर सवार हो चुका है।

मह०—किसने कहा! वे तो घोड़े पर चढ़कर बादशाह अकबरकी कब्र पर नमाज पढ़ने गये हैं। मुझे जहाँ तक मालूम है, यहाँ आनेका उनका बिलकुल इरादा नहीं है।

जहा०—तो तुम यहाँ क्यों आये हो!

मह०—इस किलेके शाही महल पर कब्जा करनेके लिए।

शाह०—यह क्या !—नहीं, महम्मद तुम हँसी कर रहे हो।

मह०—नहीं बाबाजान, यह सच बात है।

जहा०—हाँ ! तो मैं तुमको ही कैद करूँगी। (सीटी बजाना।)

[हथियारबन्द पाँच सिपाहियों का प्रवेश।]

जहा०—महम्मद हथियार दे दो।

मह०—यह क्यों !

जहा०—तुम मेरे कैदी हो। सिपाहियो ! हथियार ले लो।

मह०—तो मुझे भी अपने सिपाहियोंको बुलाना पड़ा।

(सीटी बजाना।)

[दस शरीर-रक्षक सिपाहियोंका प्रवेश।]

मह०—मेरी फौज के हजार सिपाहियोंको बुलाओ।

जहा०—हजार सिपाही ! उन्हें किलेके भीतर किसने घुसने दिया ?

शाह०—मैंने। सब कसूर मेरा है। मैंने मुहब्बतके मारे, औरंगजेबने खतमें जो मुझसे माँगा था, सब उसे दिया था।—ओः मैंने ख्वाबमें भी यह नहीं सोचा था !—महम्मद !

मह०—बाबाजान !

शाह०—तो क्या अब मैं यही समझ लूँ कि मैं तुम्हारा कैदी हूं ?

मह०—कैदी तो नहीं हैं पर हाँ, आप बाहर नहीं जा सकते।

शाह०—मैं ठीक ठीक समझ नहीं सकता। यह क्या सच्चा वाकया है या यह सब ख्वाब देख रहा हूं ? मैं कौन हूं ? मैं शाहंशाह शाहजहाँ हूँ ? तुम मेरे पोते, मेरे सामने तलवार लिए खड़े हो ?—यह क्या है !—एक ही दिनमें क्या दुनियाका सब कायदा उलट गया ! एकदिन जिसकी गुस्सेसे लाल आँखें देखकर औरंगजेब

जमीन में धँस सा जाता था—उसके—उसके—बेटेके हाथोंमें—जहाँ शाहजहाँ कैदी है !—जहानारा !—कहाँ गई ! यह है ! यह क्या शाहजादी है ! तेरे होंठ हिल रहे हैं, मुँहसे आवाज नहीं निकलती; तू फीकी और सूखी नजरसे एकटक देख रही है; तेरे गुलाबी गालों पर स्याही फेर दी गई है ।—क्या हुआ बेटी !

जहा०—कुछ नहीं अब्बा !—लेकिन मेरे दिलकी हालत आप कैसे जान गये !—मैं सिर्फ यही सोच रही हूँ।

शाह०—महम्मद ! तुमने सोचा है कि मैं इस जालसाजी, इस जुल्मको—यहाँ इसी तरह बैठे बैठे किसी मददगारके न होनेसे चुपचाप सह लूँगा ! तुमने सोचा है, यह शेर बूढ़ा है, इसलिए तुम्हारी लातें सह लेगा ? मैं बूढ़ा शाहजहाँ हूं सही; लेकिन मैं शाहजहाँ हूं ।—ए कौन है ! ले आओ मेरा जिरह बक्तर और तलवार ।—क्या, कोई नहीं है ?

मह०—बाबाजान, आपके खास सिपाही किलेसे बाहर निकाल दिये गये हैं।

शाह०—किसने उन्हें निकाल दिया ?

मह०—मैंने ।

शाह०—किसके हुक्मसे ?

मह०—अब्बाके हुक्मसे । इस वक्त मेरे ये हजार सिपाही ही जहाँपनाहकी हिफाजतका काम करेंगे।

शाह०—महम्मद ! दगाबाज !

मह०—मैं सिर्फ अब्बाके हुक्मकी तामील कर रहा हूं । मैं और कुछ नहीं जानता ।

शाह०—औरंगजेब !—नहीं, आज वह कहाँ, और मैं कहाँ !—

जहानारा तब भी अगर, आज मैं इस किलेके बाहर जाकर एक-बार अपने सिपाहियोंके सामने खड़ा हो सकता, तो अब भी इस बूढ़े शाहजहाँकी जयजयकारसे औरंगजेब जमीनमें घुटने टेक देता।—एक दफा, सिर्फ एकदफा बाहर निकल पाता !—महम्मद ! मुझे एकदफा बाहर जाने दो !—एकदफा ! सिर्फ एकदफा !

मह०—बाबाजान, मेरा कसूर नहीं है। मैं अब्बाके हुक्मका पाबंद हूं।

शाह०—और मैं क्या तुम्हारे अब्बाका अब्बा नहीं हूं ? वह अगर अपने वालिद पर ऐसा जुल्म कर रहा है तो तुम क्यों फिर उसके हुक्मके पाबंद हो ! —महम्मद ! आओ ! किलेका फाटक खोल दो।

मह०—माफ कीजिएगा बाबाजान। मैं अब्बाके हुक्मको टाल नहीं सकता।

शाह०—न खोलोगे ? न खोलोगे ? देखो, मैं तुम्हारे बापका बाप--बीमार, लाग़र और जईफ़ हूं। मैं और कुछ नहीं चाहता। सिर्फ एक दफा इस किलेके बाहर जाना चाहता हूं। कसम खाता हूं, फिर लौट आऊंगा।—न जाने दोगे !—न जाने दोगे !

मह०—माफ कीजिएगा बाबाजान—यह मुझसे न हो सकेगा।

(जाना चाहता है।)

शाह०—ठहरो महम्मद ! (कुछ सोचनेके बाद राजमुकुट और पलँग परसे कुरान उठाकर।) देखो महम्मद ! यह मेरा ताज और यह मेरा कुरान है ! यह कुरान लेकर मैं कसम खाता हूँ कि बाहर जाकर सब रिआयाकी भीड़के सामने यह ताज मैं तुम्हारे सिर पर रख दूँगा। किसीकी मजाल नहीं जो चूँ करे। मैं आज बूढ़ा, लाग़र और

लकवेकी बीमारीसे लाचार जरूर हूँ। लेकिन बादशाह शाहजहाँ इतने दिनोंसे इसतरह हिन्दोस्तानकी सल्तनत करता आरहा है कि वह अगर एक दफा अपनी फौजके सिपाहियोंके सामने जाकर खड़ा हो सके, तो सिर्फ उसकी आग बरसानेवाली नजरसे ही सौ औरंगजेब खाक हो जायँ।—महम्मद! मुझे छोड़ दो। तुम हिन्दोस्तानकी बादशाहत पाओगे। कसम खाता हूँ महम्मद।—मैं सिर्फ इस दगाबाज जालसाज औरंगजेबसे एक दफा समझूँगा।—महम्मद!

मह०—बाबाजान, माफ कीजिएगा।

शाह०—देखो! यह लड़कोंका खेल नहीं है। मैं खुद बादशाह शाहजहाँ कुरान लेकर कसम खाता हूँ। देखो एक तरफ तुम्हारे अब्बाका हुक्म है, और एक तरफ हिन्दोस्तानकी बादशाहत है। इसी दम जो चाहे पसन्द कर लो।

मह०—बाबाजान, मैं अब्बाके हुक्मके खिलाफ कोई काम नहीं कर सकता।

शाह०—एक बादशाहतके लिए भी नहीं?

मह०—दुनियाभरकी बादशाहतके लिए भी नहीं।

शाह०—देखो महम्मद! सोच लो। अच्छी तरह सोच लो—हिन्दोस्तानकी सल्तनत—

मह०—मैं यहाँ खड़ा होकर अब यह बात नहीं सुनूँगा। यह लालच बहुत बड़ा है। दिल बड़ा ही कमजोर है। बाबाजान, माफ कीजिएगा।　　　　　　　　　　(प्रस्थान।)

शाह०—चला गया! चला गया! जहानारा! चुप क्यों है?

जहा०—औरंगजेब! तुम्हारा ऐसा सआदतमंद लड़का! वह अपने बापके हुक्मको माननेका फर्ज अदा करनेमें एक बड़ी भारी

सल्तनतको लात मार कर चला जाता है—और तुमने अपने बूढ़े बापको उसकी ऐसी मोहब्बतके बदलेमें धोखा देकर दगासे कैद कर लिया है !

शाह०—सच कहती है बेटी !--ऐ औलादवाले लोगो ! बिना खुद खाये अपने बेटोंको मत खिलाओ; इन्हें छातीसे लगा कर मत सुलाओ; इन्हें हँसानेके लिए प्यारकी हँसी मत हँसो। ये सब एहसान फरामोशीके पौधे हैं। ये सब छोटे छोटे शैतान हैं। इन्हें आधापेट खिलाओ। इन्हें रोज सबेरे शाम कोड़ोंसे मारो। हमेशा लाल लाल आँखें दिखाकर डाँटते रहो। तो शायद ये महम्मदकी तरह तुम्हारे ताबेदार और सआदतमंद होंगे। उन्हें यह सजा देनेमें अगर तुम्हारे कलेजेमें कसक हो तो तुम उस कलेजेके टुकड़े टुकड़े कर डालो; आँखोंमें आँसू आवें तो आँखें निकालकर फेंक दो; दुखसे चिल्लानेको जी चाहे तो दोनों हाथोंसे अपना गला घोंट लो।—ओः—

जहा०—अब्बा, इस कैदखानेके कोनेमें बैठकर लाचार बच्चों-की तरह रोने-खीझने-कुढ़नेसे कुछ न होगा; लात खाये हुए लूले आदमीकी तरह बैठकर दाँत पीसने और कोसनेसे कुछ न होगा; किसी मरते हुए गुनहगारकी तरह आखिरी वक्तमें एकदफा खुदा-को रहीम करीम कह कर पुकारनेसे कुछ न होगा। उठिए, चोट खाये हुए जहरीले नागकी तरह फन फैलाकर फुफकारते हुए उठिए; बच्चा छिन जाने पर बाघिन जैसे गरज उठती है वैसे ही गरज उठिए; जुल्मसे पागल हुई कौमकी तरह जाग उठिए। होनीकी तरह सख्त, हसदकी तरह अन्धे और शैतानकी तरह बेरहम बन जाइए। तब उससे पेश जायगा।

शाह०—अच्छी बात है ! ऐसा ही हो ! आ बेटी, तू भी मेरी

मददगार हो । मैं आगकी तरह जल उठूं, तू हवाकी तरह चल ! मैं भूचालकी तरह इस सल्तनतको उलटपुलटकर सत्यानाश कर दूँ, तू समंदरकी लहरोंको तरह आकर उसे डुबा दे । मैं जंग ले आऊँ; तू मरी ले आ ! आ तो; एकदफा इस सल्तनतको उथल-पुथल करके चल दें । फिर चाहे जहाँ जांय—कुछ हर्ज नहीं ! तोपकी तरह शोले उड़ाते हुए बलंद होकर आसमानमें छा जायँ ।

दूसरा अंक।

पहला दृश्य।

स्थान—मथुरामें औरंगजेबका पड़ाव।

समय—रात।

[दिलदार अकेला खड़ा है।]

दिल०—मुराद ! कैसे धीरे-धीरे सीढ़ी-सीढ़ी तुम गिरते जा रहे हो ! एक तो शराबके बहावमें बहे जा रहे हो ! फिर उस पर तवायफोंके नाज़ोअदा (हावभाव) का तूफान भी जोरोशोरसे जारी है। तुम जरूर डूबोगे । अब देर नहीं है। मुराद ! तुम्हें देखकर मुझे कभी कभी रंज हो आता है। तुम बहुत ही भोले हो। शाहजादीके कहने सुननेसे औरंगजेबको दगासे कैद करने गये थे। "पानीमें बस कर मगरमच्छसे दुश्मनी !"—आज उसके बदलेकी दावत है।—वह जहाँपनाह आगये !

[मुरादका प्रवेश।]

मुराद—भाई साहब अभीतक नमाज पढ़ते हैं !—उनकी जिन्दगी आकबत-अन्देशी (परलोकके ध्यान) में ही गुजरी। इस जिन्दगीका मजा उन्होंने कुछ भी न पाया।—दिलदार क्या सोच रहे हो !

दिल०—जहाँपनाह, सोच रहा हूँ कि मछलियोंके डैने न होकर अगर पंख होते, तो जान पड़ता है, शायद वे उड़ने लगतीं।

मुराद—अरे, मछलियोंके अगर पंख होते तो वे चिड़ियाँ ही न कहलातीं ? उन्हें कोई मछली कहता ही क्यों ?

दिल०—हाँ ठीक है। यह मैं पहले नहीं सोच सका था । इसीसे इस गड़बड़में पड़ गया । अब साफ समझमें आ रहा है ।—अच्छा जहाँपनाह, बत्तख ऐसे जानवर बहुत कम देख पड़ते हैं । वह पानी में तैरता है, जमीन पर चलता है, और आसमानमें भी उड़ता है ।

मुराद—उससे और मौजूदा दलीलसे क्या ताल्लुक है बेवकूफ !

दिल०—उस रहीम करीमने दोनों पैर नीचेके हिस्सेमें दिये थे चलनेके लिए, यह बात साफ जान पड़ती है ।

मुराद—हाँ साफ जान पड़ती है ।

दिल०—लेकिन पैर अगर सोचनेका काम करना शुरू कर दें तो दिमागको सही रखना मुश्किल हो जायगा ।—अच्छा जहाँपनाह, आप यह जानते हैं कि खुदाने जानवरोंको सिर सामने और पूँछ पीछे क्यों दी है ?

मुराद—अरे बेवकूफ ! अगर उनका सिर पीछे होता तो वही उनका सामनेका हिस्सा होता !

दिल०—ठीक कहा जहाँपनाह ।—कुत्ता दुम क्यों हिलाता है, इसका सबब मामूली नहीं है ।

मुराद—क्या सबब है ?

दिल०—कुत्ता दुम हिलाता है, इसका सबब यही है कि कुत्ते-में दुमसे ज्यादह जोर है । अगर दुममें कुत्तेसे ज्यादह जोर होता तो दुम ही कुत्तेको हिलाती ।

मुराद—हाः हाः हाः—वह देखो भाई साहब आ गये !

[औरंगजेबका प्रवेश ।]

औरंग०—तुम आगये भाई । अपने मसखरेको भी साथ लेते आये ।

मुराद—हाँ भाई साहब। दिलबस्तगीके लिए मसखरा भी चाहिए और तवायफ भी।

औरंग०—हाँ, जरूर चाहिए।—कल एकाएक बहुतसी नौजावान परीजमाल तवायफें आकर मौजूद हुईं। तुम जानते हो, मुझे तो यह शौक है नहीं। मैं तो अब मक्के शरीफको जा रहा हूं। मैंने सोचा, उनसे तुम्हारा दिलबहलाव हो सकता है। ये बहुत उम्दा शराबकी कई बोतलें भी मुझे फिरंगियोंसे मिल गई हैं।—भला देखो यह शराब कैसी है! (बोतलें देना।)

मुराद—देखूं! (पात्रमें डालकर पीना) वाह! तुरफा है! वाह! -दिलदार क्या सोच रहा है! जरासी पियेगा?

दिल०—जहाँपनाह, मैं एक बात सोच रहा था कि सब जानवर सामने ही क्यों चलते हैं?

मुराद—क्यों? पीछेकी तरफ नहीं चल सकते, इसलिये।

दिल०—नहीं। इसका सबब यह है कि उनकी दोनों आँखें सामनेकी तरफ हैं। लेकिन जो अंधे हैं, उनका सामने चलना और पीछे चलना बराबर है—एक ही बात है।

मुराद—तुरफा है! ये फिरंगी शराब बहुत अच्छी बनाते हैं। (फिर पीना) भाईसाहब, तुम भी जरासी पी लो।

औरंग०—नहीं। तुम तो जानते ही हो मुझे शराबसे परहेज है। कुरानमें शराब पीनेकी मनाही है।

दिल०—अंधो, जागो; देखो रात है या दिन!

मुराद—कुरानकी सभी हिदायतोंको माननेसे दुनियाका काम नहीं चल सकता। (मद्यपान।)

दिल०—हाथीमें जितना जोर है, उतनी ही अगर अक्ल भी होती तो वह कैसा आकिल जानवर होता । तब हाथीके ऊपर महाबत न बैठता, महाबतके ऊपर हाथी ही बैठता । इतनी ताकत–जो इतने बड़े जिस्मको मय सूँड़के लिये लिये घूमती फिरती है--ओः !

औरंग०--भाई, तुम्हारा मसखरा तो खूब दिल्लगीबाज है ।

मुराद--यह एक नायाब गौहर है ।—तवायफें कहाँ हैं ?

औरंग०--उस तम्बू में । तुम खुद हो जाकर बुला लाओ ।

मुराद—अभी लो । मुराद जंगमें या ऐशमें कभी पीछे नहीं हटता ।

(प्रस्थान ।)

(दिलदार "अन्धे, जागो" कहकर मुरादक पीछे जाना चाहता है और औरंगजेब उसे रोकता है ।)

औरंग०—ठहरो । तुमसे कुछ कहना है ।

दिल०—मुझे न मारो बाबा । मैं तख्त भी नहीं चाहता, मक्का भी नहीं चाहता ।

औरंग०—तुम कौन हो, ठीक कहो । तुम कोरे मसखरे नहीं हो । कौन हो तुम ?

दिल०—मैं एक पुराना गिरहकट, धोखेबाज चोर हूं । मेरी आदत है खुशामद, शरारत, जुआचोरी, पाजीपन । मैं सियारसे भी ज्यादा सयाना, कुत्तेसे भी ज्यादा खुशामदी और चिड़ियोंसे भी बढ़कर बुलहवस (लम्पट) हूं ।

औरंग०—सुनो, मुझे मसखरापन पसंद नहीं है । तुम क्या काम कर सकते हो ?

दिल०—कुछ नहीं कर सकता। जँभाई ले सकता हूं, अँगड़ाई ले सकता हूं, कोई काम कराओ तो उसे बिगाड़ सकता हूं, गालीगलोज दो तो उसे समझ सकता हूं —और —और कुछ नहीं कर सकता।

औरंग०—जानेदो,—समझ गया। मुझे तुम्हारी जरूरत होगी-कुछ डर नहीं है।

दिल०—भरोसा भी नहीं है।

[वेश्याओंके साथ फिर मुरादका प्रवेश।]

मुराद—वाहवाह!—ये हूरें!—तुरफा हैं!

औरंग०—तो तुम अब दिलबस्तगी करो। मैं जाता हूं। तुम्हारे मसखरेको भी लिये जाता हूं। इसकी बातोंमें मुझे बड़ा मजा आता है।

मुराद—क्यों! आता है न? कहता तो हूं, यह एक नायाब गौहर है। अच्छी बात है, इसे ले जाओ। मुझे इस वक्त इससे भी अच्छी सोहबत मिलगई है।

(दिलदारको लेकर औरंगजेबका प्रस्थान।)

मुराद—नाचो, गाओ।

नाचना-गाना।

[तर्ज—मजा देते हैं क्या यार, तेरे बाल घूंघरवाले।]

आये आये हैं हम यार, तुमको गले लगाने आये।
यह हुस्न, हँसी, यह गाना, जो कुछ है सो सब, जाना—
हम आज तुम्हें मनमाना, देंगे देंगे कर मन भोय॥ आये०॥
चरनोंमें फूल चढ़ायें, यह हार गलेमें पिन्हायें,
बन दासी तुम्हें रिझायें, अब तो सुखके बादल छाये॥ आये०॥
ये ओठ अमृतके प्याले, पीले पीले यार मजा ले।

सीनेसे खींच लगा ले, पूरा अर्मां बस हो जाये ॥ आये० ॥
तन मन धन जीवन सारा, हमने तुम पर है वारा ।
हसरत सुख, प्यार हमारा, तुममें पूरा बस हो जाये ॥ आये० ॥
यह हवा चमनसे आती, खुश करती, खुशबू लाती ।
वह जमना भी लहराती, अपना सुन्दर रूप दिखाये ॥ आये० ॥
'पी कहाँ' पपीहा गाता, वह मीठी तान सुनाता ।
मन लोट पोट हो जाता, ऐसी खिली चाँदनी पाये ॥ आये० ॥
इस खिली चाँदनीहीमें, मर जायँ अगर तो जीमें–
दुख होगा नहीं; उसीमें मरना जन्नतसे बढ़ जाये ॥ आये० ॥
तेरे कदमोंमें ही रहना, तुझ पर मरकर तुझको चहना ।
मुतलक झूठ नहीं यह कहना, इसके सिवा न कुछ मन भाये ॥आये०॥
पड़ रहें नजरके नीचे, यह चाह यहां तक खींचे–
लाई है आंखें मींचे, हमको, बने न बिन अपनाये ॥ आये० ॥
कर दो सर्फराज तो आज, बस यह जबान चुप हो आज ।
प्यारे आशिकके सरताज, दिलवर दिलसे दिल मिल जाये ॥ आये० ॥

(गान सुनते सुनते मुरादका मद्यपान और धीरे धीरे आँखें बंद कर लेना । वेश्याओंका प्रस्थान ।)

[सिपाहियों सहित औरंगजेबका प्रवेश ।]

औरंग०—बाँध लो !

मुराद—(चौंककर) कौन ? भाई ! यह क्या ! दगाबाजी ? (उठना ।)

औरंग०—अगर हाथ पैर हिलावे तो कत्ल कर डालो !–छोड़ो मत ! (सिपाही मुरादको कैद कर लेते हैं ।)

औरंग०—इसे आगरे ले जाओ । मेरे शाहजादे महम्मद सुल-

तान और शायस्ताखाँके हवाले कर देना। मैं रुक्का लिखे देता हूं।

मुराद—इसका बदला पाओगे—मैं तुमसे समझ लूंगा।

औरंग०—ले जाओ।

(हिरासतकी हालतमें मुरादका प्रस्थान।)

औरंग०—मेरा हाथ पकड़कर मुझे कहाँ लिये जा रहे हो ? या खुदा ! मैं यह तख्त नहीं चाहता था। तुम्हींने हाथ पकड़कर मुझे इस तख्त पर बिठाया है। क्यों—यह तुम्हीं जानो।

दूसरा दृश्य।

स्थान—आगरेके किलका शाही महल।

समय—प्रातःकाल।

[अकेले शाहजहाँ।]

शाह०—सूरज निकल आया; वैसा ही, जैसा चमकीला और सुर्ख रंगका हमेशा निकला करता है। आसमान वैसा ही नीला है; यह जमना उसी तरह इठलाती—बल खाती हुई अपनी पुरानी चालसे कलोलें करती बह रही है; उस पारके दरख्तोंका नीला रंग वैसा ही देख पड़ रहा है। सब कुछ वैसा ही है जैसा कि मैं बचपनसे देखता आ रहा हूं। सिर्फ मैं ही बदल गया हूं। (विषादके स्वरमें) मैं आज अपने ही बेटेकी हिरासतमें हूँ। मैं आज औरतोंकी तरह लाचार और बच्चोंकी तरह कमजोर हूँ। बीच बीचमें गुस्सेसे गरज उठता हूँ, लेकिन यह बे मौसिमके बादलका गरजना—फजूलका हाय हाय करना है। इस तरह कुढ़कुढ़कर मैं आप भीतर ही भीतर घुलता जारहा हूँ। ओः ! हिन्दोस्तानके बादशाह शाहजहाँकी आज

यह कैसी हालत ! (एक खंभे पर हाथ टेककर यमुनाकी ओर एकटक देखना)–यह कैसी आवाज है ! यह ! फिर ! फिर !—यह कौन ? जहानारा !

[जहानाराका प्रवेश ।]

शाह०—जहानारा यह कैसा शोरगुल है ? यह फिर !--सुना (उत्सुक भावसे) क्या दारा अपनी फौज और तोपें साथ लिए फतहयाब होकर आगरे लौट आया है ? आओ बेटा ! इस बेइन्साफी, बेदर्दी और जुल्मका बदला लो ।—क्यों जहानारा ! आँखें क्यों मूँद लीं ! समझी बेटी—यह दाराकी फतहयाबीकी खुशखबरी नहीं है--यह और एक बुरी खबर है । ठीक है न ?

जहा०—हाँ अब्बाजान !

शाह०—मैं जानता हूँ, बदनसीबी अकेली नहीं आती; अपने साथ नई नई आफतें भी ले आती है । जब आफतोंका सिलसिला शुरू हुआ है तब वह अपना पूरा जोर दिखाये बिना नहीं रह सकता । क्यों बेटी, कौनसी बुरी खबर है ! यह कैसा शोर गुल है !

जहा०—औरंगजेब आज बादशाह होकर दिल्लीके तख्त पर बठा है । आगरेमें आज उसीका जलसा है—उसीका यह शोरोगुल है ।

शाह०—(जैसे सुना ही नहीं, इस ढंगसे) क्या ! औरंगजेब—उसने क्या किया ?

जहा०—वह आज दिल्लीके तख्त पर बैठा है ।

शाह०—जहानारा तू क्या कह रही है ! मैं जिन्दा हूँ, या मर गया औरंगजेब—नहीं—गैर मुमकिन है ! जहानारा तेरे सुननेमें भूल हुई है । यह कहीं हो सकता है ! औरंगजेब—औरंगजेब यह काम नहीं कर सकता । उसका बाप अभीतक जीता है ।—उसमें

क्या कुछ भी समझदारी बाकी नहीं रही ? क्या उसकी आँखोंमें कुछ भी दुनियाकी शर्म नहीं है ?

जहा०—(काँपते हुए स्वरमें) जो शख्स बूढ़े बापको दगामें कैद कर सकता है—उसे 'जिन्दादरगोर' बना सकता है—वह और क्या नहीं कर सकता !

शाह०—तो भी—नहीं। होगा।— ताज्जुब क्या है ! ताज्जुब क्या है !—यह क्या ! जमीनसे काला धुआँ निकलकर आसमानको चढ़ रहा है। आसमान स्याह होगया ! शायद दुनिया उलटपुलट गई।—यह यह ! नहीं, क्या मैं पागल हुआ जा रहा हूँ !—यह तो वही नीला आसमान है, वैसा ही साफसुथरा सुहावना सबेरेका वक्त है ! कुछ भी तो नहीं हुआ।—ताज्जुब ! (कुछ चुप रहकर) जहानारा !

जहा०—अब्बा !

शाह०—(गद्गद्स्वरसे) तू बाहर क्या देख आई !— दुनियाका काम क्या ठीक उसी तरह चल रहा है ! माएँ अपनी औलादोंको दूध पिला रही हैं ? औरतें अपने शौहरोंका घर देख रही हैं ? नौकर मालिकोंकी खिदमत कर रहे हैं ? लोग फकीरोंको भीख दे रहे हैं ? देख आई—कि इमारतें वैसी ही खड़ी हैं ! रास्तेमें लोग चल रहे हैं ! आदमी आदमीको खा नहीं जाता !—देख आई ! देख आई !

जहा०—अब्बाजान कमीनी दुनिया उसी तरह अपना काम कर रही है। कैदी शहाजहाँका खयाल किसीको नहीं है।

शाह०—हाँ ?—सचमुच ?—वे यह नहीं कहते कि यह बड़ा भारी जुल्म है ? वे यह नहीं कहते कि हमारे प्यारे रहमदिल गरीबपरवर शाहजहाँको किसकी मजाल है, कि कैद कर रक्खे ? वे चिल्लाकर यह

नहीं कहते कि हम बगावत करेंगे, औरंगजेबको पकड़कर कैद कर लेंगे, आगरेके किलेका फाटक तोड़कर अपने शाहजहाँको लाकर फिर तख्तपर बिठावेंगे !—यह नहीं कहते ? नहीं कहते ?

जहा०—नहीं अब्बा ! दुनिया किसीके लिए नहीं सोचती। सबको अपनी अपनी पड़ी है। वे अपने ख्यालमें ऐसे डूबे हुऐ हैं कि कल अगर सूरज न निकले, एक जबर्दस्त आग आसमानको जलाती हुई सूरजकी जगह दौरा करने लगे, तो वे उसीकी लाल रोशनीमें पहलेकी तरह अपना अपना काम करते जायँगे।

शाह०—अगर मैं एक दफा रिहाई पाकर किलेके बाहर जा सकता।—जहानारा मौका नहीं मिलता ? सिर्फ एक दफा तू छिपाकर मुझे किलेके बाहर ले चल सकती है ?

जहा०—नहीं अब्बा ! बाहर हजारों हथियारबंद सिपाही पहरा दे रहे हैं।

शाह०—तब भी कुछ हर्ज नहीं।—एक दिन वे मुझे ही अपना बादशाह मानते थे। मैंने कभी उनसे बुरा बरताव नहीं किया। उनमें बहुतसे ऐसे होंगे जिन्हें रोजी देकर मैंने भूखों मरनेसे बचाया होगा—आफतोंसे छुड़ाया होगा—कैदसे रिहाई दी होगी। बदलेमें—

जहा०—नहीं अब्बा !—इन्सान खुशामदी कुत्तेकी तरह खुशामदी होता है।—जो गोश्तका एक छीछड़ा दे सकता है उसीके पैरोंके पास खड़े होकर वह दुम हिलाने लगता है।—इतना कमीना है ! इतना नालायक है !

शाह०—तो भी मैं अगर एक दफा उनके पास जाकर खड़ा हो जाऊँ ?—इन सफेद बालोंको बिखेरकर, कमजोरीसे काँपता हुआ

मैं अगर जरीबका सहारा लेकर उनके आगे खड़ा हो जाऊँ ? उन्हें तरस न आवेगा ? रहम न आवेगा ?

जहा०—अब्बा, अब दुनियामें तरस और रहमका नाम नहीं रहा। खौफने उन्हें तहस-नहस कर डाला। जो लोग बढ़तीके जमानेमें 'जय बादशाह शाहजहाँको जय' के नारेसे आसमानको हिला देते थे, वे ही अगर आज आपकी इस जईफ मरीज मजबूर सूरतको देखें तो इस मुंह पर थूक देंगे—और अगर मेहरबानी करके न थूकेंगे तो नफरतके साथ मुंह फेर कर चले जायँगे।

शाह०—ऐसी बात ! ऐसी बात !—(गंभीर स्वरसे) अगर आज दुनियाकी यह हालत है तो जरूर एक बड़ी भारी बला उसकी रग रगमें फैल गई है। तो फिर देर क्याहै ? या खुदा ! अब उसे नेस्तनाबूद कर दो ! अभी गला घोट कर उसे मार डालो ! अगर ऐसा ही है तो ऐ आसमान ! अभीतक तेरा रंग नीला क्यों है ! सूरज ! तू अभीतक आसमानके ऊपर क्यों है ! बेहया ! नीचे उतर आ ! एक बड़े भारी तूफान में तू चूरचूर हो जा ! भूचाल ! तू हुमक कर इस जमीनकी छाती फाड़कर इसके टुकड़े टुकड़े उड़ा दे ! ऐ आग ! तू भभक कर तमाम दुनियाको खाकमें मिला दे ! और, क्या ही अच्छा हो अगर भारी आँधी आकर वही खाक खुदा के मुंह पर डाल आवे !

तीसरा दृश्य ।

स्थान—राजपूतानाकी मरुभूमिका एक किनारा ।

समय—दिन–दोपहर ।

[पेड़के तले दारा, नादिरा और सिपर बैठे हैं ।—

पास ही जोहरत-ऊनिसा सोरही है ।]

नादिरा—प्यारे शौहर अब नहीं चला जाता !–यहीं जरा आराम करो ।

सिपर—हाँ अब्बा । ओः कैसी प्यास लगी है !

दारा—आराम ! नादिरा, इस दुनियामें हमारे लिये आराम नहीं है ! यह ऊपर मदान देखती हो—जिसे हम अभी तय करके आये हैं !—देखती हो नादिरा !

नादिरा—देखती हूं—ओः—

दारा—हमारे पीछे जैसा उजाड़ ऊसर है, हमारे सामने भी वैसा ही उजाड़ ऊसर है ।—पानी नहीं है, छाँह नहीं है, किनारा नहीं है–साँय साँय कर रहा है !

सिपर—अब्बा बड़ी प्यास लगी है–जरासा पानी !

दारा—बेटा पानी यहां नहीं है !

सिपर—अब्बा ! पानी ! पानी न मिलेगा तो मैं मर जाऊँगा ।

दारा—(गुस्से से) हूं !

सिपर—ओः ! पानी ! पानी !

नादिरा—देखो प्यारे, कहीं अगर जरासा पानी मिल सके, तो लाओ । बच्चा बेहोश हुआ जा रहा है । प्यासके मारे मेरा भी कलेजा मुह को आ रहा है ।—

दारा—क्या सिर्फ तुम्हीं लोगोंका यह हाल है नादिरा ! प्यास-

से मेरा गला नहीं सूख रहा है ? तुमको सिर्फ अपना ही खयाल है।

नादिरा—प्यारे मैं अपने लिये नहीं कहती !—यह बेचारा—अहा—

दारा—मेरे भी कलेजेके भीतर एक आग लगी हुई है !—धाँय धाँय जल रही है। उस पर इस बेचारे बच्चेका सूखा हुआ मुंह देख रहा हूं—मुँहसे बात नहीं निकलती—देखता हूं—और नादिरा क्या तुम समझती हो कि मेरे दिल पर सदमा नहीं पहुंचता ! लेकिन क्या करूं—पानी नहीं है। कोसभर के भीतर पानीकी बूँद भी नहीं है नामोनिशान नहीं है।—ओः ! किस हालतमें मुझे डाल रक्खा है ! मेरे खुदा ! अब नहीं सहा जाता।

सिपर—अब्बा अब नहीं रहा जाता !

नादिरा—आहा मेरे बच्चे—मैं तुझपरसे कुर्बान हो जाऊँ—अब नहीं सहा जाता।

दारा—मरो—मरो-तुम सब मरो—मैं भी मरूँ-आज यहीं हम सबका खातमा हो जाय।-हो जाय-यहीं हो जाय !

सिपर—अम्मी-ओः बोला नहीं जाता। कैसी बचैनी है अम्मी !

नादिरा—ओः कैसी बेचैनी है !

दारा—नहीं, अब देखा नहीं जा सकता। मैं आज खुदासे बदला लूँगा ! उसकी इस सड़ी हुई थोथी दुनियाँको काटकर उसकी भारी बईमानी जाहिर कर दिखाऊँगा। मैं मरूँगा ! लेकिन उससे पहले अपने हाथसे तुम सबको कत्ल कर डालूँगा ! तुमको मारकर मरूँगा !— (कटार निकालना।)

सिपर—अम्मीको मत मारो-मुझे मार डालो !

नादिरा—ना ना-मुझे पहले मारो ! मेरे देखते तुम बच्चेको

छाती में कटार न मारने पाओगे ।–मुझे पहले मारो ।

सिपर—नहीं, अब्बा मुझे पहले मारो !

दारा—यह क्या मेरे अल्लाह !–यह फिर–बीचबीचमें क्या दिखाते हो ! गहरे अँधेरेके बीचमें यह कैसी रोशनीकी झलक है ! या खुदा ! या रहीम ! तुम्हारे पैदा किये हुए इन्सान ऐसे खूबसूरत. लेकिन ऐसे जल्लाद हैं !–इन मा-बेटोंका एक दूसरेको बचानेके लिये यह रोना-मगर तो भी कोई किसीको बचा नहीं सकता ।–इतने जबर्दस्त, लेकिन इतने कमजोर । इतने ऊँचे, लेकिन इतने नीचे गिरे हुए !–यह रोना नहीं, आसमानसे पाकसाफ मोतियोंकी बारिश है । यह बहिश्त और दोजख एक साथ !–मेरे खुदा यह कैसी पहेली है !

सिपर—अब्बा अब्बा—ओः (गिर पड़ना ।)

नादिरा—मेरा बच्चा ! (जाकर गोदमें उठा लेना ।)

दारा—यह फिर वही दोजख है ! ना–ना–ना–यह रोशनीका वहम है ! यह शैतानी है ! यह दगा है ! अँधेरेकी ताकत दिखानेके लिये यह एक जलता हुआ अंगारा है ! कुछ नहीं । मैं तुम सबका कत्ल करूँगा !–फिर खुदकुशी करूँगा–! (जोहरतकी ओर देखकर) वह सो रही है । उसको भी मारूँगा । उसके बाद—तुम लोगों की लाशोंसे लिपट कर मैं भी जान दे दूँगा ।—आओ एक एक करके मेरे सामने लाओ ।

(नादिराको मारनेके लिये कटार खींचना ।)

सिपर—(होशमें आकर) मत मारो, मत मारो ।

दारा—(सिपरको एक हाथसे दूर हटाकर कटार मारनेको तैयार होकर) मरनेके लिये तैयार हो जाओ ।

नादिरा—मरनेसे पहले हमें जरा इबादत कर लेने दो ।

दारा—इबादत !-किसकी ? खुदाकी ? खुदा नहीं है। सब ढोंग है! धोखेबाजी है ! खुदा नहीं है ।-कहाँ है !-कहाँ है !-कौन कहता है, खुदा है ! है ? अच्छा ! करो इबादत ।

नादिरा—आ बच्चे, मरनेसे पहले खुदाकी याद कर लें ।

(दोनों, घुटने टेककर आँखें मूँद लेते हैं ।)

नादिरा--मेरे खुदा ! मेरे रहीम ! बड़े दुखमें आज तुम्हें पुकार रही हूँ ! मालिक ! दुख दिया, अच्छा किया । तुम जो दोगे, उसे हम सिर आँखों से कुबूल करेंगे ! तो भी-तो भी-मरते वक्त अगर लड़की-लड़के और प्यारे शौहरको खुश देखकर मर सकती ।—

दारा—(देखते ही देखते सहसा घुटने टेककर) या खुदा ! तुम शाहोंके शाह हो ! तुम नहीं हो तो इतने बड़े इस दुनियाके कारखानेको चलाता कौन है ! कहाँ से वह कायदा आया कि जिसके जोरसे ऐसी दो पाक चीजें दुनिया में देख पड़ती हैं-मा और औलद !—या खुदा ! तुमको मैंने अक्सर याद किया है; लेकिन ऐसे दुखमें, ऐसी आजिजीसे, कलेजा थाम कर, और कभी नहीं पुकारा । या रहीम ! अपने बंदोंको बचाओ ।

[गऊ चरानेवाले एक मर्द और औरतका प्रवेश ।]

मर्द—तुम कौन हो ?

दारा—यह किसकी आवाज है ! (आँखें खोलकर) तुम लोग कौन हो ?-जरा सा पानी, जरा सा पानी दो !-मुझे न दो-इस औरत और—इस बच्चे को दो-

स्त्री—हाय हाय, बेचारे तड़प रहे हैं ! मैं अभी पानी लाती हूं । तनिक धीरज धरो भया !

(प्रस्थान ।)

मर्द—हाय हाय, बच्चेको साँस लेना कठिन हो रहा है !

दारा—जोहरत ! जोहरत ! मर गई ।

मर्द—नहीं अभी मरी नहीं है । कैसी प्यारी लड़की है !

दारा—जोहरत !

जोहरत—(क्षीणस्वरसे)अब्बा !

[ग्वालिनका प्रवेश । जल देना । सबका जल पीना ।]

स्त्री—आओ भैया, हमारे घर चलो ।

मर्द—आओ भैया !

दारा—तुम कौन हो ! तुम क्या कोई फरिश्ते या देवता हो !—तुम्हें खुदाने भेजा है ?

मर्द—नहीं भैया, मैं एक चरवाहा हूं !—यह मेरी स्त्री है ।

दारा—तुममें इतनी मुहब्बत, इतनी मेहरबानी है ! इन्सानमें इतना रहम ! आदमी में इतनी हमदर्दी ! यह भी क्या मुमकिन है !

मर्द—क्यों भैया ! तुमने क्या कभी कोई आदमी नहीं देखा ? तुम हमेशा शैतानोंहीको देखते रहे हो ?

दारा—यही क्या ठीक है ? वे सब क्या शैतान ही हैं ?

स्त्री—यह तो आदमीहीका काम है भैया । अनाथको आश्रय देना, भूखेको खिलाना, प्यासेको पानी पिलाना—यह तो आदमीहीका काम है भैया । केवल शैतानही ऐसा न करेगा ।—पर मुझे यह बिश्वास नहीं कि कभी कभी ऐसा करनेको शैतानका भी जी न चाहता हो—आओ भैया !

(सब जाते हैं ।)

चौथा दृश्य ।

स्थान—मूंगेरके किलेका महल ।

समय—चाँदनी रात ।

[पियारा टहल-टहलकर गा रही है ।]

आनन्दभैरवी । ठेका धमार ।

उलटा हुआ सारा काम ।
घर बसाया चैनको, जाना न था अंजाम ।
आगसे वह जल गया, बस मैं रही नाकाम ॥ उलटा० ॥
अमृत-सागरमें गई, गोता लगाया जाय ।
विष हुआ तकदीरसे मेरे लिए वह हाय ! ॥ उलटा० ॥
भाग कैसे हैं, कहूँ क्या, ए सखी, सुन बात ।
चाँद चिनगारी बरसता कर रहा उतपात ॥ उलटा० ॥

(शुजाका प्रवेश ।)

शुजा—तुम यहाँ हो । उधर मैं तुम्हें न जाने कहाँ कहाँ ढूंढ़ आया ।

(पियारा गाती है ।)

छोड़ नीचेको चढ़ी ऊँचे बढ़ाकर पाँव ।
अगम पानीमें गिरी कोई चला न दाव ॥ उलटा०॥

शुजा—उसके बाद तुम्हारी आवाज सुननेसे मालूम हुआ कि तुम यहाँ हो ।

(पियारा गाती है ।)

चाह लछमीकी मुझे थी आह जीके साथ ।
पासका भी रत्न खो, आई गरीबी हाथ ॥ उलटा० ॥

शुजा—बात सुनो—आः—

(पियारा गाती है ।)

प्यास की मारी गई, मैं मेहके जो पास ।
गिर पड़ी बिजली, न पूरी हुई मेरी आस ॥ उलटा० ॥

शुजा—सुनोगी नहीं ? तो मैं जाता हूँ ।

(पियारा गाती है ।)

ज्ञानदास कहे कन्हाईकी, मुझे यह प्रीत ।
मरनसे भी अधिक दुखदा, हुई, उलटी रीत ॥

शुजा—आः हैरान कर डाला ! मैं तो यही कहूँगा कि दुनियामें कोई मर्द दुबारा ब्याह न करे। दूसरी जोरू खसमके सिर पर सवार होती है। अगर तुम पहली जोरू होतीं तो क्या तुम्हें एक बात सुनानेके लिए मुझे इतनी मिन्नतें करनी पड़तीं !—

पियारा—आः मेरा ऐसा अच्छा गाना मिट्टी कर दिया ! मैं तो यही कहूँगी कि दुनिया में कोई औरत उस मर्द के साथ शादी न करे, जिसकी एक जोरू मर चुकी हो। यह बात अगर न होती तो तुम आकर मेरा ऐसा अच्छा गाना मिट्टी कर देते ! आः परेशान कर डाला। दिन-रात जंगकी ही खबर सुननी पड़ती है। फिर तुम न जानते हो कवायद (व्याकरण), न समझते हो गाना। परेशान कर डाला !

शुजा—यह तुमने कैसे जाना कि मैं गाना नहीं समझता !

पियारा—ऐसा अच्छा गाना ! आहाहाहा !

शुजा—अपने गानेमें आप ही मस्त हो रही हो !

पियारा—क्या करूं, तुम तो समझते ही नहीं। इसीसे गानेवाला और सुननेवाला मैं ही हूं।

शुजा—गलत है। गानेवाला—सुननेवाला नहीं, गानेवाली—

सुननेवाली होगा।

पियारा—(सिटपिटाकर) तभी तो, तुमने सब मिट्टी कर दिया।

शुजा—इस वक्त बात यह कहनी है कि सुलेमान मूंगेरका किला छोड़ कर चला गया है। क्यों, जानती हो ?

पियारा—(अनसुनीकरके) वही तो !

शुजा—उसके बाप दाराने उसे बुला भेजा है। लेकिन इधर —

पियारा—(उसी भावसे) महावरा ठीक है। कवायद की गल्ती नहीं है।

शुजा—अरे सुनो, दाराने दोनों बार औरंगजेबसे शिकस्त खाई है।

पियारा—(उसी भावसे) मैंने गलत नहीं कहा।

शुजा—तुम बात नहीं सुनोगी ?

पियारा—पहले यह मान लो कि मुझसे कवायदकी गल्ती नहीं हुई।

शुजा—जरूर गलती हुई है।

पियारा—गलती बिलकुल नहीं हुई।

शुजा—चलो, किससे पूछोगी, पूछो।

पियारा—देखो, मैं कहती हूँ, आपसमें समझौता कर लो, नहीं तो मैं इसके लिए गजब ढादूँगी। रात भर चिल्लाऊँगी और देखूंगी कि देखूं तुम कैसे सोते हो। आपसमें समझौता कर लो।

शुजा—तो फिर मेरी बात सुनोगी ?

पियारा—हाँ सुनूँगी।

शुजा—तो तुमने गलती नहीं कहा।—खासकर इस लिए कि तुम मेरी दूसरी बीबी हो। अब सुनो, खास बात है। बेढब मामला

है ! तुमसे सलाह पूछता हूँ ।

पियारा—सलाह ! अच्छा ठहरो, मैं तैयार हो चलूँ । (चेहरा और पोशाक ठीक करके ।) यहाँ कोई ऊँची जगह भी नहीं है । अच्छा, खड़े खड़े ही सुनूँगी । कहो । मैं तैयार हूँ ।

शुजा—मुझे यकीन है कि अब अब्बा इस दुनियामें नहीं हैं ।

पियारा— मेरा भी ऐसा ही ख्याल है ।

शुजा—जयसिंहने मुझे जो बादशाहके दस्तखत दिखाये थे— सो सब दाराका जाल था ।

पियारा—जरूर ही—

शुजा—मानती हो ?

पियारा—मानती मैं कुछ नहीं । कहते जाओ ।

शुजा—दूसरी लड़ाईमें भी औरंगजेबसे दाराने शिकस्त खाई, यह तुमने सुना ?

पिया०—हाँ सुना है !

शुजा—किससे सुना ?

पिया०—तुमसे ।

शुजा—कब ?

पिया०—कभी !

शुजा—दारा आगरा छोड़ कर भाग गये । और औरंगजेबने फतह पाकर आगरेमें जाकर अब्बाको कैद कर लिया है । उसने मुराद को भी हिरासत में रख छोड़ा है ।

पियारा—हूँ !

शुजा—औरंगजेब अब मुझसे लड़ेगा ।

पियारा—मुमकिन है ।

शुजा—और औरंगजेबसे अगर मेरी लड़ाई होगी तो वह लड़ाई बड़ी भारी होगी ।

पियारा—इसमें क्या शक है !

शुजा—मुझे उसके लिए अभीसे तैयार हो जाना चाहिए।

पियारा—जरूरी बात है !

शुजा—लेकिन—

पियारा—मेरी भी ठीक यही सलाह है । लेकिन—

शुजा—तुम क्या कह रही हो—मेरी समझ में नहीं आता।

पियारा—सच तो यह है कि उसे मैं भी बहुत अच्छी तरह नहीं समझ रही हूँ ।

शुजा—जाने दो, तुमसे सलाह माँगना ही बेकार है ।

पियारा—बिलकुल ।

शुजा—लड़ाईका मामला तुम क्या समझोगी ?

पियारा—मैं क्या समझूँगी !

शुजा—लेकिन इधर और एक मुश्किल आ पड़ी है।

पियारा—वह मुश्किल कैसी है ?

शुजा—मुहम्मदने तो मुझे साफ लिख दिया है कि वह मेरी लड़की से शादी नहीं करेगा ।

पियारा—ठीक तो है ; वह कैसे करेगा !

शुजा—क्यों नहीं करेगा ! मेरी लड़की से उसकी मँगनी पक्की होगई है। अब बदलनेसे कैसे काम चल सकता है !

पियारा—या अल्लाह, सचमुच कैसे चल सकता है !

शुजा—लेकिन अब वह ब्याह करनेको राजी नहीं है ।

पियारा—ठीक तो है; कैसे राजी होगा !

शुजा—लिखा है, मैं अपने बाप के दुश्मनकी लड़कीसे शादी नहीं करूँगा।

पियारा— कैसे करेगा!

शुजा—लेकिन इधर इससे मेरी लड़कीको बड़ा सदमा पहुँचेगा।

पियारा—सो तो पहुँचेहीगा! क्यों न पहुँचेगा!

शुजा—मैं क्या करूँ—कुछ समझमें नहीं आता।

पियारा—मेरा भी यही हाल है।

शुजा—अब क्या किया जाय!

पियारा—हाँ, क्या किया जाय!

शुजा—तुमसे कोई मतलब की बात पूछना बेकार है।

पियारा—समझ गये।—कैसे समझ गये! हाँजी कैसे समझ गये! तुम बड़े समझदार हो!

शुजा—अब क्या करूँ? औरंगजेबसे लड़ाई! उसके साथ उसका बहादुर बेटा महम्मद है। सोचने की बात है। इसीसे सोच रहा हूं। तुम क्या सलाह देती हो?

पियारा—प्यारे! मेरा कहा सुनोगे? सुनो तो कहूँ।

शुजा—कहो, सुनूँ।

पियारा—तो सुनो। मैं कहती हूँ, लड़नेकी जरूरत नहीं है।

शुजा—क्यों?

पियारा—सल्तनत लेकर क्या होगा? हमें काहेकी कमी है? देखो, यह बंगालकी हरी-भरी धरती, तरह तरहके फूलों, चिड़ियों और खूबसूरतियोंकी बहार। काहेकी सल्तनत! मैं तुमको अपने दिल के तख्त पर बैठाकर पूज रही हूँ; उसके आगे तख्तताऊस क्या चीज

है ! जब हम इस महलके ऊपर वाले बरामदेमें खड़े होते हैं–एक दूसरे के गलेसे गला होता है–हाथमें हाथ होता है–हम तरह तरह की चिड़ियोंकी बोलियाँ सुनते हैं–दूरतक फैली हुई यह गंगाकी धारा देखते हैं–इस दूरतक फैले हुए नीले आसमानके ऊपर हम दोनों अपनी शामिल और खुश नजरोंकी नाव बढ़ाते चले जाते हैं–उस नीले रंग के एक सुनसान किनारे पर एक तरहकी खामोशी और खुशी की फर्जी जगह मानकर, उसमें एक ख्वाबेगफलतके कुंजमें बैठकर, एक दूसरे की तरफ एकटक देखते हैं–दिलसे दिल मिलनेका मजा लूटते हैं–तब क्या तुम्हें यह नहीं जान पड़ता प्यारे कि यह सल्तनत कोई चीज नहीं है ? प्यारे ! यह लड़ाई अच्छी नहीं । हो सकता है कि हमारे पास जो नहीं है वह भी हम न पावें, और जो है वह भी चला जाय ।

शुजा—इसीसे तो तुमने और भी सोचमें डाल दिया !—सोचते सोचते मेरा सिर फिर ही रहा था, उस पर—नहीं, बल्कि दाराकी हुकूमत मैं मान भी सकता था । औरंगजेबकी—अपने छोटे भाईकी—हुकूमत, कभी मंजूर न करूंगा । नहीं—कभी नहीं । (प्रस्थान ।)

पियारा—तुमसे कुछ कहना बेकार है ! तुम बहादुर हो !—सल्तनतके लिए शायद तुम लड़ते भी नहीं, मगर लड़नेके लिए लड़ोगे । तुमको मैं खूब पहचानती हूँ—लड़ाईका नाम सुनकर तुम नाच उठते हो ।

पाँचवाँ दृश्य ।

स्थान—दिल्लीका शाही दरबार ।

समय—प्रातःकाल ।

[सिंहासन पर औरंगजेब बैठे हैं । उनके पास मीर जुमला, शायस्तखाँ इत्यादि सेनापति, मन्त्रीगण, जयसिंह और शरीररक्षक लोग उपस्थित हैं । सामने राजा जसवंतसिंह खड़े हैं ।]

जसवन्त—जहाँपनाह ! मैं आया था—सुल्तान शुजाके विरुद्ध युद्ध करनेमें आपको अपनी सेनासे सहायता देने । पर यहाँ आकर अब वह मेरा विचार बदल गया—अब सहायता देनेको जी नहीं चाहता । मैं आज ही जोधपुरको लौटा जा रहा हूँ ।

औरंग०—महाराज जसवन्तसिंह ! आपने नर्मदाकी लड़ाईमें दाराकी मदद की थी, मगर इसके लिए मैं आपसे नाखुश नहीं हूँ । महाराजकी खैरख्वाहीका सुबूत मिलने पर हम महाराजको अपना दियानतदार दोस्त समझेंगे ।

जसवन्त—जहाँपनाह प्रसन्न हों या अप्रसन्न, इससे जसवन्त-सिंहका कुछ बनता-बिगड़ता नहीं ! और मैं आज इस दरबारमें जहाँपनाहसे दयाकी भीख माँगने नहीं आया हूँ ।

औरंग०—तो फिर महाराजके यहाँ आनेका और क्या मतलब है ?

जसवन्त—मैं आपसे एक बार यह पूछने आया हूँ कि किस अपराध से हमारे दयालु सम्राट् शाहजहाँ कैद हैं; और किस अधि-कार से आप उनके—अपने पिताके—रहते उनके सिंहासन पर बैठे हैं ।

औरंग० इसकी कैफियत क्या आज मुझे महाराजको देनी होगा!

जसव०—दें न दें, आपकी इच्छा ! मैं केवल आपसे पूछने आया हूँ ।

औरंग०—किस मतलबसे ?

जसवन्त—जहाँपनाह का उत्तर सुनकर मैं अपना कर्तव्य निश्चित करूंगा ।

औरंग०—कैसे ! अगर मैं कैफियत न दूँ तो ?

जसव०—तो समझूँगा कि देनेके लिये जहांपनाहके पास कुछ कैफियत ही नहीं है।

औरंग०—आप जो चाहे समझें; उससे हमारा कुछ नफा-नुकसान नहीं । औरंगजेब खुदा के सिवा और किसी के आगे अपने कामोंकी कैफियत नहीं देता ।

जसवन्त०—अच्छी बात है ! तो ईश्वरके आगे ही कैफियत दीजियेगा ।

(जानेको उद्यत होना ।)

औरंग०—ठहरिये राजासाहब !—मैं कैफियत न दूँगा तो आप क्या करेंगे ?

जसवन्त—भर सक बादशाह शाहजहाँको कैदसे छुड़ाने की चेष्टा करूंगा । बस । छुड़ा सकूँगा या नहीं, यह दूसरी बात है । किन्तु अपना कर्त्तव्य मैं अवश्य करूँगा ।

औरंग०—आप बगावत करेंगे ?

जसवन्त—बगावत ! सम्राट्का पत्र लेकर युद्ध करनेका नाम विद्रोह नहीं है । विद्रोह किया है आपने । हो सकेगा तो मैं उस विद्रोहीको दण्ड दूँगा ।

औरंग०—राजासाहब, अब तक मैं इम्तिहान ले रहा था कि आपकी हिम्मत कितनी है। पहले सुना था, इस वक्त देख रहा हूँ कि आप बड़े ही निडर हैं !—राजासाहब ! हिन्दोस्तानका बादशाह औरंगजेब जोधपुरके राजा जसवन्तसिंहकी दुश्मनीसे नहीं डरता। अगर आप चाहेंगे तो मैदानेजंगमें और एक बार औरंगजेबको पहचान लेंगे।—मालूम हो गया, नर्मदाकी लड़ाईमें औरंगजेबको आपने अच्छी तरह नहीं पहचाना।

जसवन्त—जहाँपनाह ! नर्मदाके युद्धमें ? आप उस विजयकी बड़ाई करते हैं ? जसवन्तसिंहने दयाधर्मका विचार करके आपकी थकी हुई निर्बल सेना पर आक्रमण नहीं किया। नहीं तो मेरी सेनाकी केवल फूँकहीमें औरंगजेब और उनकी सेना रुईकी तरह उड़ जाती। इतनी दयाके बदलेमें जसवन्तसिंह औरंगजेबकी दगाबाजोके लिये तैयार न था। यही उसका अपराध है।—जहाँपनाह आप उसी जीतकी बड़ाई कर रहे हैं।

औरंग०—महाराज जसवन्तसिंह ! खबरदार ! औरंगजेबके सब्रकी भी हद है ! खबरदार !

जसवन्त—सम्राट् ! आँखे किसे दिखाते हैं ? आँखें दिखाकर आप जयसिंह ऐसे आदमीको काबूमें कर सकते हैं। जसवन्तसिंहकी प्रकृति और ही है—समझ लीजिएगा ! जसवन्तसिंह आपकी लाल लाल आँखोंको आपके तोपके गोलों की ही तरह तुच्छ समझता है।

मीरजुमला—राजासाहब ! यह कैसी बात है !

जसवन्त—चुप रहो मीरजुमला ! राजा राजाकी लड़ाईमें जंगली गीदड़को क्या अधिकार है कि वह उनके बीचमें पड़े। हममेंसे अभी कोई मरा नहीं। तुम्हारी बारी युद्धके बाद आती है—तुम और

यह शायस्ताखाँ—

(शायस्ताखाँ और मीरजुमलाका तलवार खींचना और "खबरदार काफिर !" कहना ।)

शायस्ता०—जहाँपनाह ! हुक्म हो !

(औरंगजेबका इशारेसे मना करना ।)

जसवन्त—अच्छी जोड़ी मिली है—मीर जुमला और शायस्तखां—मंत्री और सेनापति । दोनों नमकहराम हैं । जैसा मालिक, वैसे नौकर ।

शायस्ता०—देखिए तो इस काफिरकी मजाल जहाँपनाह—कि हिन्दोस्तानके बादशाहके सामने—

जसवन्त—कौन भारतका सम्राट् है ?

शायस्ता०—हिन्दोस्तानके बादशाह गाजी आलमगीर !

[बुर्का डाले हुए जहानाराका प्रवेश ।]

जहानारा—झूठ बात है ।—हिन्दोस्तानका बादशाह औरंगजेब नहीं है । हिन्दोस्तानके बादशाह शाहंशाह शाहजहाँ हैं ।

मीरजुमला—कौन है यह औरत ?

जहानारा—कौन है यह औरत ? यह औरत है, बादशाह शाहजहाँकी लड़की जहानारा । (बुर्का उलट कर)—क्यों औरंगजेब ! तुम्हारा चेहरा एकाएक जर्द क्यों पड़ गया !

औरंग०—बहन तुम यहाँ कहाँ ?

जहानारा—मैं यहाँ क्यों आई—यह बात औरंगजेब, आज इस तख्त पर मजेसे बैठकर इन्सानकी आवाजमें पूछनेकी ताब तुममें है ? औरंगजेब, मैं यहाँ आई हूं, बादशाहसे बगावत करनेके तुम्हारे जुर्मकी नालिश करने ।

औरंग०—किससे ?

जहानारा—खुदा से ! खुदा नहीं है, यह तुमने सोच रक्खा है, औरंगजेब ?

औरंग०—मैं यहाँ बैठकर उसी खुदाकी फकीरी कर रहा हूँ—

जहानारा—चुप रहो ! खुदाका पाकनाम अपनी जबानसे न लो । जबान जल जायगी । बिजली और तूफान, भूचाल और बाढ़, आग और मरी !—तुम लाखों बेगुनाह औरत-मर्दोंके घर उड़ा-पुड़ा कर तोड़-फोड़ कर बहाकर जलाकर तबाह करके चले जाते हो । सिर्फ ऐसे ही लोगोंका कुछ नहीं कर सकते !

औरंग०—महम्मद ! इस पागल औरतको यहाँसे ले जाओ । यह दरबार है, पागलखाना नहीं है । महम्मद !

जहाना०—देखूँ, इस दरबारमें किसकी मजाल है कि बादशाह शाहजहाँकी लड़कीके बदनमें हाथ लगावे ।—वह चाहे औरंगजेब-का लड़का हो और चाहे खुद शैतान ही हो ।

औरंग०—महम्मद ! ले जाओ ।

महम्मद—माफ कीजिए अब्बाजान । मेरी इतनी मजाल नहीं ।

जसवन्त—बादशाहजादीसे ऐसे बर्ताव को हम नहीं सह सकते ।

और सब—कभी नहीं ।

औरंग०—सच है ! मैं गुस्सेमें कैसा अन्धा हो गया था ? अपनी बहन—बादशाह शाहजहाँकी बेटीसे ऐसा बर्ताव करनेका हुक्म दे रहा था । बहन ! महलमें जाओ । इस आम दरबारमें, सैकड़ों बुरी नज़रोंके सामने खड़ा होना मुनासिब नहीं—बादशाह शाहजहाँकी लड़कीको यह नहीं सोहना । तुम्हारी जगह महलसरा

है।

जहानारा—औरंगजेब यह मैं जानती हूं। लेकिन जब भारी भूचालमें इमारतें गिर पड़ती हैं—महलसरायें चूर चूर हो जाती हैं—तब जिन औरतोंको कभी सूरज-चाँदने भी नहीं देखा वे भी बिना किसी लिहाजके खुली सड़क पर आकर खड़ी हो जाती हैं। आज हिन्दोस्तानकी वही हालत है। आज एक भारी जुलमसे एक सल्तनतकी इमारत उलटपुलट गई है। इस वक्त वह पहलेका कायदा नहीं चल सकता। आज जिस बेइन्साफी, जिस उथलपुथल, जिस भारी जुलम और शैतनतका तमाशा हिन्दोस्तानमें हो रहा है, वह शायद कभी कहीं नहीं हुआ। इतना बड़ा गुनाह, इतना बड़ा फरेब, आज धरमके नाम पर चल रहा है। और ये भेंड़ें आखें बंद किये वही देख रही हैं। हिन्दोस्तानके आदमी क्या आज सिर्फ चाबुककी चोट पर चलनेहीके आदमी हो गये हैं? बुरी चालके बहाव में क्या इन्साफ, ईमान, इन्सानियत इन्सानके ऊंचे दर्जे-के खयालात--सब बह गये? इस वक्त क्या खुदगर्जीकाही राज है? क्या उसे ही सबने अपना धरम-करम मान लिया है? क्या यही मुनासिब है? सिपहसालारो! वजीरो! मुसाहबो! मैं यह जानना चाहती हूं कि तुमने किस बल पर शाहंशाह शाहजहाँकी जिन्दगी-में ही उनके तख्तपर उनके नालायक बेटे औरंगजेबको बिठला दिया है?

औरंग०—मेरी बहन अगर यहाँसे नहीं जाना चाहती, तो आप सब लोग बाहर चले जाइए। बादशाहजादीकी इज्जत बचाइए।

(सब बाहर जाना चाहते हैं।)

जहानारा--ठहरो। मेरा हुक्म है, ठहरो। मैं यहां तुम्हारे पास

बेकार रोने नहीं आई हूं । मैं अपना कोई दुख भी तुम्हें सुनाने नहीं आई । मैं अपने बूढ़े बापके लिये ही औरत की शर्म-हया और पर्दे की इज्जत को लात मारकर आई हूँ । सुनो ।

सब—फर्माइए ।

जहानारा—मैं एक दफा आमने—सामने खड़े होकर तुमसे पूछने आई हूँ कि तुम अपने उसी बहादुर, रहिमदिल, गरीबपरवर बादशाह शाहजहाँको चाहते हो ? या, इस दगाबाज, बापसे बगा-बत करनेवाले, लुटेरे, शैतान औरंगजेबको चाहते हो ?—याद रक्खो, अभी धरम दुनियासे उठ नहीं गया । अभी चाँद और सूर-ज निकलते हैं । अभी बाप-बेटेका रिश्ता माना जाता है । आज क्या एक ही दिनमें, एकही आदमीके पापसे खुदाका बनाया कायदा उलट जायगा ? यह नहीं हो सकता ! ताकतको क्या इतना घमंड हो गया है कि उसकी फतहयाबीका डंका परस्तिशकी जगहके पाक अमनको लूट लेगा ? अधरमकी क्या ऐसी मजाल होगई है कि वह बे-रोकटोक मोहब्बत-रहम-अदबकी छातीके ऊपरसे अपनी गाड़ीके खूनसे तर पहिये चलाता चला जायगा ?–बोलो ।—तुम औरंगजेबसे डरते हो ? औरंगजेब क्या है ! उसके दोनों हाथोंमें कितनी ताकत है ! तुम्हीं उसकी ताकत हो । तुम चाहो तो उसे तख्त पर बैठा सकते हो; और चाहो तो उसे तख्तसे उतारकर कीचड़में लुटा सकते हो । तुम अगर बादशाह शाहजहाँको अब भी चाहते हो, शेरको बूढ़ा समझकर उसे लात मारना नहीं चाहते, तुम अगर इन्सान हो, तो मिलकर बलंद आवाजसे कहो "जय बादशाह शाहजहाँकी जय" देखोगे, औरंगजेब खौफसे आप तख्त छोड़ देगा ।

सब—जय बादशाह शाहजहाँकी जय ।

जहानारा—अच्छा तो—

औरंग०—(सिंहासनसे उतरकर) अच्छी बात है ! मैंने तख्त छोड़ दिया ! मुसाहबो ! अब्बाजान बीमार हैं और सल्तनत का काम नहीं कर सकते। अगर वह कर सकनेके काबिल होते तो दक्खिनसे मेरे यहाँ आनेकी जरूरत नहीं थी। मैंने बादशाह शाहजहाँके हाथसे सल्तनतका काम नहीं लिया—दारा के हाथसे लिया है। अब्बा पहलेकी तरह सुखसे आरामके साथ आगरे के महलमें हैं। आप लोग अगर यह चाहते हों कि दारा बादशाह हो तो कहिए, मैं उनको बुलाये भेजता हूं। दारा क्यों, अगर महाराज जसवन्तसिंह इस तख्त पर बैठना चाहें, अगर वे या महाराज जयसिंह या और कोई सल्तनतके कामकी जिम्मेदारी लेनेको तैयार हो, तो मुझे कुछ उज्र नहीं है। एक तरफ दारा, एक तरफ शुजा और एक तरफ मुराद है। इन दुश्मनोंको सिर पर रखकर कोई तख्त पर बैठना चाहे, बैठे। मुझे यकीन था कि आप लोगोंकी राय और कहनेसे मैं यहाँ तख्तपर बैठा हूँ। आप लोग यह न समझें कि तख्त मेरे लिये इनाम है! यह मेरे लिए एक तरहकी सजा है। मैं इस वक्त तख्त पर नहीं, बारूदके ढेर पर बैठा हूँ। इसके सिवा इसी तख्तकी वजहसे मैं मक्का जानेका सवाब नहीं हासिल कर पाता। आप लोग अगर चाहें कि दारा इस तख्त पर बैठे, हिन्दोस्तानमें राजाके बिना फिर ऊधम मचे—धरमका नास हो, तो मैं अभी मक्के शरीफका सफर करता हूँ। वह तो मेरे लिए बड़े सुखकी बात है ! बोलो।—

(सबका चुप रहना।)

औरंग०-यह लो मैंने अपना ताज तख्तके आगे रख दिया ।

मैं इस तख्त पर बैठा हूं आज—बादशाहके नाम पर—लेकिन वह भी बहुत दिनों के लिए नहीं। राजमें अमनचैन कायम करके, दारा के बेसिलसिले कामोंको सिलसिलेसे ठीक और सहल करके, फिर आप जिसे कहें उसे बादशाहत देकर मैं मक्के जाना चाहता हूँ। यहाँ बैठे रहनेपर भी मेरा खयाल उधर ही है–वह मेरे जागते का खयाल और सोतेका ख्वाब है—मैं उसी पाक जगहके खयालमें डूबा रहता हूँ। आप लोग अगर यही चाहें तो मैं आज ही सल्तनतकी जिम्मेदारी छोड़कर मक्के चला जाऊँ। वह तो मेरे लिए बड़ी खुशकिस्मती है। मेरे लिए आप लोग कुछ फिक्र न करें। आपलोग अपनी तरफ खयाल करके कहिए; 'जुल्म' चाहते हैं, या अमन ? कहिए। मैं आप लोगोंकी मर्जीके खिलाफ बादशाहत करना पसन्द नहीं करता; और आपकी मर्जी होने पर भी यहाँ खड़े खड़े दाराके मनमाने जुल्मको देख न सकूँगा। कहिए, आप लोगों की क्या मर्जी है!—चलो महम्मद! मक्के चलनेके लिए तैयार हो जाओ।—बोलिए, आप लोगोंकी क्या मर्जी है ?

सब—जय बादशाह औरंगजेबकी जय।—

औरंग०—अच्छी बात है! आप लोगोंका इरादा मालूम होगथा। अब आप लोग बाहर जायँ। मेरी बहन—शाहजहाँ बादशाह की बेटी–की बेइज्जती होना ठीक नहीं।

(औरंगजेब और जहानाराके सिवा सबका जाना।)

जहानारा—औरंगजेब!

औरंग०—बहन!

जहानारा—खूब!—मुझसे बड़ाई किये बिना नहीं रहा जाता। अब तक ताज्जुबसे चुप थी; तुम्हारी चालबाजी का तमाशा देख

रही थी, जब होश आया तो देखा, तुम बाजी मार ले गये ।--खूब !

औरंग०--मैं वादा करता हूं, अल्लाहकी कसम खाता हूं, जबतक मैं बादशाह हूं तब तक तुमको और अब्बाको किसी बातकी कमी न होने पावेगी ।

जहानारा--फिर कहती हूं--खूब !

तीसरा अंक।

पहला दृश्य।

स्थान—खजुवामें औरंगजेबका डेरा।

समय—रात्रि।

[औरंगजेब एक चिट्ठी लिये देख रहे हैं।]

औरंग०—किश्त। हाथीकी चाल। अच्छा—नहीं। उठती किश्तसे मेरी बाजी जाती रहेगी! लेकिन—देखूं—ऊहूँ!—अच्छा यह हाथीकी किश्त—दबा लेगी। उसके बाद यह किश्त। यह प्यादा—उसके बाद यह किश्त!-कहाँ जाओगे!—मात। (उत्साहके साथ) मात (टहलना।

(मीरजुमलाका प्रवेश।)

औरंग०—बजीर साहब! हम इस जंगमें जीत गये।

मीरजु०—जहाँपनाह! कैसे?

औरंग०—पहले आप तोपें चलावेंगे। उसके बाद मैं हाथियोंको लेकर उस चौकन्नी फौज पर टूट पड़ूँगा। उसके बाद, महम्मदकी घुड़सवार फौज हमला करेगी। इन्हीं तीन किश्तोंसे दुश्मन मात हो जायगा।

मीरजु०—और जसवन्तसिंह?

औरंग०—उस पर मुझे अभी एतबार नहीं है। उसे अपनी आँखोंके सामने ही रखना होगा—हमारी और शुजाकी फौजोंके बीचमें; जिसमें वह हमें कुछ नुकसान न पहुँचा सके। मैं और मह-

म्मद, दोनों उसके इधर उधर रहेंगे। दुश्मनोंका हमला होगा खासकर जसवन्तसिंहकी राजपूत फौजके ऊपर। वे लड़ते खूब हैं। अगर उसमें कोताही करेंगे तो पीछे तुम्हारी तोपोंकी बाढ़से काम लिया जायगा। हमें फतह जरूर मिलेगी।—कल सबेरे तैयार रहना।—इस वक्त जा सकते हो।

मीरजु०—जो हुक्म। (प्रस्थान।)

औरंग०—जसवन्तसिंह !—यह खाली इम्तिहान है।

[महम्मदका प्रवेश।]

औरंग०—महम्मद, तुम्हारी जगह है सामने, जसवन्तसिंहकी दाहिनी तरफ। तुम सबके पीछे हमला करना। सिर्फ तैयार रहना। यह देखो नकशा।

(महम्मद देखता है।)

औरंग०—समझे ?

महम्मद—हाँ अब्बाजान।

औरंग०—अच्छा जाओ।—कल तड़के !

(महम्मदका प्रस्थान।)

औरंग०—शुजाकी एक लाख फौज गँवार है। जान पड़ता है, ज्यादह तकलीफ न उठानी पड़ेगी। एकदफा हलचल डाल देनेसे ही काम हो जायगा—यह लो, महाराज जसवन्तसिंह आगये।

[दिलदारके साथ जसवन्तसिंह का प्रवेश और कोर्निश करना।]

औरंग०—मैंने आपको बुला भेजा है। मैंने खूब सोचकर आपको सामने ही रखना मुनासिब समझा है।

जसवन्त—मुझे ?

औरंग०—क्यों ! इसमें कुछ उज्र है ?

जसवन्त—नहीं, मुझे कुछ आपत्ति नहीं हैं।

औरंग०—आप कुछ इधर-उधर कर रहे हैं !

जसवन्त—शाहजादा महम्मदके आगे रहनेकी बात थी।

औरंग०—मैंने राय बदल दी है। वह आपके दाहने रहेगा।

जसवन्त—और मीरजुमला ?

औरंग०—आपके पीछे। मैं आपकी बाईं तरफ रहूँगा।

जसवन्त—ओः ! समझ गया। जहाँपनाह मुझे सन्देह की दृष्टिसे देखते हैं।

औरंग०—महाराज खुद होशियार हैं। महाराजके साथ होशियारीकी चाल चलना बेकार है। महाराजको मैं साथ लाया हूँ, उस का सबब यही है कि मेरी गैरहाजिरीमें आप आगरे में बलवा न करा दें।—आप शायद यह अच्छी तरह जानते होंगे।

जसवन्त—नहीं, इतना मैंने नहीं सोचा था ! जहाँपनाह, मुझे अपने चतुर होनेका घमंड था। किन्तु मैं देखता हूँ, इस बातमें मैं जहाँपनाहके आगे बच्चा ही हूँ।

औरंग०—अब आपका इरादा क्या है ?

जसवन्त—जहाँपनाह ! राजपूत लोग विश्वासघात करना नहीं जानते। परन्तु आप लोग—कमसे कम आप—उन्हें विश्वासघात की राह पर चलाने की चेष्टा कर रहे हैं। मगर जहाँपनाह ! सावधान इस राजपूत जातिको अपना शत्रु बनाकर बिगाड़िएगा नहीं। मित्रतामें राजपूतके बराबर कोई मित्र नहीं और शत्रुतामें राजपूत जैसा भयंकर शत्रु भी कोई नहीं है।—सावधान !

औरंग०—राजासाहब ! औरङ्गजेबके सामने भौंहों में बल डालनेसे कोई फायदा नहीं। जाइए। मेरा यही हुक्म है। इसीके

मुताबिक काम कीजिएगा ! नहीं तो—आप जानते हैं औरंगजेबको !

जसवन्त—जानता हूँ। और आप भी जानते हैं जसवन्तसिंह को ! मैं किसीका नौकर या ताबेदार नहीं हूँ। मैं इस आज्ञाका पालन नहीं करूँगा !

औरंग०—राजासाहब ! यक़ीन कीजिएगा, औरंगजेब कभी किसीको माफ नहीं करता ! समझबूझकर काम कीजिएगा !

जसवन्त—और आप भी निश्चय जानियेगा कि जसवन्तसिंह कभी किसीसे नहीं डरता। समझबूझकर काम कीजिएगा !

औरंग०—यह भी क्या मुमकिन है !—जसवन्तसिंह !

जसवन्त—औरंगजेब !

औरंग०—अगर मैं तुम्हें इसी दम कैद कर लूँ, तो तुम्हें कौन बचावेगा ?

जसवन्त—यह तलवार। समझलो, इस दुर्दिनमें भी महाराज जसवन्तसिंहके एक इशारेसे तीस हजार राजपूतोंकी तलवारें एक साथ सूर्यकी किरणोंमें चमक उठती हैं ! और इस गये गुजरे समयमें भी राजपूत—राजपूत ही हैं। (प्रस्थान)

औरंग०—निशाना चूकगया। जरा आगे बढ़ गया। इस राजपूतोंकी कौमको मैं अच्छी तरह पहचान नहीं सका। उनमें इतनी शान है ! इतना घमंड है ! नहीं पहचान सका।

दिलदार—पहचानेंगे कैसे जहाँपनाह ! आप चालबाजीकी दुनियामें ही रहते हैं ! आप देखते आ रहे हैं सिर्फ धोखेबाजी, खुशामद, नमकहरामी। उन्हें काबू करना आपके बायें हाथका खेल है। लेकिन यह एक जुदा ही ढंगकी दुनिया है। इस दुनियाके लोग जानसे बढ़कर शानको समझते हैं।

औरंग०—हूं ।–देखूं अब भी अगर कुछ इलाज कर सकूं । लेकिन जान पड़ता है अब मर्ज लाइलाज हो गया है–हिकमत काम नहीं कर सकती । (प्रस्थान)

दिलदार—दिलदार ! तुम घुसे थे सुई होकर—अब कहीं कुल्हाड़ी होकर न निकलो ! मुझे यही डर है। पहले सबक लेनेवाला ! उसके बाद मसखरा ! उसके बाद राज-काजके ढंगोंका जानकार ! उसके बाद शायद दानिशमन्द (दार्शनिक)—उसके बाद ?

[बातें करते करते औरंगजेब और मीरजुमलाका फिर प्रवेश ।]

औरंग०—सिर्फ यह देखते रहना कि कुछ नुकसान न पहुंचा सके ।

मीर०—जो हुक्म ।

औरंग०—उसकी आँखें बहुत सुर्ख होगई थीं । एकदम जानका खौफ ही नहीं है । राजपूतोंकी कौम ही ऐसी है ।

मीर०—मैंने देखा है जहाँपनाह, एक तोपसे भी बढ़कर एक राजपूत खौफनाक होता है ।

औरंग०—देखना ! खूब होशियार रहना ।

मीर०—जो हुक्म ।

औरंग०—जरा महम्मदको मेरे पास भेज देना—नहीं, मैं ही उसके डेरे में जाता हूं । (प्रस्थान ।)

मीर०—इस जंगमें औरंगजेब जैसे घबराये हुए हैं, वैसे पहले की किसी जंग में नहीं घबराये !—भाई-भाईकी लड़ाई है—इसी से शायद यह बात है ।—ओः ! भाई-भाईका झगड़ा—कैसा कुदरती कानूनके खिलाफ काम है ! कैसे कड़े जीका काम है !

दिल०—और कैसा जोश दिलाने वाला है ! यह नशा सब नशों से बढ़कर है । वजीर साहब ! यह किसी तरह मेरी समझमें नहीं आता कि दुश्मनी बढ़ानेके लिए इन्सानने क्यों इतने मजहब बनाये—जब घरही में ऐसे बड़े दुश्मन मौजूद हैं । क्योंकि भाईके बराबर दुश्मन कोई नहीं है ।

मीर०—क्यों ?

दिल०—यह देखिए वजीरसाहब, हिन्दू और मुसलमान, इनका एक दूसरेसे क्या मेल मिलता है ? पहले खुदाके दिये हुए चेहरेको ही लीजिए, उसे खींच खाँचकर जहाँतक बदलागया वहाँ तक बदल डाला । मुसलमान रखते हैं दाढ़ी सामने,—हिन्दू रखते हैं चोटी पीछे (वह भी सामने न रक्खेंगे) मुसलमान पच्छिमको मुंह करके नमाज पढ़ते हैं, हिन्दू लोग पूरबको मुंह करके पूजापाठ करते हैं । ये लाँग नहीं मारते, वे लाँग मारते हैं । ये दाहिनी तरफसे लिखते हैं, वे बाईं तरफ से लिखते हैं ।—लिखते हैं कि नहीं ?

मीर०—लिखते हैं ।

दिल०—तबभी यह कहना पड़ेगा कि हिन्दू लोग मुसलमानों की अमलदारीमें एक तरह सुखसे हैं । वे और सब कुछ मान सकते हैं, लेकिन अपने किसी भाईकी हुकूमतको नहीं मान सकते ।

(मीरजुमलाका हास्य ।)

दिल०—(जाते जाते) क्यों ठीक है न ?

मीर०—(जाते जाते) हाँ ठीक है ।

———

दूसरा दृश्य ।

स्थान—खेजुवामें शुजाका डेरा ।

समय—सन्ध्या ।

[शुजा एक नकशा देख रहे हैं । पियारा फूलोंकी माला हाथमें लिये हुए गाती हुई प्रवेश करती है ।]

पियाराका गान ।

गजल ।

सुबहसे मैंने ये बैठे बैठे, बनाई माला है जान मेरी ।
पिन्हाऊँ तेरे गलेमें आजा, सुहाई माला है जान मेरी ॥
सुबहसे मैंने नहीं किया कुछ, लगा हुआ जी इसीमें था बस
बकुल-तले बैठकर निराले बनाई माला है जान मेरी ॥
सुनारहा तान था पपीहा कहीं छिपा डालियोंमें बैठा ।
उसीमें होकर मगन वहीं पर बनाई माला है जान मेरी ॥
हवासे हिलती थीं डालियाँ सब, खुशीसे ज्यों झूमने लगी थीं ।
वही खुशी ले यहाँ हूँ आई बनाई माला है जान मेरी ॥
सुबहकी जैसे हँसी छिटककर सुनहली रंगत पड़ी चमनमें ।
उसीमें मैंने निहाल होकर बनाई माला है जान मेरी ॥
न सिर्फ हैं फूल इसमें प्यारे, हवाका गाना चमनका खिलना,
खुशी सुबहकी मिलाके मैंने बनाई माला है जान मेरी ॥
सभीसे बढ़कर हँसी तुम्हारी मिली है इसमें, इसीसे इसको—
गलेमें पहनो, तुम्हारे कारन बनाई माला है जान मेरी ॥

(पियारा वह माला शुजाके गलेमें डालती है ।)

शुजा—(हँसकर) यह क्या पियारा मेरे लिये जैमाल है ?

मैंने तो अभी फतहयाबी नहीं हासिल की ।

पियारा––इससे क्या होता है ! मेरे नजदीक तुम सदा फतहयाब हो । तुम्हारी मोहब्बतके कैदखानेमें मैं कैद हूं । तुम मेरे मालिक हो, मैं तुम्हारी जरखरीद लौंडी हूं ।––क्या हुकम है ? (घुटने टेकना ।)

शुजा—यह तो तुमने एक बड़े मजेका नया ढंग निकाला ।—अच्छा जाओ कैदी, मैंने तुमको रिहाई दी ।

पियारा––मैं रिहाई नहीं चाहती । मुझे यह गुलामी ही पसंद है !

शुजा—सुनो । मैं एक सोच में पड़ा हूं ।

पियारा—वह सोच है क्या ?–देखूँ अगर मैं उसकी कुछ तरकीब कर सकूँ ।

शुजा––(युद्धका नकशा दिखाकर) देखो पियारा–यहाँपर मीरजुमलाकी तोपें हैं, यहाँ पर महम्मदके पाँचहजार सवार हैं, और इस जगह पर खुद औरंगजेब है ।

पियारा—कहाँ ? मैं तो सिफ एक कागज देख रही हूं । और तो कुछ भी नहीं देख पड़ता ।

शुजा—इस वक्त इसी तरह है । लेकिन कल लड़ाईके वक्त कौन कहाँ पर रहेगा, यह कहा नहीं जासकता ।

पियार—कुछ कहा नहीं जा सकता ।

शुजा—औरंगजेबका दस्तूर यह है कि जैसे ही उसकी तरफ तोप के गोले बरसाये जाते हैं, ठीक वैसे ही वह घोड़ा दौड़ाकर आकर हमला करता है ।

पियारा—हाँ ! तब तो यह मामूली या सहल बात नहीं है ।

शुजा—तुम कुछ नहीं समझतीं ।

पियारा—जान गये !—कैसे जान गये; हाँ—बताओ न किस तरह जान गये ? ताज्जुब ! बिल्कुल ठीक जान गये ।

शुजा—मेरी फौज कवायद नहीं जानती । अगर जसवंतसिंह को मिला सकूँ—एक दफा लिखकर देखूँगा ! लेकिन—अच्छा तुम क्या कहती हो ?

पियारा—मैंने तुमसे कहना सुनना छोड़ दिया है ।

शुजा—क्यों ?

पियारा—क्यों ! तुमसे कुछ कहो तो तुम उसे कभी सुनते नहीं । मैं तुमको अच्छी तरह पहचानती हूँ । तुम जो ठान लेते हो वह ठान लेते हो । मुझसे मेरी राय पूछते जरूर हो, लेकिन अपने खिलाफ राय सुनते ही चिढ़ जाते हो ।

शुजा—वह—हाँ—जो चाहे समझो ।

पियारा—इसीसे मैं पतिव्रता हिन्दू औरतकी तरह हूँ-हाँ करके टाल देती हूँ ।

शुजा—सच है ! कसूर मेरा ही है । मैं सलाह माँगता जरूर हूँ, मगर ठीक सलाह न होनेसे चिढ़ जाता हूँ ।—तुमने ठीक कहा । लेकिन अब सुधारनेकी कोई तदवीर नहीं है ।

पियारा—नहीं । सुधारनेकी कोई तदवीर होती तो मैं तुम्हें सुधारती । इसीसे मैं इसका जतन नहीं करती । मौजसे गाना गाती हूं ।

शुजा—गाना ही गाओ । तुम्हारा गाना एक तरह की शराब है । सैकड़ों फिक्रों और तकलीफोंको दूर कर देता है । कड़ी वारदातों को दुनियासे उड़ा ले जाता है । तब मुझे जान पड़ता है, जैसे एक सुरकी झनकार मुझे घेरे हुये है । यह आसमान, यह दुनिया, कुछ नहीं देख पड़ता । गाओ—कल लड़ाई होगी । बहुत देर है । जो

होना है वही होगा । गाओ ।

पियारा--तो वह गाना सुननेके लिए पहले इस पूरे चाँदकी चाँदनीमें अपनी तबियतको नहला लो । अपनी ख्याहिशके फूलों पर मुहब्बतका चंदन छिड़क लो—उसके बाद मैं गाना गाऊँ--और तुम अपने वे फूल मेरे पैरों पर चढ़ाओ ।

शुजा—हाः ! हाः ! हाः ! तुमने खूब कहा--हालाँ कि मैं तुम्हारी इस मिसालका ठीक तौरसे रस नहीं ले सका ।

पियारा--चुप । मैं गाना गाऊँ, तुम सुनो । पहले इस जगह पर सहारा लेकर--इस तरह बैठो । उसके बाद, हाथको इस जगह इस तरह रक्खो । उसके बाद, आँखें मुँदो—जैसे ईसाई लोग इबादतके वक्त आँखें मूँदते हैं—हालाँ कि मुँहसे कहते हैं कि "या खुदा, हमें अँधेरेसे रोशनीमें ले चल"—लेकिन असलमें खुदाने जितनी रोशनी दी है, आँखें मूँदकर उससे भी हाथ धो बैठते हैं ।

शुजा—हाः ! हाः ! हाः ! तुम बहुतसी बातें कहती हो, लेकिन जब इन बगला भगतोंका ठट्टा उड़ाती हो, तब वह जैसा मीठा लगता है—क्योंकि मैं कोई धरम ही नहीं मानता ।

पियारा—'कवायदकी' गल्ती है । 'जैसा' कहने पर उसके साथ जरूर एक 'वैसा' कहना चाहिए ।

शुजा—दारा हिन्दू-धरमका तरफदार है—बना हुआ है । औरंगजेब कट्टर मुसलमान है—वह भी ढोंगी है । मुराद भी मुसलमान है—कट्टर नहीं है—पर ढोंगी है ।

पियारा—और तुम कोई भी धरम नहीं मानते—तुम भी बने हुए हो ।

शुजा—कैसे ?—मैं किसी धरमका दिखावा नहीं करता । मैं

साफ साफ सीधी तरहसे कहता हूँ कि मैं बादशाह होना चाहता हूँ।

पियारा—तुम्हारा यही ढोंग है।

शुजा—ढोंग कैसे है! मैं दाराकी हुकूमत माननेको राजी था। लेकिन औरंगजेब और मुराद कीहुकूमत नहीं मान सकता। मैं उनका बड़ा भाई हूं।

पियारा—ढोंग है—बड़ा भाई होना भी ढोंग है।

शुजा—कैसे! मैं पहले पैदा हुआ था।

पियारा—पहले पैदा होना भी ढोंग है! और पहले पैदा होने में तुम्हारी बहादुरी कुछ भी नहीं है। उसकी बजहसे तुम तख्त पर दावा ज्यादह नहीं कर सकते हो।

शुजा—क्यों?

पियारा—हमारा बावर्ची रहमतउल्ला तुमसे बहुत पहले पैदा हुआ होगा। तो फिर तख्त पर तुमसे बढ़ कर उसका दावा है।

शुजा—वह तो बादशाह का बेटा नहीं है।

पियारा—बादशाहका बेटा बननेमें कितनी देर लगती है!

शुजा—हाः! हाः! हाः!—तुम इसी तरहकी बहस करोगी! नहीं, तुम गाना गाओ—अगर हो सके तो!

पियारा—सुनो। लेकिन खूब मन लगाकर सुनो। (गाना)

ठुमरी।

मन बाँध लिया किस बन्धनमें दिलदार दिलारा सांमरिया।
मैं जा न सकूँ उसे तोड़ कहीं मुझे कैद किया मुझे मोह लिया॥ मन०
दिलचस्प छिपी हुई बेड़ी है ये, यह कैद है प्यारी प्रान पिया।
चले जाने में पैर रुके, न बढ़ें, बिरहाकी बिथा कसकावे हिया॥ मन०
मिलनेकी हँसी खुशी और वही एक प्यारमें सब दुख दूर किया।
इस दमें राहत चाहतकी मिलती है मुझे सुख पेयि जियो॥ मन०

शुजा—पियारा ! खुदाने तुमको क्यों बनाया था ? यह रूप, यह तबियतदारी, यह मसखरापन, यह गाना; ऐसी एक नायाब अजीब चीज खुदाने इस सख्त दुनियामें क्यों पैदा की !

पियारा—तुम्हारे लिये प्यारे !

तीसरा दृश्य ।

स्थान-अहमदाबाद । दाराका डेरा ।

समय—रात ।

दारा—ताज्जुब है ! जो दारा एक दिन सिपहसालारों और राजा महाराजाओं पर हुक्म चलाता था, वह एक जगहसे दूसरी जगह भागता हुआ आज दूसरेके दरवाजे पर रहमका तालिब है; और उसके दरवाजे पर, जो औरंगजेब और मुराद का ससुर है । मैंने कभी नहीं सोचा था कि मेरी इतनी तनज्जुली होगी ।

नादिरा—क्या शाहजादा सुलेमानकी कुछ खबर पाई है ?

दारा—उसकी खबर वही एक है । राजा जयसिंह उसे छोड़कर मय फौज के औरंगजेब से मिल गये हैं । बेचारा शाहजादा कुछ बचे हुए अपने साथियोंको लिये—उन्हें फौज नहीं कह सकते—हरिद्वारके रास्ते मेरे पास लाहौर आरहा था । राह में औरंगजेबकी फौज के कुछ सिपाहियोंने उसका पीछा किया और उसे वे श्रीनगर (काश्मीर) के किनारे तक खदेड़ लेगये । सुलेमान इस वक्त श्रीनगरके राजा पृथ्वीसिंहके यहाँ पड़ा हुआ अपनी जान बचा रहा है । क्यों नादिरा—रो रही हो !

नादिरा—नहीं !

दारा—नहीं, रोओ । कुछ तसल्ली होजायगी !—हाय मैं अगर रो भी सकता !

नादिरा—फिर औरंगजेबसे लड़ाई करोगे ?

दारा– करूंगा । जबतक इस तनमें जान है, औरंगजेबकी हुकूमत कभी न मानूंगा । लड़ूंगा । वह मेरे बूढ़े बापको कैद करके आप तख्त पर बैठा है । मैं जबतक अब्बाको छुड़ा न सकूंगा, लड़ूँगा ।–नादिरा ! सिर क्यों झुका लिया ? मेरा यह इरादा शायद तुमको पसंद नहीं है ।–क्या करूँ–

नादिरा—नहीं प्यारे ! तुम्हारी राय ही मेरी राय है। तुम्हारी मर्जी ही मेरी मर्जी है । मगर—

दारा—मगर ?

नादिरा—प्यारे ! हमेशा यह खटका, यह सफर, यह भागना किस लिये है ?

दारा—क्या करूँ बताओ, जब मेरे पाले पड़ी हो तब सब सहना ही पड़ेगा !

नादिरा—मैं अपने लिये नहीं कहती मालिक ! मैं तुम्हारे ही लिये कहती हूँ । जरा आईनेमें अपना चेहरा देखो प्यारे—यह हड्डियोंका ढाँचा रह गया है । ये सफेद बाल और उदास फीकी नजर–

दारा—आज अगर मेरा यह चेहरा तुम्हें नापसन्द हो तो मैं क्या कर सकता हूँ !

नादिरा—मैं क्या यही कह रही हूँ !

दारा—औरतोंका सुभाव ही यह है ।–तुम्हारा क्या !—तुम सिर्फ सिफारिश, फर्माइश और नालिश कर सकती हो । तुम हम लोगोंके सुखमें रुकावट और दुखमें बोझ हो !

नादिरा—(भर्राई हुई आवाजसे) प्यारे ! सचमुच क्या यही बात है ! (हाथ पकड़ना ।)

दारा—जाओ इस वक्त तुम्हारा यह मिनमिनाना अच्छा नहीं लगता।—(हाथ छुड़ाकर चल देना।)

नादिरा—(कुछ देर तक आँखोंमें रूमाल लगाये रहकर विषादके गंभीर स्वरमें) मेरे रहीम—बस अब और नहीं!—यहीं पर पर्दा गिराकर यह खेल खतम कर दो! सल्तनत गँवाई, महलोंके ऐश छोड़कर चली आई; रास्तेमें धूप सही, सर्दी सही, सोई नहीं, खाना नहीं खाया,—इसी तरह बहुतसे दिन गुजारने पड़े और रातें काटनी पड़ीं; सब हँसते हँसते सह लिया, क्योंकि शौहरका प्यार बना हुआ था। लेकिन आज (कण्ठरोध) बस अब नहीं! अब नहीं! सब सह सकती हूँ; सिर्फ यही नहीं सह सकती। (रोती है।)

[सिपरका प्रवेश।]

सिपर—अम्मी—यह क्या? तुम रो रही हो अम्मीजान!

नादिरा—नहीं बेटा, मैं रोती नहीं। ओः सिपर! सिपर! (रोना।)

सिपर—(पास आकर नादिराके गलेमें हाथ डालकर आँखोंसे रूमाल हटाता है) अम्मी रोती क्यों हो? किसने तुम्हें चोट पहुँचाई है? मैं उसे कभी माफ न करूँगा—मैं उसे—

(इतना कहकर सिपर नादिराके गलेसे लिपटकर छातीमें सिर रखकर रोता है। नादिरा उसे छातीसे लगा लेती है।)

[जोहरतउन्निसाका प्रवेश।]

जोहरत—यह क्या!—अम्मी रो क्यों रही हैं सिपर?

नादिरा—ना जोहरत! मैं रोती नहीं हूँ।

जोहरत—अम्मी! तुम्हारी आँखोंमें आँसू तो मैंने कभी नहीं देखे। चाँदनीकी तरह हँसी हमेशा तुम्हारे होठोंमें बसी रहती थी।

भूखकी तकलीफमें, नींद न आनेकी बेचैनीमें—बुरे दिनोंमें सच्चे दोस्तकी तरह हँसी तुम्हारे होठोंसे लगी ही रहती थी आज यह क्या है अम्मी !

नादिरा—यह सदमा जबानसे कहा नहीं जा सकता, जोहरत ! आज मेरे खुदाने मुझसे मुँह फेर लिया है।

[दाराका फिर प्रवेश ।]

दारा—नादिरा ! मुझे माफ करो ! मुझसे कुसूर हुआ। बाहर जाते ही मुझे होश आया। नादिरा—(नादिराका जोरसे रोना ।)

दारा—नादिरा ! मैं अपना कुसूर कुबूल करता हूं। माँफी माँगता हूं। तब भी—छिः ! नादिरा अगर तुम जानतीं, अगर समझ सकतीं कि दिनरात मेरे जिगरमें कैसी आग सुलगा करती है—तो तुम मेरे इस बर्तावसे बुरा न मानतीं।

नादिरा—और प्यारे अगर तुम जानते कि मैं तुम्हें कितना प्यार करती हूं, तो तुम इतने सख्त न हो सकते।

सिपर—(अस्फुट स्वरमें) मैं तुम्हें देवताकी तरह मानता हूं अब्बा ! (जोहरतका प्रस्थान ।)

नादिरा—नहीं बेटा ! तुम्हारे अब्बाने मुझे कुछ नहीं कहा ! मैं ही जरा ज्यादह तुनुक-मिजाज हूं--मेरी ही कुसूर है ।

[बाँदीका प्रवेश ।]

बाँदी—बाहर एक साहब आपसे मिलनेके लिए खड़े हैं, खुदावन्द !

दारा—कौन हैं ?

बाँदी—मालूम हुआ कि गुजरात के सूबेदार हैं।

दारा—सूबेदार आये हैं ?

नादिरा—मैं भीतर जाती हूं। (प्रस्थान ।)

दारा—उन्हें यहीं ले आओ सिपर !

(बाँदीके साथ सिपरका प्रस्थान ।)

दारा—देखूं शायद यहां सहारा मिल जाय ।

(शाहनवाज और सिपरका प्रवेश ।)

शाहनवाज—शाहजादा साहब तसलीम ।

दारा—बन्दगी सुल्तानसाहब ।

शाहनवाज—जहाँपनाहने मुझे याद किया है ?

दारा—हाँ सुलतानसाहब । मैंने आपसे मिलनेकी ख्वाहिश की थी ।

शाहन०—क्या हुक्म है ?

दारा—हुक्म ! सुलतान साहब वह दिन अब नहीं रहा । आज आजिजी करने, भीख माँगने आया हूं । हुक्म देगा अब—औरंगजेब ।

शाहन०—औरंगजेब ! उसका हुक्म-मेरे लिए नहीं है ।

दारा—क्यों सुलतान साहब । आज औरंगजेब हिन्दोस्तानका बादशाह है ।

शाहन०—हिन्दोस्तानका बादशाह औरंगजेब ! जो फकीरी और रिआयापरवरीका चेहरा लगाकर बूढ़े बापके खिलाफ बगावत करता है, मोहब्बतका चेहरा लगाकर भाईको कैद करता है, दीनका चेहरा लगाकर तख्त पर बैठता है--वह बादशाह है ?—मैं एक अन्धे-लूले--अपाहिजको उस तख्त पर बैठाकर उसे बादशाह मानकर कोर्निश करनेको तैयार हूं; लेकिन औरंगजेबको नहीं ।

दारा—यह क्या सुलतानसाहब । औरंगजेब आपका दामाद है ।

शाहन०—औरंगजेब अगर मेरा दामाद न होकर मेरा बेटा होता और वह बेटा अकेला ही होता; तो भी मैं उसे छोड़ देता । अधरम और बेईमानीको जिन्दगी रहते मैं कभी कुबूल नहीं कर सकता ।

दारा—तब आपने क्या तै किया है ?

शाहन०—मैं शाहजादा दाराकी तरफसे लड़ूंगा । पहलेहीसे उसकी तैयारी कर रहा हूँ । इस थोड़ीसी फौजको लेकर औरंगजेबसे लड़ सकना गैर मुमकिन है; इसीसे फौज जमा कर रहा हूँ ।

दारा—किस तरह ?

शाहन०—महाराज जसवन्तसिंहसे मदद माँग भेजी है ।

दारा—उन्होंने मदद देना मंजूर कर लिया है ?

शाहन०—कर लिया है ।—कोई डर नहीं है शाहजादा साहब । आइये—आप आज मेरे मेहमान हैं ! आप बादशाहके बड़े बेटे हैं । आप उनके पसंद किये हुए वालिए-मुल्क हैं । मैं एक बूढ़ा आदमी होनेपर भी शाही खान्दानका ईमानदार खादिम हूँ । बूढ़े बादशाहके लिए मैं जंग करूँगा । फतह न मिलेगी, जान तो दे सकूँगा ! बूढ़ा हुआ हूँ । एक सवाब करके आकबत तो बना लूँ ।

दारा—तो आप मुझे सहारा देते हैं ?

शाहन०—सहारा शाहजादा ! आजसे मेरा घरबार सब आपका है । मैं शाहजादे का गुलाम हूँ ।

दारा—आप महातमा हैं ।

शाहन०—शाहजादा साहब ! मैं महातमा नहीं, एक मामूली आदमी हूँ । और आज जो मैं कर रहा हूँ, उसे मैं कोई गैर मामूली काम नहीं समझता । शाहजादा साहब ! मेरी इतनी उमर आई है

—मैं जोर देकर कह सकता हूँ कि जानकर मैंने कभी कोई अधरम नहीं किया। लेकिन साथ ही अच्छे काम भी ज्यादह नहीं किये। आज अगर मौका हाथ लगा है, तो एक अच्छे कामको क्यों जाने दूँ ?

(दोनोंका प्रस्थान।)

[जोहरतउन्निसाका फिर प्रवेश।]

जोहरत—मैं इतनी नाचीज, निकम्मी और नाकाम हूँ! अब्बाके किसी काम नहीं आती। सिर्फ एक बोझ हूँ!—हायरे निकम्मी औरतोंकी जात! मा-बापकी यह हालत देखती हूं पर कुछ कर नहीं सकती। बीच बीचमें सिर्फ गर्म आँसू बहाती हूं।—लेकिन मैं चाहे जो हो, कुछ करूँगी, कुछ—जो पहाड़की चोटीसे कूदनेकी तरह दिलेरीका और कत्लकी तरह खौफनाक काम होगा। देखूँ।

चौथा दृश्य।

स्थान—काश्मीर। राजा पृथ्वीसिंहका आरामबाग।

समय—सन्ध्या।

[सुलेमान अकेला टहल रहा है।]

सुलेमान—इलाहाबादसे भागकर आखिरको इस दूर पहाड़ी मुल्क काश्मीरमें आना पड़ा। अब्बाको मदद देनेके लिए निकला। कुछ न कर सका।—यह मुल्क बड़ा ही खूबसूरत और अच्छा है।—जैसे एक जमा हुआ गाना—एक मुसव्विरका खींचा हुआ ख्वाब, एक खुमारीसे भरा हुआ हुस्न है। गोया बहिश्तकी एक हूर आसमानसे उतर आकर, सैर करनेसे थककर, पैर फैलाकर, बर्फके पहाड़ (हिमालय) का सहारा लेकर, बाईं हथेली पर गाल रखकर, नीले आसमानकी तरफ ताक रही है।—यह गानेकी आवाज कैसी सुन

पड़ती है!   (दूर पर गाना सुन पड़ता है।)

सुलेमान—यह गानेकी आवाज तो धीरे धीरे धीरे पास ही आती जाती है।—वे एक सजी हुई नावपर बैठी हुई कई औरतें खुद डाँड चलाती गाती हुई इधर ही आ रही हैं।—कैसा अच्छा कैसा मीठा गाना है !

[एक सजे हुए बजेरे पर श्रृंगार किये हुए स्त्रियोंका प्रवेश और गाना।]

बिहाग—तिताला।

समय सब यों ही बीता जाय।
आवेगा सँग कौन हमारे, आवे सो आजाय ॥ समय० ॥
छोटा बजरा सजा हमारा, हिलता डुलता जाय।
जुही चमेलीके हारोंका हिलना रहा लुभाय ॥ समय० ॥
फहराती रेशमी पताका धीमी हवा सुहाय।
नदिया भीतर बालम बजरा हिलता डुलता जाय ॥ समय० ॥
प्रेमी नये मुसाफिर सारे नये प्रेमको पाय ।
मगन उसीमें लगन लगाये हिये न प्रेम समाय ॥ समय० ॥
मुँहमें हँसी लसी आँखोंमें रही खुमारी छाय।
बहते जाते प्रेम पंथमें दुनिया दूर बहाय ॥ समय० ॥
पश्चिमका आकाश देखिए सन्ध्याकाल सुहाय।
यह लाली अनुराग सरीखी जीमें रही समाय ॥ समय० ॥
मधुर स्वप्नसा उधर चाँद वह देख पड़े छबि छाय।
उमँग भरी नदिया लहराती कलधुनि रही सुनाय ॥ समय० ॥
सीतल मंद सुगंध पवनमें बंसी-धुनि सरसाय।
छुटे फुहारा हर्ष-हँसीका लीजे गले लगाय ॥ समय० ॥

१ स्त्री—ऐ सुन्दर नौजवान ! आप कौन हैं ?

सुले०—मैं दाराशिकोहका लड़का सुलेमान हूँ ।

१ स्त्री—बादशाह शाहजहाँके लड़के दाराशिकोह ।—उनके बेटे हैं आप !

सुले०—हाँ, मैं उनका बेटा हूँ।

१ स्त्री—और मैं कौन हूं, यह तुमने नहीं पूछा सुलेमान ! मैं काश्मीरकी मशहूर नाचने--गानेवाली--राजाकी प्यारी रंडी हूं। ये मेरी सहेलियाँ हैं।--आओ हमारे साथ इस नाव पर।

सुले०—तुम्हारे साथ ? हाय बदनसीब औरत ! किस लिये ?

१ स्त्री—सुलेमान ! तुम इतने नन्हें नादान नहीं हो। तुम हमारे पेशेको तो जानते हो।

सुले०---जानता हूँ। जानता हूँ, इसीसे तुम पर मुझे इतना तरस है। यह रूप, यह जवानी, क्या पेशेकी चीज है ? रूप तन है, मोहब्बत उसकी जान है। ऐ औरत बेजानके तन को लेकर मैं क्या करूंगा ?

१ स्त्री---क्यों ? हम क्या प्यार मोहब्बत करना नहीं जानतीं ?

सुले०—सीखोगी कहाँसे बताओ ! जिन्होंने हुस्नको बाजारकी चीज बना रक्खा है, जो अपनी हँसी तक खरीदारके हाथ बेचती हैं–वे प्यार करेंगी किस तरह ? प्यार तो सिर्फ देना ही चाहता है—वह सखी (दानी) का ही सुख है--भला उस सुखको तुम किस तरह समझ सकोगी मैया !

१ स्त्री---तो हम क्या कभी किसीको प्यार नहीं करतीं ?

सुले०---करती हो—तुम प्यार करती हो —जरतारी पगड़ीको, हीरेकी अंगूठीको, कामदार जूतेको, हाथीदाँतकी छड़ीको । तुम प्यार कर सकती हो--घुँघराले बालोंको, बड़ी आँखोंको, खूबसूरत

चेहरेको, लाल लाल होठोंको । मेरा यह खूबसूरत चेहरा और गोरा रंग देखा है, या मैं बादशाहका पोता हूँ—यह सुना है, इसीसे शायद आशिक हो गई हो । यह तो प्यार नहीं है । प्यार होता है दो दिलोंमें ।—जाओ मैया !

२ स्त्री—राजासाहब आरहे हैं ।

१ स्त्री—आज ऐसे बेवक्त ?—चलो ।—ऐ जवान ! तुम इसका फल पाओगे ।

सुले०—क्यों खफा होती हो मैया ?—तुम लोगोंसे मुझे नफरत या दुश्मनी नहीं है । सिर्फ तरस, बेहद तरस आता है ।

(गाते गाते स्त्रियों का प्रस्थान ।)

सुले०—कैसे ताज्जुबकी बात है ।—यह हूरोंका हुस्न, यह आखोंकी चमक, यह अदा, यह कोयलका गला—इतना खूबसूरत—मगर इतना गंदा !

(टहलना ।)

[श्रीनगरके राजा पृथ्वीसिंहका प्रवेश ।]

राजा—शाहजादा अफसोस !

सुले०—क्यों राजासाहब ?

राजा—मैंने तुम्हें विपत्तिमें निराश्रय देखकर आश्रय दिया था; और भरसक सुखसे रक्खा था । तुम्हारे लिये मैंने औरंगजेबकी सेनासे युद्ध भी किया ।

सुले०—राजासाहब मैंने कभी इससे इनकार नहीं किया ।

राजा—इस समय भी शायस्ताखाँ बादशाहकी ओरसे—तुम्हें पकड़ा देनेके लिए—बहुत कुछ कह सुन रहे थे—लालच दिखा रहे थे । मैं तब भी राजी नहीं हुआ ।

सुले०—मैं आपका हमेशा अहसानमंद रहूँगा ।

राजा—मगर तुम ऐसे ओछे, खोटे और बदमाश हो, यह मैं न जानता था।

सुले०—यह क्या राजासाहब !

राजा—मैंने तुम्हें अपने महलके बाहरके बागमें टहलनेके लिये छोड़ दिया था। तुम वहांसे भीतर आरामबागमें घुसकर मेरी रखैलसे हँसी दिल्लगी करोगे, यह मुझे मालूम न था।

सुले०—राजासाहब ! आपको धोखा हुआ—

राजा—तुम सुन्दर, नौजवान, शाहजादे हो। मगर इसीसे इस

सुले०—राजासाहब मैं—

राजा—जाओ शाहजादा! सफाई देना बेकार है।

(दोनोंका दो ओर प्रस्थान ।)

पाँचवाँ दृश्य ।

स्थान—प्रयाग । औरंगजेबका डेरा ।

समय—रात ।

[औरंगजेब अकेले ।]

औरंग०—कैसे जीवटका आदमी यह राजा जसवंतसिंह है! खेजुवा के मैदानजंगमें पिछली रातको मेरी बेगमोंके डेरे तक लूट कर एक बाढ़की तरह मेरी फौजके ऊपरसे चला गया!—ताज्जुब! जो हो, शुजासे इस लड़ाईमें जीत गया।—लेकिन उधर फिर काली घटा उठ रही है। और एक आँधी आवेगी। शाहनवाज और दारा। साथ जसवंतसिंह भी है। खतरेकी जगह है। अगर—नहीं, वह न- करूँगा। इस जयसिंहकी मार्फत ही करना होगा।—यह लो, राजा साहब आही गये।

[जयसिंह का प्रवेश ।]

जय०—जहाँपनाहने मुझे याद किया है ?

औरंग०—हाँ, मैं आपकी राह देख रहा था। आइए—ओः शिद्दतकी गर्मी पड़ रही है ।

जय०—बड़ी गर्मी है !

औरंग०—मेरे बदनसे जैसे आगकी चिनगारियाँ निकल रही हैं ।—आपकी तबीयत तो अच्छी है ?

जय०—जहाँपनाहकी मेहरबानीसे बन्दा बहुत अच्छा है ।

औरंग०—देखिए राजासाहब ! मैं कल सबेरे दिल्लीको लौटूंगा, आप भी मेरे साथ लौटेंगे न ?

जय०—जैसी आज्ञा हो—

औरंग०—मैं चाहता हूं, आप मेरे साथ चलें ।

जय०—जो आज्ञा, मैं आठों पहर तैयार हूं। जहाँपनाहकी आज्ञाका पालन करनेहीमें मुझे आनन्द है ।

औरंग०—सो जानता हूं राजासाहब। आप ऐसा दोस्त इस दुनियामें मुश्किलसे मिलेगा। आपको मैं अपना दाहना हाथ समझता हूं ।

(जयसिंहका सलाम करना ।)

औरंग०—राजासाहब ! बड़े अफसोसकी बात है कि महाराज जसवन्तसिंह मेरा डेरा और रसद लूटकर ही चुप नहीं हैं। वे बागी शाहनवाज और दाराके साथ मिल गये हैं ।

जय०—उनकी मूर्खता है ।

औरंग०—मैं अपने लिए अफसोस नहीं करता। राजासाहब ही अपनी शामत आप बुला रहे हैं ।

जय०—बड़े दुःखकी बात है !

औरंग०—खास कर आप उनके जिगरी दोस्त हैं। आपकी खातिरसे मैंने उनकी गुस्ताखी माफकी है। यहाँ तक कि मैं उनकी इस लूट-पाटको भी माफ करनेके लिए तैयार हूँ—सिर्फ आपके लिहाजसे—अगर वे अब भी चुप होकर बैठ जायँ।

जय०—मैं क्या एक दफा उनसे मिलकर कहूँ ?

औरंग०—कहनेसे अच्छा होगा। मुझे आपके लिए फिक्र है। वे आपके दोस्त हैं, इसी लिए मैं उन्हें अपना दोस्त बनाना चाहता हूँ। उन्हें सजा देनेमें मुझे बड़ी तकलीफ होगी।

जय०—अच्छा मैं उनसे मिलकर कहूँगा !

औरंग०—हाँ कहिएगा। और यह भी जता दीजिए कि अगर वे इस लड़ाईमें किसीकी तरफ न होंगे तो मैं आपकी खातिरसे उनके सब कुसूर माफ कर दूँगा, और उन्हें गुजरातका सूबा तक देनेको तैयार हूँ—सिर्फ आपकी खातिरसे।

जय०—जहाँपनाह उदार हैं।—मैं उन्हें जरूर राजी कर सकूँगा

औरंग०—देखिए।—वे आपके दोस्त हैं। आपका फर्ज है उन्हें बचाना।

जय०—जरूर।

औरंग०—तो अब आप जाइए राजासाहब। दिल्ली रवाना होनेकी तैयारी कीजिए।

जय०—जो आज्ञा। (प्रस्थान।)

औरंग०—"सिर्फ आपकी खातिरसे।"—ढोंग तो बुरा नहीं रचा ! यह राजपूतोंकी कौम बहुत सीधी और जरासी फैयाजी दिखानेसे काबूमें आजानेवाली होती है।—मैं इस फनकीभी मश्क

कर रहा हूँ ।—बड़ा खौफनाक यह मेल है ।—शाहनवाज और जसवन्तसिंह—लेकिन मैं यहाँ पर खटका खाता हूँ इस अपने लड़के महम्मदसे । उसका चेहरा—(गर्दन हिलाना) कम बोलता है । मेरे बारेमें बेएतवारीका बीज न जाने किसने उसके जीमें बो दिया है ! क्या जहानाराने ऐसा किया है ?—वह लो, महम्मद आ ही गया ।

[महम्मदका प्रवेश ।]

महम्मद—अब्बा, आपने मुझे बुला भेजा है ?

औरंग०—हाँ । मैं कल दिल्लीको लौट जाता हूँ । तुम शुजाका पीछा करना । मीरजुमलाको तुम्हारी मददके लिये छोड़े जाता हूं ।

मह०—जो हुक्म अब्बा ।

औरंग०—अच्छा जाओ ।—खड़े हो ! इस बारेमें कुछ कहना है ?

मह०—नहीं अब्बा । आपका हुक्म ही काफी है ।

औरंग०—तो फिर ?

मह०—मेरी एक अर्ज है अब्बाजान !

औरंग०—क्या ?—चुप क्यों हो गये ! कहो बेटा।

मह०—बहुत दिनसे पूछूँ-पूछूँ कर रहा हूं । अब यह शक अपने दिलमें दबाकर रखना दुश्वार होगया है । बेअदबी माफ कीजिएगा ।

औरंग०—कहो ।

मह०—अब्बा ! बादशाह शाहजहाँ क्या कैद हैं ?

औरंग०—नहीं ! कौन कहता है ?

मह०—तो फिर वे किलेके महलमें क्यों रोक रक्खे गये हैं ?

औरंग०—इसकी जरूरत आपड़ी है ।

मह०—और छोटे चाचा—उन्हें भी इस तरह कैद रखनेकी

जरूरत है ?

औरंग०—हाँ।

मह०—और बाबाजानकी मौजूदगीमें आपके तख्त पर बैठने की भी जरूरत है ?

औरंग०—हाँ बेटा !

मह०—अब्बा ! (इतनाही कहकर सिर झुका लेना।)

औरंग०—बेटा ! सल्तनतके मामले बड़े टेढ़े होते हैं। इस उम्रमें तुम उनको नहीं समझ सकोगे। इसकी कोशिश मत करो।

मह०—अब्बाजान ! धोखेसे भोले भाईको कैद करना, मोहब्बत करनेवाले मेहरबान बापको तख्तसे उतारना, और दीनकी दुहाई देकर इस तख्त पर बैठना—इसे अगर राजनीति कहते हैं तो वह राजनीति मेरे लिये नहीं है।

औरंग०—महम्मद ! तुम्हारी तबीयत क्या कुछ खराब है ? जरूर ऐसी बात है !

मह०—(काँपती हुई आवाजमें) नहीं अब्बा ! फिलहाल मुझ ऐसा तन्दुरुस्त आदमी शायद हिन्दोस्तानमें और न होगा।

औरंग—फिर !— (महम्मद चुप रहता है ।)

औरंग०—बेटा, मेरे ऊपर तुम्हारे दिलमें जो एतबार था, उसे किसने डिगा दिया ?

मह०—खुद आपने।—अब्बाजान ! जब तक मुमकिन था, मैं आँख मूँदकर आप पर एतबार करता रहा। लेकिन अब गैरमुमकिन है। शकका जहर मेरी रगरगमें फैल गया है।

औरंग०—यही तुम्हारी सआदतमंदी है !—हो सकता है। चिरागके तले ही अँधेरा होता है।

मह०—सआदतमंदी !—अब्बाजान । सआदतमंदी क्या आज मुझे आपसे सीखनी होगी ! सआदतमंदी !—आपने अपने बूढ़े बापको कैद करके जो तख्त छीन लिया है, उसी तख्तको मैंने सआदतमंदीके खयालसे ही लात मारदी है । सआदतमंदी ! अगर मैं सआदतमंद न होता तो आज दिल्लीके तख्त पर औरंगजेब न बैठते, बैठता यही महम्मद ।

औरंग—सो जानता हूं बेटा ! इसीसे ताज्जुब कर रहा हूं ।—इस सआदतमंदीको न गँवाना बेटा !

मह०—ना, अब मुमकिन नहीं है ! बापका लिहाज—सआदतमंदी बहुत बड़ी और बहुत ही पाक चीज है । लेकिन उससे बढ़कर भी कोई ऐसी चीज है, जिसके आगे बाप-मा-भाई सब छोटे हो जाते हैं ।

औरंग०—मैं कहता हूं बेटा, सआदतमंदी न गँवाना । देखो, आगे चलकर यह सल्तनत तुम्हारी ही होगी ।

मह०—अब्बा मुझे आप सल्तनतका लालच दिखा रहे हैं ? मैं आपसे कह चुका हूं कि अपने फर्जका खयाल करके मैंने तख्त ताजको लात मार दी है । बाबाजान उस दिन यही सल्तनतका लालच दिखा रहे थे, आज आप फिर उसी सल्तनतका लालच दिखा रहे हैं ? हाय ! दुनियामें सल्तनत क्या ऐसी बेशकीमत चीज है ? और तमीज क्या ऐसी सस्ती है ? सल्तनतके लिये तमीज़दारीको (विवेक) लात मार दूं ? अब्बा आपने तमीजदारीके खिलाफ जो सल्तनत हासिल की है, वह सल्तनत क्या आकबतमें आपके साथ जायगी ?—लेकिन अगर आप तमीजदारीको न छोड़ते तो वह आपके साथ जाती ।

औरंग०—महम्मद !

मह०—अब्बा !

औरंग०—इसके क्या माने ?

मह०—इसके माने यह हैं कि मैंने आपके लिए सब गँवा दिया–आज आपको भी अपने भीतर खोजकर नहीं पाता—शायद आपको भी मैंने गँवा दिया। आज मुझ ऐसा कंगाल कौन है !—और आपने—आपने यह हिन्दोस्तानकी सल्तनत जरूर पाई है !–लेकिन उससे बढ़कर सल्तनत गँवा दी।

औरंग०—वह सल्तनत कौन सी है ?

मह०—मेरी सआदतमंदी !—वह कसा रतन, वह कैसी दौलत थी—जिसे आपने खो दिया—सो आज आपकी समझमें नहीं आता। जान पड़ता है, एक दिन समझमें आजायगा। (प्रस्थान।)

[औरंगजेब धीरे धीरे दूसरी ओरसे जाता है।]

छठा दृश्य।

स्थान—जोधपुरका महल।

समय—दोपहर।

[जसवन्तसिंह और जयसिंह।]

जय०—मगर इस रक्तपातसे आपको लाभ ?

जसवन्त०—लाभ ?–लाभ कुछ भी नहीं है।

जय०—तो इस वृथा रक्तपातकी क्या जरूरत है !—जब यह निश्चय है कि इस युद्धमें औरंगजेबहीकी जय होगी।

जसवन्त०—कौन जाने !

जय०—क्या आपने औरंगजेबको किसी युद्धमें हारते देखा है ?

जसवन्त०—नहीं । औरंगजेब वीर पुरुष है, इसमें सन्देह नहीं । उस दिन मैंने नर्मदा-युद्धके बीच उसे घोड़े पर सवार देखा था–उस दृश्यको मैं इस जीवनमें कभी न भूलूँगा–वह मौन था, उसकी दृष्टि तीक्ष्ण और भौहोंमें बल पड़े हुए थे–उसके चारों ओर तीर, गोले, बरस रहे थे, पर उधर उसका ध्यान ही न था । मैं उस समय विद्वेषके कारण जल रहा था, मगर मन-ही-मन उसे साधुवाद दिये विना भी मुझसे नहीं रहा गया ।–औरंगजेब वीर है ।

जय०—फिर ?

जसवन्त०—मैं नर्मदा-युद्धके अपमानका बदला चाहता हूं ।

जय०—औरंगजेबके डेरे लूटकर तो अपने उसका बदला चुका लिया ।

जसवन्त०—नहीं, यथेष्ट नहीं हुआ ! क्योंकि उस रसदकी कमीका पूरा करना औरंगजेबको क्या खलेगा ! अगर लूटकर चला न आता, शुजासे मिल जाता, तो खेजुवाके युद्धमें शुजाकी हार न होती । अथवा आगरेमें आकर बादशाह शाहजहाँको कैदसे छुड़ा देता ! तब भी एक बात थी !–बड़ा भ्रम हो गया ।

जय०—पर इससे आपको क्या लाभ होता ? बादशाह दारा हों, शुजा हों, या औरंगजेब ही हों—आपका क्या !

जसवन्त०—बदला !–मैं उन सबको विष-दृष्टि से देखता हूं । किन्तु सबसे अधिक विष-दृष्टिसे देखता हूं—इस शठ औरंगजेब को ।

जय०—फिर खेजुवाके युद्धमें आपने उनका पक्ष क्यों लिया था ?

जसवन्त०—उस दिन दिल्लीके शाही दरबारमें उसकी सब बातों पर मैंने विश्वास कर लिया था । उसने एकाएक ऐसा बढ़िया ढोंग रचा, ऐसा स्वार्थत्यागका अभिनय किया, ऐसी हृदयकी दीनता

प्रकट की कि मैं अचम्भमें आगया। मैंने सोचा, यह क्या ! मेरी जन्मकी धारणा, मेरा प्रकृतिगत विश्वास क्या सब भूल ही है ! ऐसे त्यागी, महत्, उदार, धार्मिक, पुरुषको मैंने अपनी कल्पनासे पापी समझ रक्खा था ! ऐसा जादू कर दिया कि सबसे पहले मैं ही "जय औरंगजेब की जय !" कहकर चिल्ला उठा। उसकी उस दिनकी वह जय—नर्मदाके या खेजुवाके युद्धसे भी अद्भुत है। किन्तु उस दिन खेजुवाकी युद्धभूमिमें फिर असली औरंगजेब देख पड़ा—वही कपटी, शठ, कुचक्री औरंगजेब नजर आया।

जय०—महाराज ! खेजुवाके मैदानमें आपसे रूखा बर्ताव करनेके कारण बादशाहको बड़ा पछतावा है। ऐसा अपराध कभी कभी सबसे होजाता है। बादशाहको पीछेसे यथार्थही पश्चात्ताप हुआ था।

जसवन्त०—राजासाहब ! आप मुझसे इस पर विश्वास करनेके लिए कहते हैं ?

जय०—मगर वह बात जाने दीजिये; बादशाह उसके लिये आपसे क्षमा भी नहीं चाहते और क्षमा-प्रार्थना करवाना भी नहीं चाहते। वे समझते हैं आपके पिछले आचरणसे उस अन्यायका बदला चुक गया। वे आपकी सहायता नहीं चाहते। वे चाहते हैं कि आप दारा का भी पक्ष न लीजिये और औरंगजेबका भी पक्ष न लीजिए। इसके बदलेमें वह आपको गुजरातका सूबा दे देंगे। आप एक कल्पित अपमानका बदला लेनेमें अपनी शक्तिका क्षय करके मोल लेंगे—औरंगजेबकी शत्रुता। और हाथ समेटे अलग बैठे रहनेसे उसके बदलेमें पावेंगे, एक बड़ा भारी उपजाऊ सूबा गुजरात। छाँट लीजिये। अपना सर्वस्व देकर अगर शत्रुता खरीदना चाहते हैं तो खरीदिये। यह सहज रोजगार की बात है-सिर्फ बेचना-खरीदना है।—देख लीजिये !

जसवन्त०—मगर दारा—

जय०—दारा आपके कौन हैं ? वे भी मुसलमान हैं, औरंगजेब भी मुसलमान हैं। आप अगर अपने देशके लिये युद्ध करने जाते तो मैं कुछ कहता ही नहीं। मगर दारा आपके कौन है ? आप किसके लिये राजपूत जातिका रक्तपात करने जा रहे हैं ? दाराकी ही अगर विजय हो—उससे आपका क्या लाभ है, आपकी जन्मभूमिका ही क्या लाभ है ?

जस०—तो आइए, हम देशके लिये युद्ध करें। मेवाड़के राणा राजसिंह, बीकानेरके राजा आप, और मैं, ये तीनों जने मिलकर मुगलोंके राज्यको एक फूँकसे उड़ा दे सकते हैं—आइए।

जय०—उसके बाद सम्राट् कौन होगा ?

जस०—क्यों ! राणा राजसिंह।

जय०—मैं औरंगजेबकी अधीनता स्वीकार कर सकता हूँ, मगर राजसिंहका प्रभुत्व नहीं मान सकता।

जस०—क्यों राजासाहब ?—वे अपनी जातिके हैं, इस लिये ?

जय०—अवश्य। अपनी जातिके दुर्वचन नहीं सहूँगा। मैं किसी ऊँची प्रवृत्तिका ढोंग नहीं रचता। संसार मेरे निकट एक बाजार है। जहाँ कम दामोंमें अधिक माल पाऊँगा, वहीं जाऊँगा। औरंगजेब कम दामोंमें अधिक दे रहा है। इस निश्चित सम्पत्तिको छोड़कर मैं अनिश्चितके लिये प्रयत्न करना नहीं चाहता।

जस०—हूँ।—अच्छा राजासाहब ! आप जाकर विश्राम करें। मैं सोच समझकर उत्तर दूँगा।

जय०—अच्छी बात है। सोचकर देखियेगा—यह केवल संसारमें बेचने-खरीदनेका मामला है। और हम स्वाधीन राजा न हो सकें,

राजभक्त प्रजा तो हो सकते हैं । राजभक्ति भी धर्म है। (प्रस्थान ।)

जस०—हिन्द साम्राज्य, कविका स्वप्न है । हिन्दुओंका हृदय बहुत ही सूखा, बिल्कुल ठंडा पड़ गया है । अब उसमें परस्पर जोड़ नहीं लग सकता। "स्वाधीन राजा न हो सकें, राजभक्त प्रजा तो हो सकते हैं।" ठीक कहा जयसिंह। किसके लिये युद्ध करने जाऊँ ? दारा मेरा कौन है ?–नर्मदा–युद्धका बदला खेजुवाके युद्ध-में ले ही लिया है ।—

[महामायाका प्रवेश ।]

महामाया—महाराज इसको बदला कहते हैं ! मैं अबतक आड़में खड़ी हुई तुम्हारे इस पौरुषहीन—समभार काँटेके पलड़ोंके ऐसे—आन्दोलनको देख रही थी ।—वाह ! खूब ! अच्छा समझ लिया कि बदला चुका लिया। इसे बदला कहते हैं महाराज ? औरंगजेबके पक्षमें होकर उसके डेरे लूटकर भागनेका नाम बदला है ? इसकी अपेक्षा तो वह हार अच्छी थी । यह हारके ऊपर पाप का बोझ है । राजपूत जाति विश्वासघात कर सकती है, यह तुमने ही दिखलाया ।

जस०—महामाया लूट करनेके पहले मैंने औरंगजेबका पक्ष छोड़ दिया था ।

महामाया०—और उसके पीछे उसके डेरे लूट लिये ।

जस०—युद्ध करके लूट की है, डकैती नहीं की ।

महा०—इसे युद्ध कहते हैं ?—धिक्कार है !

जस० —महामाया ! इसके सिवा क्या और कोई बात ही नहीं है ? दिनरात तुम्हारी तीखी झिड़कियाँ सुननेके लिये ही क्या मैंने तमसे ब्याह किया था ?

महा०—और नहीं तो ब्याह क्यों किया था ?

जस०—क्यों ! विचित्र प्रश्न है !—लोग ब्याह किसलिये करते हैं ?

महा०—हाँ, क्यों ? संभोगके लिए ? विलास-वासनाको चरितार्थ करनेके लिए ? यही बात है ?—यही बात है ?

जस०—(कुछ इधर-उधर करके) हाँ—एक तरहसे यही कहना पड़ेगा ।

महा०—तो फिर एक वेश्या क्यों नहीं रखली ?

जस०—जान पड़ता है, आँधी आगई ।

महा०—महाराज ! जो तुम केवल अपनी पशुप्रवृत्तिको चरितार्थ करना चाहते हो, जो कामकी सेवा करना चाहते हो—तो उसका स्थान कुलकामिनीका पवित्र अन्तःपुर नहीं है–उसका स्थान वेश्याका सुसज्जित नरक है । वहीं जाओ । तुम रुपया दोगे, वह रूप देगी । तुम उसके पास लालसाके मारे जाओगे, और वह तुम्हारे पास आवेगी पापी पेटकी ज्वालासे । स्वामी और स्त्रीका सम्बन्ध वैसा नहीं है ।

जस०—फिर ?

महा०—स्वामी और स्त्रीका सम्बन्ध प्रेमका सम्बन्ध है । वह प्रेम ऐसा वैसा नहीं है । जो प्रेम प्रियतमको दिन-दिन नजरोंसे नहीं गिराता, दिन-दिन और भी प्यारा बनाता जाता है, जो प्रेम अपनी चिन्ताको भूल जाता है, और अपने देवताके चरणोंमें अपनी बलि देता है, जो प्रेम प्रातःकालके सूर्यकी किरणोंकी तरह जिसके ऊपर पड़ता है उसीको चमका देता है–उज्ज्वल बना देता है, गंगाके जलकी तरह जिसके ऊपर पड़ता है उसीको पवित्र कर देता है, देवताके वर-

दानकी तरह जिसके ऊपर बरसता है उसीको भाग्यशाली बना देता है,—यह वही प्रेम है। यह स्थिर, शान्त और आनन्दमय है—क्योंकि यह स्वार्थत्यागहीका रूपान्तर है।

जस०—महामाया तुम मुझसे क्या वैसा ही प्रेम करती हो ?

महा०—हाँ। तुम्हारे गौरवको गोदमें लेकर मैं मर सकती हूँ। उस गौरवके लिए मुझे इतनी चिन्ता, इतना आग्रह है कि उस गौरवको मलिन होते देखनेके पहले ही मैं चाहती हूँ कि अन्धी हो जाऊँ। राजपूत जातिके गौरव—मारवाड़के गौरवका तुम्हारे हाथोंसे गला घोंटा जाय, इसके पहले ही मैं मरना चाहती हूँ। मैं तुमसे इतना प्रेम करती हूँ।

जस०—महामाया !—

महा०—आँख उठाकर देखो—यह धूप पड़नेसे चमकती हुई पर्वतमाला, दूरपर ये बालूके ढेर ! आँख उठाकर देखो—यह पहाड़ी नदी, लहरा रही है, जैसे सौन्दर्य झिलमिला रहा है। आँख उठाकर देखो, देखो—यह नीले रंगका आकाश, जैसे वह अपनी नीलिमा निचोड़कर दिखा रहा है। यह उल्लुओंका शब्द सुनो। साथ ही साथ सोचो, इस जगह पर एक दिन देवोंका निवास था। मारवाड़ और मेवाड़, दोनों वीरताके युग्म बालक हैं; महत्त्वके आकाशमें बृहस्पति और शुक्र ग्रहके समान चमक रहे हैं। धीरे धीरे उस महिमाका महासमारोह मेरे सामनेसे चला जा रहा है। आओ चारणोंके बालको ! गाओ वही गान।

जस०—महामाया !—

महा०—बोलो नहीं। यह इच्छा जब मेरे मनमें आती है, तब मझे जान पड़ता है कि यह मेरा पूजाका समय है। घंटा-शंख

बजाओ, बोलो नहीं।

जस०—अवश्य ही इसे कोई मानसिक रोग होगया है।

(धीरे धीरे प्रस्थान।)

महा०—कौन हो तुम सुन्दर, सौम्य, शान्त,—जो मेरे आगे आकर खड़े होगये ! (चारणोंके बालकोंका प्रवेश) गाओ बालको ! वही जन्मभूमिका गाना गाओ।

गजल सोहनी—ताल धमार।

देश ऐसा खोजनेसे भी न पाओगे कहीं।
श्रेष्ठ सबसे जन्म भूमि, इसे भुलाओगे नहीं॥
अन्न—धन फूलों—फलोंसे है भरी धरती हरी।
देशभक्तो, श्रेय भी उत्कर्ष पाओगे यहीं॥
स्वप्नसे तैयार त्यों स्मृतिसे घिरा यह देश है।
है यही सर्वस्व, इसको तुम गवाँओगे नहीं॥
चन्द्र—सूर्य-प्रकाश, ऋतुओंका प्रभाव प्रसन्नता।
है कहाँ ? ये खूबियाँ ऐसी न पाओगे कहीं॥
खेलती ऐसे बिजलियाँ श्याममेघोंमें कहाँ ?
पक्षियोंके शब्द ऐसे तुम सुना दोगे कहीं॥
हैं पवित्र नदी कहाँ इतनी, पहाड़ विचित्र ही ?
इतने खेत हरेभरे हमको दिखा दोगे कहीं ?
फूल पेड़ोंमें विचित्र प्रकारके फूला करें।
बोलते पक्षी विविध हरकुंजमें रहते यहीं॥

भाइयोंका नेह ऐसा ही मिलेगा किस जगह ?
प्यार माका बापका ऐसा न पाओगे कहीं ॥
जननि, तेरे श्री-चरण रखकर हृदयमें अन्तको ।
मर सकें हम जन्मही की भूमिके ऊपर यहीं ॥

चौथा अंक ।

पहला दृश्य ।

स्थान—टाँड़ेमें शुजाका महल ।

समय—सन्ध्या ।

[पियारा गा रही है ।]

कव्वाली ।

किसने सुनाया सजनी, यह श्याम-नाम मुझको ।
भूला है उस घड़ीसे दुनियाका काम मुझको ॥
कानोंकी राह जाकर, मनमें रहा समाकर ।
बेचैन भी बनाकर, भाता मुदाम मुझको ॥ किसने० ॥
इस नाममें सखी, बस, इतना मधुर भरा रस ।
छुटता न मुँहसे, भाया तकियाकलाम मुझको ॥ किसने० ॥
मैं रट रही हूँ उसको, उसमें समा रही हूँ ।
कैसे मिलेगा, बोलो, आराम श्याम मुझको ॥ किसने०॥

[शुजाका प्रवेश ।]

शुजा—सुनती हो पियारा, इस आखिरी लड़ाईमें भी दाराने और ंगजेबसे शिकस्त खाई ।

पियारा—शिकस्त खाई न !

शुजा—और ंगजेबके ससुर शाहजादा दाराकी तरफसे लड़े, और लड़ाईमें मारे गये—कहो कैसी बात सुनाई ?

पियारा—इसमें खास बात क्या हुई ?

शुजा—खास बात नहीं हुई ? बूढ़ा सिपाही अपने दामादके खिलाफ लड़कर मारा गया–सिर्फ फर्जके लिये ।—सुभान अल्लाह !

पियारा—इसके लिये मैं "क्या बात है" तक कहनेको तो तैयार हूं, पर इसके आगे नहीं बढ़ सकती।

शुजा—जसवन्तसिंह अगर इस मर्तबा अपनी फौज लेकर दाराकी मदद करता—लेकिन नहीं मदद की। दाराको मदद देना मंजूर करके पीछे क़ौलसे फिर गया।

पियारा—ताज्जुबकी बात है!

शुजा—इसमें ताज्जुब क्या है पियारा? इसमें ताज्जुबकी कोई बात नहीं है।

पियारा—नहीं है, क्यों? मैं समझी, शायद है, इसीसे ताज्जुब कर रही थी।

शुजा—राजा जसवन्तने खेजुवाकी लड़ाईमें जिस तरहकी दगाबाजी की थी, इस मर्तबा दाराको भी ठीक उसी तरहका धोखा दिया है। इसमें ताज्जुब ही क्या है!

पियारा—और क्या—मैं ताज्जुब कर रही हूं—

शुजा—फिर ताज्जुब!

पियारा—ना ना। यह नहीं। पहले पूरा हाल सुन तो लो।

शुजा—क्या?

पियारा—मैं यही सोच कर ताज्जुब कर रही हूं कि पहले क्या सोच कर ताज्जुब कर रही थी!

शुजा—ताज्जुब अगर कहो, तो ताज्जुब होनेकी एक बात हुई है।

पियारा—वह क्या?

शुजा—वह यह कि औरंगजेबका बेटा महम्मद मेरी लड़कीके लिए अपने बापको छोड़ कर मुझसे आ मिला है। क्या सोचकर वह ऐसा कर रहा है।

पियारा—इसमें ताज्जुब क्या है ! मोहब्बतमें पड़कर लोग इससे भी बढ़कर सख्तीके काम कर डालते हैं । चाहके लिये लोग दीवारें फाँदते हैं, छतोंसे कूद पड़े हैं, दरिया पर गये हैं, आगमें फांद पड़े हैं, जहर खाकर मर गये हैं । यह तो एक महज मामूली बात है । बापको छोड़ दिया । बड़ा भारी काम किया ! यह तो सभी करते हैं । मैं इसके लिए ताज्जुब करनेको तैयार नहीं हूं ।

शुजा—लेकिन—नहीं—यह एक बड़ा भारी ताज्जुब है । जो चाहे सो हो, लेकिन महम्मदने और मैंने मिलकर औरंगजेबकी फौजको बंगालसे मार भगाया है ।

पियारा—इस लड़ाईके सिवा तुम्हारे पास क्या और कोई जिक्र ही नहीं है ? मैं जितना तुम्हें भुला रखना चाहती हूं, उतना ही तुम उसी बातको छेड़ते हो ।

शुजा—एक तो जंगमें यों ही बड़ा भारी मजा है और फिर इसके सिवा—　　　　[बाँदीका प्रवेश ।]

बाँदी—जहाँपनाह एक फकीर हाजिर होना चाहता है ।

पियारा—कैसा फकीर है—लंबी दाढ़ी है ?

बाँदी—हाँ सरकार ! वह कहता है, बड़ी जरूरत है, अभी मिलना चाहता हूं ।

शुजा—अच्छा, यहीं लेआ ।—पियारा तुम भीतर जाओ ।

पियारा—अच्छी बात है, तुम मुझे भगाये देते हो ।—अच्छा ! मैं जाती हूं ।　　　　(प्रस्थान ।)

शुजा—जा, उसे यहाँ भेज दे ।　　　　(बाँदीका प्रस्थान ।)

शुजा—पियारा एक हँसीका फुहारा—एक बे मतलबकी बातोंका दरिया है । इसी तरह वह मुझे जंगकी फिक्रोंसे बहला रख-

ती है—

[दिलदारका प्रवेश।]

दिलदार—शाहजादा साहब तसलीम ! आपके नामका एक खत है —! (पत्रदेना।)

शुजा—(पत्र लेकर खोलकर पढ़कर) यह क्या ! तुम कहाँसे आये हो ?

दिल० —क्या खतमें दस्तखत नहीं हैं शाहजादा साहब !—चेहरा देखनेसे ही शाहजादेकी अक्लमंदीका पता चलता है। खूब चाल चली।—

शुजा—क्या चाल ?

दिल०—शाहजादेने शुजाकी लड़कीसे शादी करके—ओः—खूब तदबीरकी है। सामनेसे तीर मारनेकी बनिस्बत पीछेकी तरफसे—ओः ! औरंगजेबका बेटा ही तो ठहरा।

शुजा—पीछेसे तीर मारेगा कौन ?

दिल०—डर क्या है—मैं क्या यह बात सुल्तान शुजासे कहने जाता हूं ! यह खत उन्हें कहीं भूल कर दिखा न दीजियेगा शाहजा-दासाहब—

शुजा—अरे वाह, मैं ही तो सुल्तान शुजा हूं। महम्मद तो मेरा दामाद है !

दिल०—हाँ !—चेहरा तो आपका अच्छे नौजवानके ऐसा है। सुनिये—ज्यादह चालाकी न करियेगा। आप अगर महम्मद हैं तो मैं जो कह रहा हूं तो ठीक समझ ही रहे होंगे। और—अगर सुल्तान शुजा हैं तो जो मैं कह रहा हूं उसका एक हर्फ भी सच नहीं है।

शुजा—अच्छा तुम इस वक्त जाओ। इसकी तदबीर मैं अभी

करता हूं—तुम जाकर आराम करो, जाओ ।

दिल०—जो हुक्म—(प्रस्थान ।)

शुजा—यह तो बड़ी उलझनका मामला दरपेश है । बाहरी दुश्मनोंके मारे ही नाकमें दम है । उसके ऊपर औरंगजेब, तुमने घरमें भी दुश्मन लगा दिये हैं ! लेकिन जाओगे कहाँ ! अभी हाथों हाथ तदबीर करता हूं । तकदीरसे यह खत मेरे हाथ पड़ गया ।—वह महम्मद आरहा है ।

[महम्मदका प्रवेश ।]

शुजा—महम्मद !—पढ़ो यह खत ।

मह०—(पढ़कर) यह क्या ! यह क्या ! यह किसका खत है ?

शुजा—तुम्हारे वालिदका ! दस्तखत नहीं देखते ? तुमने खुदाको गवाह करके उसे खत लिखा था कि तुमने अपने बापकी जो मुखालफत की है उसके एवजमें अपने ससुर—यानी मुझको धोखा देकर औरंगजेबको खुश करोगे ।

मह०—मैंने अब्बाको कोई खत ही नहीं लिखा । यह जाली खत है ।

शुजा—मुझे यकीन नहीं आता । मैं एतबार नहीं कर सकता । तुम आज इसी घड़ी मेरे घरसे चले जाओ ।

मह०—यह क्या !—कहाँ जाऊँ ?

शुजा—अपने बापके पास ।

मह०—लेकिन मैं कसम खाता हूं—

शुजा—नहीं बहुत हो चुका ।—मैं सामनेकी लड़ाईमें हारूँ या जीतूँ, यह अलग बात है । अपने घरमें दुश्मनको—आस्तीनमें साँपको—पाल नहीं सकता ।

मह०—मैं—

शुजा—मैं कुछ सुनना नहीं चाहता। जाओ, अभी जाओ।

(महम्मदका प्रस्थान।)

शुजा—हाथोंहाथ तदबीर कर दी। औरंगजेबने बड़ी भारी चाल खेली थी—मगर जायगा कहाँ!—वह लो, पियारा फिर आ-गई!

[पियाराका प्रवेश।]

शुजा—पियारा! पकड़ लिया।

पियारा—किसे?

शुजा—महम्मदको। साहबजादेने मुझपर फंदा डाला था। तुमसे मैं अभी कह रहा था न कि यह बड़े खटकेकी बात है!—इस वक्त सब हाल खुल गया। पानीकी तरह साफ हो गया।—उसे घरसे निकाल दिया है।

पियारा—किसे?

शुजा—महम्मदको।

पियारा—यह क्यों!

शुजा—बाहर दुश्मन, घरमें दुश्मन,—शाबास भैया—खूब अक्लमन्दी की थी!—मगर चालू चल न सकी। मैंने पकड़ लिया।—यह देखो खत।

पियारा—(पत्र पढ़कर) तुम्हारा दिमाग खराब होगया है। हकीमको दिखाओ।

शुजा—क्यों?

पियारा—यह जाली— झूठा खत है। समझ नहीं सके? औरंगजेबका फरेब। इतना भी नहीं समझ सकते?

शुजा—नहीं, यह अच्छी तरह समझमें नहीं आता।

पियारा—यही अक्ल लेकर तुम चले हो और ंगजेबसे भिड़ने ! दहीके धोखे कपास खागये ! मुझसे एक दफा पूछा भी नहीं ! दामादको निकाल दिया !—चलो अब चलकर लड़की और दामादको समझायें ।

शुजा—यह खत जाली है ?—ऐसी बात !—कहाँ, यह तो तुमने नहीं कहा था ।—खैर, होशियार रहना अच्छी ही बात है ।—

पियारा—इसीसे दामादको निकाल दिया ।

शुजा—बेशक, बड़ी भारी भूल हो गई, यही कहना चाहिये ।—खैर, सुनो, एक तदबीर करता हूँ । लड़कीको उसके साथ किये देता हूँ और मुनासिब तौरसे दहेज भी दे देता हूँ ! देकर लड़कीको उसकी सुसराल भेजता हूँ । इसमें कुछ ऐब नहीं है । डर क्या है—चलो, दामादको यही चल कर समझावें । यही कहकर उसे बिदा कर दें ।

पियारा—लेकिन बिदा क्यों कर दोगे ?

शुजा—वक्त खराब है । होशियार रहना अच्छा है । समझती नहीं हो ।—चलो, चलकर समझावें । (दोनों जाते हैं ।)

दूसरा दृश्य ।

स्थान—जिहनखाँके घरमें दाराके रहनेका कमरा ।

समय—रात ।

[सिपर और जोहरत खड़े हैं ।]

जोहरत—सिपर !

सिपर—क्या ?

जोहरत—देखते हो ?

सिपर—क्या ?

जोहरत—कि हम लोग यों जंगली जानवरोंकी तरह एक जंगलसे दूसरे जंगलमें मारे मारे फिरते हैं; खूनीकी तरह एक गढ़ेसे भागकर दूसरे गढ़ेमें मुँह लुकाते हैं; रास्तेके कंगालकी तरह एक आदमीके दरवाजे पर लात खाकर दूसरेके दरवाजे पेट भर खानेके लिए जाते हैं।—देखते हो ?

सिपर—देखता हूं। लेकिन चारा क्या है ?

जोहरत—चारा क्या है ? मर्द हो तुम—बेधड़क कह रहे हो कि चारा क्या है ? मैं अगर मर्द होती, तो इसकी तदबीर करती।

सिपर—क्या तदबीर करतीं ?

जोहरत—(छुरा निकालकर) यही छुरा लेकर लुटेरे दगाबाज औरंगजेबकी छातीमें घुसेड़ देती।

सिपर—खून !!!

जोहरत—हाँ खून; चौंक पड़े ?—खून। लो यह छुरा, दिल्ली जाओ। तुम बच्चे हो, तुम पर किसीको शक न होगा—जाओ।

सिपर—कभी नहीं। खून नहीं करूँगा।

जोहरत—डरपोक ! देखते हो—माँ मर रही हैं ! देखते हो—अब्बाजान पागल होगये हैं। बैठे बैठे यह सब देख रहे हो ?

सिपर—क्या करूँ !

जोहरत—डरपोक ! बुज़दिल !

सिपर—मैं बुज़दिल नहीं हूं जोहरत ! मैं मैदाने जंगमें अब्बाके पास हाथी पर बैठकर लड़ा हूं। मुझे जान जाने का डर नहीं है। लेकिन खून नहीं करूँगा।

जोहरत—अच्छी बात है। (प्रस्थान।)

सिपर—बहन यह गुस्सा बेकार है ! कोई चारा नहीं है।

(प्रस्थान !)

——:※:——

तीसरा दृश्य ।

स्थान—नादिराका कमरा ।

समय—रात ।

[पलंग पर नादिरा पड़ी है । पास दारा है ।

दूसरी तरफ़ सिपर और जोहरत हैं ।]

दारा—नादिरा ! दुनियाने मुझे छोड़ दिया है—खुदाने मुझे छोड़ दिया है । सिर्फ तुमने अबतक मेरा साथ नहीं छोड़ा था । तुम भी मुझे छोड़ चलीं !

नादिरा—मेरे लिए तुमने बहुत मुसीबतें झेलीं हैं प्यारे !—और—

दारा—नादिरा ! दुखकी जलनसे पागल होकर मैंने तुमको बहुत सख्त सख्त बातें सुनाई हैं।—

नादिरा—प्यारे ! मुसीबतमें तुम्हारा साथ देना ही मेरे लिये बड़े फख्र की बात है। इसीकी याद साथ लेकर मैं दूसरी दुनियाको जाती हूँ —सिपर—बेटा ! बेटी जोहरत ! मैं जाती हूँ—

सिपर—तुम कहाँ जाती हो अम्मी !

नादिरा—कहाँ जाती हूँ, यह मैं नहीं जानती। मगर जिस जगह जाती हूँ वहाँ शायद कोई रंज या मुसीबत नहीं है—भूख प्यासकी तकलीफ नहीं है—दुख-दर्द-बीमारी नहीं है—लड़ाई-झगड़ा और डाह नहीं है ।

सिपर—तो हम भी वहीं चलेंगे अम्मी—चलो अब्बा ! अब

नहीं सहा जाता ।

नादिरा—अब तुम्हें कोई तकलीफ नहीं उठानी पड़ेगी बेटा ! तुम जिहनखाँके घरमें आगये हो । अब कुछ दुख न मिलेगा ।

सिपर—यह जिहनखाँ कौन है अब्बा ?

दारा—मेरा एक पुराना दोस्त ।

नादिरा—तुम्हारे अब्बाने दो मर्तबा उसकी जान बचाई है । वह तुम्हारी तकलीफें रफा कर देगा और मदद देगा ।

सिपर—लेकिन मैं उसे कभी प्यार न कर सकूँगा ।

दारा—क्यों सिपर ?

सिपर—उसका चेहरा--उसकी नजर नेकीका नमूना नहीं है । अभी वह अपने एक नौकरसे न जानें क्या फुसफुस करके कह रहा था —और मेरी तरफ ऐसी चोरकी सी नजरसे देख रहा था कि मुझे खौफ मालूम हुआ–मुझे बड़ा ही खौफ मालूम हुआ अम्मी ! मैं दौड़कर तुम्हारे पास चला आया ।

दारा—सिपर सच कहता है नादिरा ! मैंने जिहनके चेहरे पर एक तरहकी ऐयारीकी झलक देखी है, उसकी आँखोंमें एक खूनी चमक देखी है । उसकी धीमी आवाजसे कभी कभी जान पड़ता है कि वह एक छुरे पर धार रख रहा है ! उस दिन जब वह मेरे पैरों पर गिरकर अपनी जान बचानेके लिये गिड़गिड़ा रहा था तब वह चेहरा और ही था; और आजका चेहरा और ही है । यह नज़र, यह आवाज, यह ढंग—बिल्कुल नया है ।

नादिरा—तब भी तुमने दो मर्तबा उसकी जान बचाई है । वह इन्सान ही तो है, साँप तो नहीं है ।

दारा—इन्सानका एतबार मुझे नहीं रहा नादिरा ! मैंने देखा

है कि इन्सान साँपसे भी बढ़कर जहरीला और पाजी है । मगर कभी कभी—क्यों नादिरा ! बहुत तकलीफ हो रही है ?

नादिरा—नहीं, कुछ नहीं ! मैं तुम्हारे पास हूँ । तुम्हारी मोहब्बतआमेज नजरसे मेरी सब तकलीफ मिटी जाती है ! लेकिन अब देर नहीं है—तुम्हारे हाथमें सिपरको सौंपे जाती हूँ—देखना !—बच्चे सुलेमानसे—मुलाकात न हो सकी !—खुदा !—(मृत्यु ।)

दारा—नादिरा ! नादिरा !–नहीं । सब ठंडा होगया—चली गई !

सिपर—अम्मी—अम्मी !

दारा—चिराग गुल हो गया ।

(जातदोनों हाथोंसे कलेजा थामकर एकटक ऊपरकी तरफ देखती है ।)

[चार सिपाहियोंके साथ जिहनखाँका प्रवेश ।]

दारा—कौन हो तुम; इस वक्त इस जगहको नापाक करने आए हो ?

जिहन०—गिरफ्तार कर लो ।

दारा—क्या ? मुझे गिरफ्तार करोगे जिहनखाँ ।

सिपर—(दीवारसे तलवार उतार कर) किसकी मजाल है ?

दारा—सिपर तलवार रख दो !—यह बहुत ही पाक घड़ी है, यह बहुत ही पाक जगह है ! अभीतक नादिराकी रूह यहाँ मौजूद है—दुनियाके सुखदुखसे बिदा होनेके पहले वह सबको नजर भर देख लेना चाहती है ! अभीतक बहिश्तसे हूरें उसे वहाँ लेजानेके लिये आकर नहीं पहुँचीं ! उसे सदमा न पहुँचाओ—उसे परेशान न करो—मुझे गिरफ्तार करना चाहते हो जिहनखाँ ?

जिहन०—हाँ शाहजादा साहब !

दारा—जान पड़ता है, औरंगजेबके हुक्मसे !

जिहन०—हाँ शाहजादा साहब !—

दारा—नादिरा ! तुम सुन तो नहीं रही हो ! सुन पाओगी तो नफरतसे तुम्हारी लाश काँप उठेगी ! तुम्हें खुदा पर बड़ा भरोसा था !

जिहन० इन्हें गिरफ्तार कर लो। अगर ये रुकावट डालें तो तलवारसे काम लेनेसे भी मत चूको।

दारा०—मैं रुकावट नहीं डालता। मुझे बाँधो। मुझे कुछ भी ताज्जुब नहीं है। मैं इसी तरहके किसी सुलूककी उम्मेद कर रहा था। और कोई होता तो शायद और तरहके सुलूकका उम्मेदवार होता। और होता तो शायद सोचता कि यह कितनी बड़ी नमकहरामी है, जिसे मैंने दो दफा बचाया है वही मुझे पहले अपने पास रखकर पीछे धोखा दे,—यह कितना बड़ा पाजीपन है ! लेकिन मैं यह नहीं सोचता। मैं जानता हूँ, दुनियाके सब अच्छे खयालात गुनाहके खौफसे जमीनमें सिर डाले फूट फूट कर रो रहे हैं—ऊपरकी तरफ आँख उठाकर देखनेकी भी वे हिम्मत नहीं कर सकते। मैं जानता हूँ: इस वक्त दुनियाका धरम है खुदगर्जी, ढंग है फरेब, पूजा है खुशामद, फर्ज है जुआचोरी। ऊँचे खयालात अब बहुत पुराने होगये हैं। शाइस्तगी (सभ्यता) की रोशनीसे धरमका अँधेरा दूर होगया है वह पुराना धरम जो कुछ बाकी है, ।सो शायद किसानोंकीझोपड़ियोंमें, कोल भील वगैरह पहाड़ी कोमोंके गवाँरपनमें है !—हाँ जिहनखाँ; मुझे गिरफ्तार करो ।

सिपर—तो मुझे भी गिरफ्तार करो ।

जिह्न०—तुमको भी न छोड़ूंगा शाहजादा साहब ! बादशाह सलामतसे खूब इनाम पाऊंगा।

दारा—पाओगे क्यों नहीं ! इतनी बड़ी नमकहरामीकी कीमत न पाओगे ? यह भी कहीं हो सकता है ?—खूब दौलत पाओगे। मैं तुम्हारे उस खुश चेहरेको अभीसे देख रहा हूँ। कैसी खुशीकी बात है !—खूब दौलत पाओगे। जब मरना, अपने साथ लेते जाना।

जिह्न०—देर काहेकी है—गिरफ्तार करो !

दारा—गिरफ्तार करो।—नहीं, यहाँ नहीं ! बाहर चलो ! इस बहिश्तको दोजख मत बनाओ ! इतना बड़ा कुदरती कानूनके खिलाफ काम यहाँ !—ऐ जमीन !—तू इतना सह सकती है ! चुपचाप सह रही है !—खुदा ! तुम दोनों हाथोंको समेटे यह सब देख रहे हो !—चलो जिह्नखाँ बाहर चलो।

(सब जाना चाहते हैं।)

दारा—ठहरो, एक बात कह जाऊँ, जिह्नखाँ ! मानोगे ? जिह्नखाँ—इस देवीकी लाशको लाहौर भेज देना ! वहीं शाहीखान्दानके कब्रिस्तानमें इसे गड़वा देना। ऐसा कर सकोगे ? मैंने दो मर्त्तबा तुम्हारी जान बचाई है, इसीसे यह भीख तुमसे माँग रहा हूँ। नहीं तो इतनेके लिए भी तुमसे नहीं कह सकता।—मेरा कहा करोगे ?

जिह्न०—जो हुक्म शाहजादा साहब ! यह काम न करूंगा तो मालिक औरंगजेब नाराज होंगे।

दारा—तुम्हारे मालिक औरंगजेब !—हूँ—मुझे कुछ भी रंज नहीं है !—चलो—(फिरकर) नादिरा !—

(इतना कहकर दारा फिरकर सहसा नादिराकी लाशके पास

घुटने टेकते और दोनों हाथसे मुँह ढक लेते हैं।)

दारा—(उठकर) चलो जिहनखाँ।

(सबका बाहर चलना। सिपरका नादिराकी लाश पर गिरकर रोना।)

दारा—(रूखे स्वरसे) सिपर !

(भयसे सिपरका चुप हो जाना। सबका बाहर जाना।)

चौथा दृश्य।

स्थान—जोधपुरका महल।

समय—सन्ध्या

[जसवन्तसिंह और महामाया]

महा०—महाराज अभागे दारासे कृतघ्नता करने के पुरस्कारमें गुजरातका सूबा पाकर सन्तुष्ट तो हैं न !

जस०—महामाया उसमें मेरा क्या अपराध है ?

महा०—ना। अपराध क्या है ?—यह तुम्हारा बड़ा भारी सम्मान है, बड़ा भारी गौरव है !

जस०—गौरव न सही, लेकिन इसमें अन्याय भी मुझे कुछ नहीं देख पड़ता। दाराकी सहायता करना या न करना मेरी इच्छा की बात है। दारा मेरे कौन हैं ?

महामाया—और कोई नहीं केवल प्रभु !

जस०—प्रभु ! किसी समय थे; आज कोई नहीं हैं।

महा०—सच तो है, दारा आज भाग्यचक्रके फेरमें नीचे पड़े हैं, भाग्यकी लाञ्छना और धिक्कार सह रहे हैं। आज उनके साथ तुम्हारा सम्बन्ध क्या है ? दारा उस समय तुम्हारे स्वामी थे-जब वे पुरस्कार दे सकते थे, बेंत मार सकते थे।

जस०—मुझे !

महा०—हाय महाराज ! 'थे' इसका क्या कुछ मूल्य ही नहीं है ? बीते समयको क्या एकदम मिटा सकते हो ? 'वर्तमान, से क्या उसे एकदम अलग कर सकते हो ? एक दिन जो तुम्हारे दयालु प्रभु थे, उनका आज तुम्हारे निकट क्या कुछ मूल्य ही नहीं है ? —धिक्कार है !

जस०—महामाया ! तुम्हारा मेरे साथ तर्क करनेका—जबान लड़ानेका—संबंध नहीं है । मैं जो उचित समझता हूं, वही कर रहा हूं । मैं तुमसे उपदेश नहीं चाहता !

महा०—उपदेश क्यों चाहोगे ? युद्धमें हार कर लौट आकर, विश्वासघातक होकर लौट आकर, कृतघ्न होकर लौट आकर—तुम चाहते हो मेरी—भक्ति !—क्यों ?—

जस०—यह मैं क्या तुमसे कुछ उचितसे बहुत अधिक चाहता हूं महामाया ?

महा०—नहीं, तुम्हारा यह दावा संपूर्ण रूपसे स्वाभाविक है ! क्षत्रिय वीर हो तुम—तुमने सारी क्षत्रियजातिका अपमान किया है !– तुम नहीं जानते, सारा राजपूताना आज तुमको धिक्कार रहा है ! लोग कहते हैं कि औरंगजेबका ससुर शाहनवाज दाराकी ओर होकर अपने दामादसे लड़ा, उसने प्रसन्नतापूर्वक मृत्युको गलेसे लगाया और तुम दाराको आशा देकर पीछेसे कायरोंकी तरह अलग हटकर खड़े हो गये !—हाय स्वामी ! क्या कहूँ, तुम्हारे इस अपमानसे मेरी नस नसमें जैसे आगकी लहरें दौड़ रही हैं। पर वह अपमान तुम्हें स्पर्श भी नहीं करता ! बेशक आश्चर्य की बात है !—

जस०—महामाया—

महा०—बस !—जाओ अपने नये प्रभु औरंगजेबके पास जाओ। (क्रोधसे प्रस्थान।)

जस०—अच्छा !—यही होगा। इतना अपमान !—अच्छा, यही होगा। (प्रस्थान।)

पाँचवाँ दृश्य।

स्थान—आगरेके किलेका शाही महल।

समय—रात्रि।

[शाहजहाँ और जहानारा]

शाह०—अब और क्या बुरी खबर है बेटी ! अब और क्या बाकी है ?—मेरा दारा शिकस्त खाकर इधर उधर भागा भागा फिर रहा है। शुजाने जंगली आराकानके राजाके यहाँ जाकर पनाह ली है। मुराद ग्वालियरके किलेमें कैद है। और क्या बुरी खबर दे सकती हो बेटी ?

जहा०—अब्बा ! यह मेरी ही बदनसीबी है कि मैं ही रोज रोज बुरी खबरें लेकर आपके पास आती हूँ। लेकिन क्या करूँ अब्बा ! बदनसीबी अकेली नहीं आती।

शाह०—कहो। और क्या खबर है ?

जहा०—अब्बा, भैया दारा गिरफ्तार होगये।

शाह०—गिरफ्तार होगया ?—कैसे गिरफ्तार होगया ?

जहा०—जिहनखाँने धोखा देकर गिरफ्तार करा दिया।

शाह०—जिहनखाँ !—जिहनखाँ !—क्या कहती है जहाँनारा ? जिहनखाँने !

जहा०—हाँ अब्बा !

शाह०—कयामतका दिन क्या बहुत जल्द आनेवाला है ?

जहा०—सुना, परसों दारा और उनके बेटे सिपरको एक बूढ़े हाथीकी नंगी पीठ पर बैठा कर दिल्लीभरमें घुमाया गया है। वे मैले सादे कपड़े पहने थे। उनकी हालत देखकर कोई ऐसा न था जो रो न दिया हो।

शाह०—तो भी उनमेंसे कोई दाराको छुड़ानेके लिए नहीं दौड़ा ! सिर्फ काठके पुतलोंकी तरह खड़े खड़े सब लोग देखते ही रहे ! वे सब क्या पत्थरके बने हुए थे !

जहा०—नहीं ! पत्थर भी गरम हो उठता है। वे कीचड़ हैं। और ंगजेबकी गोलियों और बन्दूकोंका खौफ सब पर गालिब है। मानो किसी जादूगरने उन पर जादू डाल रक्खा है। कोई भी सिर उठानेकी हिम्मत नहीं करता ! रोते हैं—सो भी छिपकर—कहीं औरंगजेब देख न ले।

शाह०—उसके बाद ?

जहा०—उसके बाद औरंगजेबने खिजराबादमें, एक गंदे और तंग मकानमें दाराको कैद कर रक्खा है।

शाह०—और सिपर और जोहरत ?

जहा०—सिपरने अपने बापका साथ नहीं छोड़ा। जोहरत इस वक्त औरंगजेब के महलमें हैं।

शाह०—तू जानती है; औरंगजेबने दाराको क्यों कैद कर रक्खा है ? वह उससे क्या सुलूक करेगा ?

जहा०—क्या करेगा, सो नहीं जानती। लेकिन—लेकिन—

शाह०—क्यों जहानारा ! काँप क्यों उठी !

जहाँ०—अगर वही करे तो अब्बा

शाह०—क्या ! क्या जहानारा !—मुँह क्यों ढक लिया ! वह–वह भी क्या मुमकिन है !—भाई भाईको कत्ल करेगा !

जहा०—चुप !—वह किसके पैरों की आहट है ! सुन लिया उसने !—अब्बा आपने यह क्या किया ! क्या किया !

शाह०—क्या किया !

जहा०—वह बात कह डाली !—अब बचने की कोई सूरत नहीं रही ।

शाह०—क्यों ?

जहा०—शायद औरंगजेब दारा का खून न करता । शायद इतने बड़े गुनाहकी और बेरहमी की बात उसे सूझती ही नहीं । लेकिन वह बात आपने उसे सुझा दी !—क्या किया ! क्या किया ! सब सत्यानाश कर दिया !

शाह०—औरंगजेब तो यहाँ नहीं है । किसने सुन लिया ?

जहा०—वह नहीं है, लेकिन यह दीवार तो है, हवा तो है, चिराग तो है । आज सब उसीके शरीक हैं । आप समझते हैं यह आपका महल है ।-नहीं, यह औरंगजेबका पत्थर का जिगर है ! यह हवा नहीं, औरंगजेबकी जहरीली साँस है ! यह चिराग नहीं, उस जल्लाद की कहरकी नजर है ! अब्बाजान क्या आप यह सोचते हैं कि इस महलमें, इस किलेमें, इस सल्तनतमें, आपका या मेरा एक भी दोस्त है ? नहीं, एक भी नहीं है ! सब उसीके शरीक हो गये हैं । सब खुशामदी और मतलबके यार हैं ! जुआचोर हैं !—यह किसकी परछाहीं है ?

शाह०—कहाँ ?

जहा०—नहीं कोई नहीं है।—आप उधर क्या देख रहे हैं अब्बाजान!—

शाह०—कूद पड़ूं?

जहा०—यह क्यों अब्बा!

शाह०—देखूँ। शायद दाराको बचा सकूँ वे लोग उसे कत्ल करनेको लिये जा रहे हैं। और मैं यहाँ औरतोंकी तरह, बच्चोंकी तरह लाचार हूं! आँखोंके आगे यह सब देखकर भी खाता-पीता, सोता और अबतक जिन्दा हूं। उसके लिये कुछ नहीं करता!—कूद पड़ू।

जहा०—यह क्या अब्बा! यहाँ से कूदने पर यह तय है कि जान नहीं बच सकती।

शाह०—मर जाऊँगा तो उससे क्या! देखूँ अगर बचा सकूँ—बचा सकूँ।

जहाँ०—अब्बा! आप क्या अपने आपेमें नहीं हैं? मर कर दाराकी जान आप कैसे बचा सकेंगे?

शाह०—ठीक है! ठीक है! मैं मर कर दाराको कैसे बचा सकूँगा? ठीक कहती है। फिर—फिर!—अच्छा—जरा तू यहाँ औरंगजेबको ले आ सकती है?

जहा०—नहीं अब्बा, वह नहीं आवेगा। नहीं तो मैं औरत होकर भी एक मर्तबा उससे लड़कर देखती। उस दिन मैंने दरबारमें रूबरू खड़े होकर उसका मुकाबिला किया था, मगर कुछ कर नहीं सकी। इसी सबबसे उस दिनसे मेरे बाहर जाने-आने पर भी सख्त निगरानी रक्खी जाती है। नहीं तो एक दफा उससे लड़ाई करके जरूर देखती!

शाह०—फाँदूँ !—कूद पड़ूं ? (कूदना चाहते हैं ।)

जहा०—अब्बा, आप ये क्या पागलोंकी सी बातें कर रहे हैं !

शाह०—सच तो है ! मैं क्या पागल हुआ जा रहा हूं !—न ना ना । मैं पागल न होऊँगा !—या खुदा ! इस अपाहिज, बूढ़े, निहायत लाचार शाहजहाँ को देखा खुदा !—तुझे तरस नहीं आता ? तरस नहीं आता ? बेटेने बापको कैद कर रक्खा है—वह बेटा जो एक दिन उस बापके खौफसे काँपता था !—इतनी बे इन्साफी, इतना जुल्म, ऐसी कुदरती कानूनके खिलाफ वारदात तुम देख रहे हो ? देख सकते हो ?—मैंने ऐसा क्या गुनाह किया था कि खुद मेरा ही बेटा—ओः !—

जहा०—एक मर्तबा इस वक्त अगर वह मेरे सामने आ-जाता, तो !—(दांत पीसना ।)

शाह०—मुमताज ! तुम बड़ी खुशकिस्मत हो, जो ऐसी नालायक और सदमा पहुंचानेवाली बेटेकी करतूत देखनेको नहीं रहीं । तुमने कोई बड़ा सवाब किया था, इसीसे तुम पहले चल दीं ।—जहानारा !

जहा० अब्बा !

शाह०—मैं तुझे दुआ देता हूं—

जहा० —क्या अब्बा !

शाह०—कि तेरे औलाद न हो—दुश्मनके भी औलाद न हो ।

(प्रस्थान।)

(दूसरी ओरसे जहानाराका प्रस्थान ।)

छठा दृश्य ।

[औरंगजेबएक पत्र हाथमें लिये टहल रहा है ।]

औरंग०--यह दाराकी मौतकी सजाका हुक्मनामा है ।-यह काजीका फैसला है !—मेरा कुसूर क्या है !—मैं लेकिन—नहीं, क्यों—यह फैसला ! फैसले को क्यों रद करूँ ।—यह फैसला है ।

[दिलदार का प्रवेश ।]

दिल०—यह खून है !

औरंग०—(चौककर) कौन !—दिलदार ! तुम इस वक्त यहाँ ?

दिल०—जहाँपनाह मैं ठीक वक्तमें ठीक जगह पर हूं । देख लिजिएगा और अगर मैं यहाँ पर न होता तो भी यह खून—

औरंग०—(भर्राई हुई आवाजमें) खून !—नहीं दिलदार, यह काजीका फैसला है ।

दिल०—बाहशाह सलामत, सच और साफ साफ कहूं ?

औरंग०—कहो ।

दिल०—बादशाह सलामत, आप एकाएक काँप क्यों उठे !—आपकी आवाज एक सूखी हवाके झोंकेकी तरह क्यों निकली ! क्यों जहाँपनाह !—सच कहूँ ?

औरंग०—दिलदार !

दिल०—सच बात कहूँ ?—आप दारा की मौत चाहते हैं ।

औरंग०—मैं !

दिल०—हाँ आप ।

औरंग०—लेकिन यह तो काजीका फैसला है ।

दिल०—फैसला ! जहाँपनाह, काजी लोग जब दाराके लिए मौतका हुक्म दे रहे थे उस वक्त वे खुदाके मुँहकी तरफ नहीं देख रहे थे । उस वक्त वे जहाँपनाहके खुश चेहरेका खयाल कर रहे थे—जोरूके गहने गढ़ानेके मनसूबे गाँठ रहे थे । फैसला !—जहाँ मालिककी लाल लाल आँखें सामने अड़ी रहती हैं, वहाँ फैसला ! जहाँपनाह सोच रहे हैं कि मैंने दुनियाको खूब चकमा दिया । लेकिन दुनियाने मन-ही-मन सब समझा, सिर्फ खोफसे कुछ कहा नहीं । जोर करके आप इन्सान की जबानको रोक सकते हैं, गला घोटकर उसे मार डाल सकते हैं, लेकिन स्याहको सफेद नहीं कर सकते । दुनिया जानेगी, आगेके लोग जानेंगे कि फैसलेका जाल रचकर आपने दाराका खून किया है—अपने तख्त और ताजका खतरा दूर करने के लिए ।

औरंग०—सचमुच !—दिलदार तुम सच कह रहे हो! तुमने आज दाराकी जान बचाई ! तुमने मेरे बेटे महम्मदको मुझे लौटा दिया—आज मेरे भाई दाराको बचाया ! जाओ—शायस्ताखाँको भेज दो ।

(दिलदारका प्रस्थान ।)

औरंग०—दारा जिये । मुझे अगर उसके लिये तख्त देना पड़े तो दूँगा ! इतना बड़ा अजाब—जाने दो, यह मौतका हुक्मनामा फाड़ डालूँ—(फाड़ना चाहता है ।) नहीं, अभी नहीं । शायस्ताखाँ के सामने इसे फाड़कर अपनी नेकीका सबूत दूँगा ।—वह लो, शायस्ताखाँ आ गये ।

[शायस्ताखाँ और जिहनखाँका प्रवेश और कोर्निश करना ।]

औरंग०—शायस्ताखाँ ! काजियोंने अपने फसलेमें भाई दारा

को मौतकी सजा दी है।

जिहन०—यही क्या वह हुक्मनामा है ?—मुझे दीजिये खुदावन्द, मैं खुद अपने हाथसे यह हुक्म तामील कर लाऊँ। काफिरको अपने हाथसे मौतकी सजा देनेके लिए मेरे हाथोंमें खुजली हो रही है। मुझे—

औरंग०— लेकिन मैंने दाराको माफी दे दी है।

शायस्ता०—यह क्या जहाँपनाह !—ऐसे दुश्मनको माफी !—अपने दुश्मनको माफी !

औरंग०—मैं जानता हूं। इसीसे तो उसे माफ करना मेरे लिये फख्र की बात है।

शायस्ता०—जहाँपनाह ! यह फख्र खरीदनेमें आपको अपना तख्त तक बेचना पड़ेगा।

औरंग०—जिन हाथोंकी ताकतसे इस तख्त पर कब्जा किया है, उन्हीं हाथोंकी ताकतसे उसकी हिफाजत भी करूँगा।

शायस्ता०—जहाँपनाह ! एक बड़ी भारी आफतको सिर पर बनाये रखकर जिन्दगी भर सल्तनत करनी पड़ेगी ! आप जानते हैं, सारी रिआया और फौज दिलसे दाराकी तरफदार है। उस दिन दाराकी हालत देखकर सब लोग बच्चोंकी तरह रो रहे थे और जहाँपनाहको गालियाँ दे रहे थे। अगर वे एक दफा भी मौका पावें

औरंग०—कैसे ?

शायस्ता०—जहाँपनाह आठों पहर कुछ दाराकी निगरानी न कर सकेंगे। जहाँपनाह किसी दिन सफरमें गये, और फौजके सिपाहियोंने मौका पाकर दाराको रिहा कर दिया—तो जहाँपनाह समझे ?

औरंग०—समझा।

शायस्ता०—इसके सिवा बूढ़े बादशाह भी दाराके तरफदार हैं और उन्हें सारी फौज मानती है अपने उस्तादकी तरह, चाहती है अपने बापकी तरह।

औरंग०—हूँ, (टहलना) न होगा, तो यह तख्त दे दूंगा।

शायस्ता०—तो फिर इतनी मेहनत करके यह तख्त लेनेकी क्या जरूरत थी? बापको तख्तसे उतार कर, भाईको कैद करके—जहाँपनाह बहुत दूर बढ़ आये हैं।

औरंग०—लेकिन—

जिहन०—खुदावन्द! दारा काफिर है! आप काफिरको माफ करेंगे? खुदावन्द! इस दीन इस्लामकी हिफाजतके लिए ही आप आज इस तख्त पर बैठे हैं--याद रखें। दीनकी इज्जत रखना आपका फर्ज है।

औरंग०—सच है जिहनखाँ! मैं अपनी बेइज्जती और अपने ऊपर जुल्म सह सकता हूँ, लेकिन दीन इस्लामकी तौहीन—नहीं सह सकता। कसम खा चुका हूँ।—दाराकी मौत ही उसके लायक सजा है। जिहनखाँ, लो यह मौतका हुक्मनामा!—ठहरो, दस्तखत कर दूं।

(हस्ताक्षर करना।)

जिहन०—दीजिए जहाँपनाह! आज रातको ही दाराका कटा हुआ सिर लाकर जहाँपनाहको दिखाऊंगा—बाहर मेरा घोड़ा तैयार है।

औरंग०—आज ही!

शायस्ता०—(मृत्युदंडका आज्ञापत्र औरंगजेबके हाथसे लेकर) जितनी जल्दी बला टले, उतना ही अच्छा। (जिहनखाँको दण्डपत्र

देना ।)

जिहन॰—जहाँपनाह तसलीम । (जाना चाहता है ।)

औरंग॰—ठहरो देखूँ । (दण्डकी आज्ञाको लेना, पढ़ना और फेर देना)—अच्छा जाओ ।

(जिहनखाँ जाना चाहता है । औरंगजेब फिर उसे बुलाता है ।)

औरंग॰—ठहरो । (दण्डकी आज्ञाको फिर लेना और फिर फेर देना) अच्छा जाओ !— (जिहनखाँका प्रस्थान ।)

(औरंगजेब फिर जिहनखाँकी ओर बढ़ता है । फिर लौटता है । दमभर सोचता है ।)

औरंग॰—ना, जरूरत नहीं है !—जिहनखाँ ! जिहनखाँ ! नहीं, चला गया ।—शायस्ताखाँ !

शायस्ता॰—खुदावन्द !

औरंग॰—मैंने यह क्या किया !

शायस्ता॰—जहाँपनाहने समझदारोंका ही काम किया ।

औरंग॰—खैर जाने दो ।

(धीरे धीरे प्रस्थान ।)

शायस्ता॰—औरंगजेब ! क्या तुममें भी कुछ नेकी-बदीकी तमीज है ? (प्रस्थान ।)

———:❀:———

सातवाँ दृश्य ।

स्थान—खिजराबाद । एक साधारण घर ।

समय—रात ।

[सिपर एक पलग पर सो रहा है । दारा अकेले जाग रहे हैं और उसकी सूरत देख रहे हैं ।]

दारा—सो रहा है—सिपर सो रहा है । नींद ! सब बेचनियों को दूर कर देनेवाली नींद ! मेरे सिपरके सब रंज भुलाए रह ।—मेरे बच्चेने सफरमें मेरे साथ सर्दी और गर्मीकी बड़ी बड़ी सख्तियाँ झेली हैं, उसे तू भर सक दिलासा दे । मैं लाचार हूँ । औलादकी हिफाजत करना, खाना देना, कपड़े देना—बापका काम है । सो मैं कर नहीं सका ।—बेटे, तू भूखसे तड़पता था, मैं तुझे खानेको नहीं दे सका । प्याससे तेरा गला सूख रहा था, मैं तुझे पानी तक नहीं दे सका । सर्दीमें पहननेके लिये काफी कपड़े तक नहीं दे सका—मुझे खुद खानेको नहीं मिला, सोना नहीं मिला । उससे मुझे कभी वैसा सदमा नहीं पहुँचा बेटे, जैसा तेरी तकलीफ, तेरी गरीबी, तेरी तौहीनसे मुझे सदमा पहुँचा है ! बच्चे ! मेरे लख्ते जिगर ! मैं आज तुझे देख रहा हूँ । मुझे जान पड़ताहै, दुनियामें और कोई नहीं है—सिर्फ तू है और मैं हूँ । मुझे इतना दुख है । मैं आज कैदखानेमें कैद हूँ तो भी तेरे चेहरे को देखकर मैं सब दुख भूल जाता हूँ ।

[दिलदारका प्रवेश ।]

दारा—कौन !—तुम !

दिल०—मैं—यह—क्या देख रहा हूँ !

दारा—तुम कौन हो ?

दिल०—मैं था पहले सुल्तान मुरादका मसखरा । अब हूँ बादशाह औरंगजेबका मुसाहब ।

दारा—यहाँ किस मतलब से आये हो ?

दिल०—मतलब कुछ नहीं है, आपसे मुलाकात करने आया हूँ ।

दारा—क्यों ऐ नौजवान, मेरी हँसी उड़ानेके लिए ?—हँसो ।

दिल०—नहीं शाहजादासाहब !—मैं हँसने नहीं आया । और अगर हँसने भी आता तो आपकी हालत देखकर वह तानेकी हँसी गलकर आँसू बन जाती और जमीन पर टपटप टपकने लगती !—यह हाल ! शाहजादा दारा आज इस हालतमें !—(भर्राई हुई आवाज में) या खुदा !

दारा—ऐ नौजवान यह क्या ! तुम्हारी आँखोंसे आँसू गिर रहे हैं—रोते हो !—रोओ !

दिल०—नहीं, रोऊँगा नहीं ! यह बहुत ही ऊँचे दर्जेका नज्जार (दृश्य) है !—एक पहाड़ टूटाफूटा पड़ा है, एक समंदर सूख गया है, एक सूरज फीका पड़ गया है । सारे जहानमें एक तरफ पैदायश और दूसरी तरफ तबाही हो रही है । इस दुनियामें भी वही है । यह तबाही बड़ी भारी, पाक और फख्रकी चीज है ।

दारा—तुम एक दानिशमन्द (दार्शनिक) जान पड़ते हो ।

दिल०—नहीं शाहजादा साहब, मैं दानिशमन्द नहीं हूँ । मैं मसखरा हूँ, मुसाहब हो गया हूँ, अभी दानिशमन्दका दर्जा नहीं पासका हूँ । हाँ, अगर घास चरते चरते कभी कभी सिर उठाकर देखलेनेको दानिश कहते हों तो मैं जरूर दानिशमन्द हूँ ! शाहजादा साहब–बेवकूफ समझता है कि चिरागका जलना ही ठीक है, चिराग का बुझना ठीक नहीं, दरख्तका उगना ही वाजिब है, सूख जाना

गैरवाजिब है; इन्सानको खुदासे आराम ही मिलना चाहिए, तक-लीफ मिलना जुल्म है ! लेकिन यह बात नहीं है; आराम और तक-लीफ एक ही कानूनके दो पहलू हैं।

दारा—ऐ नौजवान ! मैं यह नहीं सोचता। तो भी—तकली-फ में कौन हँस सकता है ? मरना कौन चाहता है ? मैं मरना नहीं चाहता।

दिल०—शाहजादा साहब ! आपकी मौतकी सजाका हुक्म मैं आज मन्सूख करा आया हूँ। आप कैदसे अगर रिहाई चाहते हैं तो आइए। मेरी पोशाक पहन लीजिए—चले जाइए। कोई शक नहीं करेगा। आइए, हम दोनों आपसमें कपड़े बदल लें !

दारा—उसके बाद तुम ?

दिल०—मैं मरना ही चाहता हूँ। मरनेमें मुझे बड़ा मजा मिलेगा ! इस दुनियामें कोई मेरे लिए रंज करनेवाला नहीं है।

दारा—तुम मरना चाहते हो ! ! !

दिल०—हाँ मैं मरनेका एक अच्छा मौका ढूँढ़ रहा था। शाहजादा साहब ! मरना मुझे बहुत प्यारा है। आपने मुझ पर आज कैसा भारी एहसान किया, यह मैं कह नहीं सकता—

दारा—क्यों ?

दिल०—मरनेका एक अच्छा मौका देकर आपने यह एहसान किया है।—आइए !

दारा—या रहीम ! यही बहिश्त है ! और क्या !—नहीं ऐ नौजवान ! मैं नहीं जाऊँगा।

दिल०—क्यों ? शाहजादा साहब ! क्या मरनेका ऐसा अच्छा मौका माँगने पर भी मैं न पाऊँगा। (पैर पकड़ता है।)

दारा—मैं तुम्हें मरने नहीं दूंगा। और खासकर इस बच्चेको छोड़कर मैं कहीं न जाऊँगा।

[जिहनखाँ का प्रवेश।]

जिहन०—और कहीं जाना न पड़ेगा। यह दाराके कत्लका हुक्म है।

दिल०—यह क्या!

जिहन०—शाहजादा साहब मरनेके लिए तैयार हो जाइए! जल्लाद मौजूद है।

दिल०—तो बादशाहने राय बदल दी?

जिहन०—हाँ दिलदार! तुम इस वक्त मेहरवानी करके बाहर जाओ। हम लोग अपना काम करें।

दारा—औरंगजेब अपनी इतनी बड़ी सल्तनतके एक कोनेमें साँस लेनेके लिए दो तीन हाथ जमीन भी नहीं दे सकता? मैं इस तंग और गन्दे मकानमें हूँ, यह मला चीथड़ा पहने हूँ, खानेको दो सूखी और जली रोटियाँ मिलती हैं। यह भी वह नहीं दे सकता?

दिल०—जिहनखाँ, तुम आज ठहर जाओ मैं बादशाहका दूसरा हुक्म लिए आता हूँ।

जिहन०—नहीं दिलदार, बादशाहका यही हुक्म है कि आज ही रातको शाहजादेका कटा हुआ सिर उन्हें लेजाकर दिखाया जाय!

दारा—आज ही रातको! इतनी जल्दी! यह सिर उसे चाहिए ही। नहीं तो उसे नींद न आयगी!—इस सिरकी इतनी कीमतका हाल मुझे पहले मालूम नहीं था।

जिह्न०—अगर आज ही रात को आपका सिर हम न ले जा सकेंगे तो खुद हमारी जान जायगी।

दारा—ओह! जिह्नखाँ तो फिर तुम क्या कर सकते हो। लो मुझे मारो।—जब बादशाहका हुक्म है!—आज कौन बादशाह है, कौन रियाआ है!—हँसते हो? हँसो।

जिह्न०—आप तैयार हैं?

दारा—तैयार ही हूँ! और अगर मैं तैयार न भी होऊँ तो उससे तुम लोगोंका क्या बनता बिगड़ता है। (दिलदारसे) एक दिन इसी जिह्नखाँने हाथ जोड़कर गिड़गिड़ाकर मुझसे जान बचानेके लिए कहा था। मैंने इसकी जान बचाई थी। आज—नसीब!—तेरा खेल—खूब!

जिह्न०—बादशाहका हुक्म। काजियोंका फैसला। शाहजादासाहब मैं क्या कर सकता हूँ?

दारा—बादशाहका हुक्म! काजियोंका फैसला!—ठीक है! तुम क्या कर सकते हो!-(दिलदारसे) जाओ दोस्त! तुमसे मेरी यह पहली और आखिरी मुलाकात है।

दिल०—कुछ न हो सका। मैं आपकी जान नहीं बचा सका, शाहजादा साहब! जान पड़ता है, शायद यही उस रहीमकी मर्जी है! मैं कुछ समझ नहीं सकता। लेकिन शायद इसका एक बड़ा भारी मतलब है। इसका एक बड़ा अंजाम है। नहीं तो इतनी बड़ी बेरहमी, इतना बड़ा गुनाह क्या फजूल चला जायगा?—शाहजादासाहब! आप ऐसे आदमीकी कुर्बानीका कुछ मतलब जरूर है। वह मतलब क्या है, यह मैं समझ नहीं सकता। लेकिन मतलब जरूर है। खुशीके साथ खुदा-

का शुक्रिया अदा करते हुए आप अपनी जान दे दें ।

दारा—जरूर ही । काहेका दुख ! एक दिन तो जाना होगा ही। कोई दो दिन पहले गया और कोई दो दिन पीछे ! मैं तयार हूं । तुमसे विदा होता हूं दोस्त ! तुमसे अभी घड़ीभरकी जान पहचान है; तुम कौन हो यह भी नहीं जान पड़ता है । मगर तुम मेरे बहुत दिनोंके पुराने दोस्त हो !

दिल०—तो जाइए शाहजादा साहब ! इस दुनियामें मेरी और आपकी यही आखिरी मुलाकात है ।　　　(प्रस्थान ।)

दारा—अब मुझे मारो—जिहनखाँ ।

जिहन—जल्लाद !

[दो जल्लादोंका प्रवेश । जिहनखाँका इशारा करना ।]

दारा - जरा ठहरो । एक मर्तबा—सिपर ! सिपर !—नहीं । क्यों पुकारा ।

सिपर—(उठकर) अब्बाजान !—यह क्या ! ये कौन हैं अब्बा !— मुझे खौफ मालूम पड़ रहा है ।

दारा—ये मुझे मारनेके लिए आये हैं । तुमसे आखरी मुलाकात करनेके लिए ही मैंने तुमको जगा दिया था । अब मैं जाता हूं बच्चे ! (गलेसे लगाना) अब जाओ ।—जिहनखाँ, शायद तुम इतने बड़े शैतान नहीं हो कि मेरे बेटेके आगे मुझे कत्ल करो । इसे दूसरे कमरेमें ले जाओ ।

जिहन०—(एक जल्लादसे) इसे उस कमरेमें ले जा ।

सिपर—(जल्लादके पकड़ने पर) नहीं, मैं नहीं जाऊँगा । मेरे अब्बाको मारोगे ! क्यों मारोगे ! (जल्लादके हाथसे अपनेको छुड़ाकर दाराके पास आकर) अब्बा,—मैं तुम्हें छोड़कर न जाऊँगा ।

(सिपर जोरसे दाराके पैरोंमें लिपटता है ।)

दारा—बच्चे मुझसे लिपटकर क्या करेगा ! पकड़कर क्या तू मुझे बचा सकेगा ? जाओ बेटा ! ये मुझे कत्ल करेंगे ! तुमसे देखा न जायगा ।

(दोनों जल्लाद अपनी आँखोंके आँसू पोंछते हैं ।)

जिहन०—ले जाओ ।

(जल्लाद सिपरको पकड़कर खींचता हुआ ले चलता है ।)

सिपर—(चिल्लाकर) नहीं, मैं नहीं जाऊँगा । मैं नहीं जाऊँगा । (हाथ छुड़ानेकी चेष्टा करता है ।)

दारा—ठहरो । मैं उसे समझाये देता हूँ । फिर वह कुछ न कहेगा ।—छोड़ दो ।

(जल्लाद सिपरको छोड़ देता है और वह दाराके पास आकर खड़ा होता है ।)

दारा—(सिपरका हाथ पकड़कर) सिपर !

सिपर—अब्बा !—

दारा—सिपर—मेरे प्यारे बच्चे ! मुझे जाने दे ! अब तक तूने इतने दुखमें भी मुझे नहीं छोड़ा !—जाड़ेमें, धूपमें, भूखप्यास और जागनेकी बेचैनीमें, जंगलों और रेगिस्तानोंके सफरमें तूने मुझे नहीं छोड़ा । मुसीबत और तकलीफसे अंधा होकर मैं तेरी छातीमें छुरी मारनेको तैयार हुआ, तब भी तूने मुझे नहीं छोड़ा । सफरमें, जंगमें, कैदमें, जानकी तरह तू मेरे कलेजेसे लगा रहा—तूने मुझे नहीं छोड़ा । आज तेरा बेरहम बेदर्द बाप (कण्ठावरोध हो जाना । उसके बाद बड़े कष्टसे अपनेको संभालकर भर्राई हुई आवाजसे) तेरा बेदर्द बाप आज तुझे छोड़े जा रहा है ।

सिपर—अब्बा, अम्मी गईं—आप भी— (रोना ।)

दारा—क्या करूँ ! कोई चारा नहीं है बेटा । मुझे आज मरना होगा । अपनी जिन्दगी छोड़नेका मुझे आज उतना सदमा नहीं है जितना तुझे छोड़नेमें हो रहा है। (आखें मूँद लेना।) जाओ बेटा ! ये लोग मुझे कत्ल करेंगे । वह बड़ा ही खौफनाक नज्जारा होगा ।—उसे तुम न देख सकोगे ।

सिपर—अब्बा ! मैं तुम्हें छोड़कर जाऊँ—मैं नहीं जाऊँगा ।

दारा—सिपर ! कभी तुमने मेरी बात नहीं टाली !—कभी तो—(आँसू पोंछना) जाओ बेटा ! मेरा यह आखरी हुक्म—मेरा यह आखरी कहना मानो । जाओ ।—मेरी बात नहीं सुनोगे ? सिपर ! बेटा ! जाओ ।

(सिपर सिर झुका कर जानेको तैयार होता है ।)

दारा—सिपर !　　　　(सिपर लौटता है ।)

दारा—एक मर्तबा—आ—तुझे छातीसे लगालूँ । (छातीसे लगाना) ओः—अब जाओ बेटा !

(मन्त्रमुग्धकी तरह सिर झुकाये एक जल्लादके साथ सिपरका प्रस्थान ।)

दारा—(ऊपर देखकर, छाती पर हाथ रखकर) खुदा ! पहले जनममें मैंने कौनसा ऐसा गुनाह किया था ! ओः !—जाने दो, हो गया । जल्लाद, अपना काम कर ।

जिहन०—उस कमरेमें लेजाकर काम तमाम करके ले आओ । यहाँ इसकी जरूरत नहीं है ।

(दोनों जल्लादों के साथ दाराका प्रस्थान ।)

जिहन०—अपनी जान बचानेवालेका कत्ल अपनी आँखोंसे नहीं देखा, अच्छा ही हुआ ।—वह कुल्हाड़ेकी आवाज—वह मरते वक्तकी अवाज—

नेपथ्यमें—ओ ! ओ ! ओ !

जिहन०—लो सब तमाम हो गया ।

सिपर—(कमरेके भीतरसे) अब्बा ! अब्बा ! (दरवाजा तोड़ने की चेष्टा करता है ।)

[दाराका कटा हुआ सिर लेकर जल्लादका प्रवेश ।]

जिहन०—दो, सिर मुझे दो । मैं इसे बादशाह सलामतके पास ले जाऊँगा ।

(ठीक इसी समय द्वार तोड़कर "अब्बा ! अब्बा !" चिल्लाता हुआ सिपर प्रवेश करता है और पिताका कटा हुआ सिर देख मूर्छित होकर गिर पड़ता है ।)

पाँचवाँ अंक।

पहला दृश्य।

स्थान—दिल्ली। दरबार।

समय—तीसरा पहर।

[तख्ते–ताऊस (मयूरसिंहासन) पर औरंगजेब बैठा है। सामने मीरजुमला, शायस्ताखाँ, जसवन्तसिंह, जयसिंह, दिलेरखाँ इत्यादि उपस्थित हैं।]

औरंग०—मैंने वादेके मुताबिक राजासाहबको गुजरातका सूबा दे दिया है।

जसवन्त०—उसके बदलेमें मैं जहाँपनाहको अपनी इच्छासे अपनी सेनाकी सहायता देने आया हूँ।

औरंग०—महाराज जसवन्तसिंह ! औरंगजेब एकदफाके सिवा दुबारा किसी पर एतबार नहीं करता। लेकिन तो भी हम महाराज जयसिंहकी खातिरसे मारवाड़के राजाको बादशाहकी खैरख्वाह रिआया बननेका दोबारा मौका देंगे।

जयसिंह—जहाँपनाहकी मेहरबानी !

जसवन्त०—जहाँपनाह ! मैं समझ गया हूं कि छल-कपटसे हो, या बल और शक्तिसे हो, जहाँपनाहने जब सिंहासन पर बैठकर साम्राज्यमें एक शान्ति स्थापित कर दी है, तब किसी तरह उस शान्तिको नष्ट करना पाप है।

औरंग०—राजासाहबके मुँहसे यह बात सुनकर मैं बहुत खुश हुआ। जान पड़ता है, हम शायद राजासाहबको अपने खैरख्वाहों-में समझ सकते हैं।

जसवन्त०—निश्चय।

औरंग०—अच्छी बात है राजासाहब।—वजीरआजम! सुलतान शुजा इस वक्त आराकानके राजाकी पनाहमें हैं न?

मीर०—गुलाम उन्हें आराकानकी सरहद तक खेदकर पहुँचा आया है।

औरंग०—वजीरआजम—हम आपकी दिलेरी और हिम्मतकी तारीफ करते हैं।—सिपहसालार! तुम शाहजादा महम्मदको ग्वालियरके किलेमें कैद कर आये?

शायस्ता—खुदावन्द!

औरंग०—बेचारा साहबजादा!—लेकिन दुनिया देख ले कि मैं सबसे एकसा बर्ताव करता हूँ। मैं बेटे या दोस्तके साथ कोई रियायत नहीं करता।

जयसिंह—जहाँपनाह इसमें क्या सन्देह है।

औरंग०—बदकिस्मत दाराको मौतने हमारी सारी कामयाबी-को फीका कर दिया है! लेकिन भाई बेटे जायँ, दीनकी तरक्की हो।—सिपहसालार भाई मुराद ग्वालियरके किलेमें खैरियतसे हैं?

शायस्ता—खुदावन्द!

औरंग०—नासमझ भाई! अपनी खतासे सल्तनत खो दी! और मैं मक्केशरीफ जानेका सबाब न हासिल कर सका!—खुदा-की मर्जी।—दिलेरखाँ! तुमने शाहजादा सुलेमानको किस तरह कैद किया?

दिलेर०—जहाँपनाह ! श्रीनगरके राजा पृथ्वीसिंहने शाहजादे और उनकी फौजको अपने यहाँ पनाह देनेसे इन्कार कर दिया। तब शाहजादा हम लोगोंको छोड़ने पर लाचार हुए। उसके बादही मुझे जहाँपनाहका परवाना मिला। मैंने राजासे मुलाकात करके जहाँपनाहके हुक्मके मुताबिक कहा कि "शाहजादा सुलेमान बादशाहके भतीजे हैं। बादशाह उनको अपने लड़केसे बढ़कर चाहते हैं अगर आप शाहजादेके तईं बादशाहके हाथमें सौंप देंगे तो आपकी ईमानदारी या धरममें बट्टा नही लगेगा।" श्रीनगरके राजाने पहले तो शाहजादेको मुझे देना नामंजूर कर दिया। लेकिन दूसरे ही दिन उन्होंने शाहजादेको अपने यहाँसे रुखसत कर दिया। सबब कुछ समझमें नहीं आया।

औरंग०—बदनसीब शाहजादा ! उसके बाद ?

दिलेर०—शाहजादा तिब्बतके लिए रवाना हुए। लेकिन रास्ता न मालूम होनेके सबब रात भर भटककर सबेरे फिर श्रीनगरके किनारे आगये। उसके बाद मय फौजके मैंने जाकर उन्हें गिरफ्तार कर लिया—इसमें अगर कुछ मेरी खता हुई हो तो खुदा मुझे माफ करे ! मैं किसी खास आदमीका नौकर नहीं हूँ ! मैं बादशाहका सिपहसालार हूँ। बादशाह सलामत के हुक्मकी तामील करनेके लिए मैं लाचार था।

औरंग०—खाँसाहब उसे यहाँ ले आइए !

दिलेर०—जो हुक्म। (प्रस्थान।)

औरंग०—राजासाहब जिहनखाँको क्या शहरके बाशिन्दोंने मिलकर मार डाला ?

जयसिंह—हाँ खुदावन्द ! सुना, जिहनखाँकी रियाआने ही

उसका खून कर डाला।

औरंग०—खुदाने गुनाहगारको ठीक सजा दी।—वह लो, शाहजादा आगया। (शाहजादा सुलेमानके साथ दिलेरखाँका फिर प्रवेश।)

औरंग०—आओ शाहजादे !—शाहजादे सुलेमान !—क्यों शाहजादे ! सिर क्यों झुकाये हुये हो ?

सुलेमा०—बाहशाह—(कहते कहते रुक गये।)

औरंग०—कहो, शाहजादे क्या कहते थे, कहो !—तुम्हें कुछ डर नहीं है। तुम्हारे अब्बाके मरनेकी ही जरूरत आपड़ी थी। नहीं तो–

सुले०—जहाँपनाह, मैं आपसे कैफियत नहीं तलब करता। और फतहयाब औरंगजेबको आज किसीके आगे कैफियत देनेकी जरूरत भी नहीं है। कौन इन्साफ करेगा ! मुझे भी मार डालिए। जहाँपनाहकी छुरीमें काफी धार है, उसे जहरमें बुझानेकी क्या जरूरत है !

औरंग०—सुलेमान ! हम तुम्हारी जान नहीं लेंगे। मगर—

सुले०—बादशाह सलामत इस 'मगर' के माने मैं जानता हूँ ! मौतसे भी कड़ी और खौफनाक कोई बात आप करना चाहते हैं। बादशाहके दिलमें अगर एक बेरहमी और बेदर्दीका काम करनेका खयाल पैदा हो तो दुश्मनके लिए उससे बढ़कर और खौफ नहीं। लेकिन अगर दो बेदर्दीके काम करनेका खयाल पैदा हो जाय तो मैं जानता हूँ कि उनमें जो बढ़कर बेदर्दीका काम होगा वही आप करेंगे। आपके बदला लेनेसे आपकी मेहरबानी ज्यादह खौफनाक है। फरमाइए बादशाह सलामत—मगर !—

औरंग०—परेशान न होना शाहजादे !

सुले०—नहीं । और क्यों—ओः ! इन्सान इतनी सहूलियतसे बातचीत कर सकता है, और साथ ही इतना बड़ा शैतान भी हो सकताहै !

औरंग०—सुलेमान, तुम्हें हम सताना नहीं चाहते । तुम्हारी अगर कुछ ख्वाहिश हो तो कहो । हम मेहरबानी करेंगे ।

सुले०—मैं सिर्फ यही चाहता हूं कि जहाँपनाह अपने इमकानभर मुझे खूब सतायें । अपने बापके खूनी से मैं रत्तीभर भी मेहरबानी नहीं चाहता ।—बादशाह सलामत ! सोचकर देखिए, आपने क्या किया है ? अपने भाईको,—एक ही माके पेटकी औलाद, एक ही बापकी मोहब्बतकी नजरके नीचे पले हुए, एक खून-मांस,—जिससे बढ़कर दुनियामें अपना सगा कोई नहीं,—उसी भाईको आपने मरवा डाला । जो बचपनके खेलोंका साथी, जवानी में पढ़ने-लिखनेका मेहरबान साथी—जिसकी तरफ अगर कोई टेढ़ी आँखसे देखता तो वह देखना आपके कलेजेमें तीरकी तरह लगता —जिसे चोटसे बचानेके लिए आपको अपनी छाती आगे कर देना वाजिब था—उसे—उसे—आपने कत्ल करवा डाला । और ऐसा भाई !—आप कहते तो यह सल्तनत वह आपको एक मुट्ठी धूलकी तरह उठाकर दे सकते थे, उन्होंने आपसे कभी कोई बुरा बर्ताव या आपकी कोई बुराई नहीं की । उनकी खता यही थी कि सब लोग उन्हें चाहते थे—ऐसे भाईको आपने कत्ल करवा डाला । हश्रके दिन जब उनका सामना होगा, तब क्या आप उनकी तरफ आँख उठाकर देख सकेंगे ?— खूनी ! जालिम !—शैतान ! तुम्हारी मेहरबानी ! तुम्हारी मेहरबानीको मैं नफरतसे लात मारता हूँ ।

औरंग०—अच्छा तो वही हो। मैं तुम्हारे लिए मौतकी सजा का हुक्म देता हूँ।—ले जाओ। (सिंहासनसे उतरना।) अल्लाह का नाम लो सुलेमान।

[बालकके वेषमें तेजीसे जोहरत उन्निसाका प्रवेश।]

जोहरत—अल्लाहका नाम लो औरंगजेब! (पिस्तौल तानकर गोली चलाना चाहती ह।)

सुले०—यह कौन ? जोहरत उन्निसा !!! (जोहरतका हाथ पकड़ लेता है।)

जोहरत—छोड़ दो—छोड़ दो। कौन हो तुम ? इस गुनाहगार को मैं आज मार डालूँगी। छोड़ दो—छोड़ दो।

सुले०—यह क्या जोहरत! सब्र करो—खूनका एवज खून नहीं है। अजाबसे सवाबकी जड़ नहीं जमती। मैं चाहता तो सामने लड़ कर इसे मार डालता। लेकिन कत्ल—बड़ा भारी गुनाह है।

जोहरत—डरपोक नामर्दो! बापके नालायक बेटो!—चले जाओ! मैं अपने बापके खूनका बदला लूँगी! छोड़ दो—यह—बना हुआ, लुटेरा, खूनी!— (मूर्छित हो जाना।)

औरंग०—ऐ दिलेर और नेक शाहजादे।—जाओ तुम्हें मैं न मारूँगा। शायस्ताखाँ, इसे ग्वालियरके किलेमें लेजाओ।—और दाराकी बेटीको मेरे अब्बाके पास आगरेके किले में पहुँचा दो।

दूसरा दृश्य ।

स्थान—अराकानका राजमहल ।

समय—रात ।

[शुजा और पियारा ।]

शुजा—कौन जानता था कि तकदीर हमें खदेड़कर आखिरको इस जंगली अराकानके राजाकी पनाह लेनेको मजबूर करेगी ?

पियारा—और यही कौन जानता है कि यहाँसे खदेड़कर कहाँ ले जायगी ?

शुजा—जंगली राजाने क्या अफ़वाह उड़ादी है, जानती हो ?

पियारा—क्या ! जरूर कोई अजीब बात होगी । जल्द बताओ, क्या अफवाह उड़ा दी है । सुननेके लिए मेरी जान निकली जा रही है ।

शुजा—उस पाजीने अफवाह उड़ा दी है कि मैं इन चालीस सवारोंको लेकर अराकान जीतने आया हूं ।

पियारा—एतबार ही क्या !—मैंने सुना है, बख्तियार खिलजीने सिर्फ सत्रह सवारोंसे बंगाल फतह कर लिया था ।

शुजा—गैरमुमकिन है । जरूर किसीने दुश्मनीसे ऐसी गप उड़ा दी है । मैं यकीन नहीं कर सकता ।

पियारा—इससे क्या होता है !

शुजा—पियारा ! राजाने क्या हुक्म दिया है, जानती हो ? राजाने कल सबेरे चले जानेके लिए हमें हुक्म दिया है ।

पियारा—कहाँ ? जरूर उसने हमारे लिए किसी खूब अच्छी आवहवाकी जगहमें रहनेका बन्दोबस्त कर दिया होगा ।

शुजा—पियारा ! क्या तुम कभी भूलकर भी ऐसी सख्त वारदातोंकी दुनियामें कदम न रक्खोगी ? इसमें भी दिल्लगी !

पियारा—इसमें शायद दिल्लगीकी बात करना अच्छा न हो। पर यह पहले ही कह देते!—अच्छा लो, मैं संजीदगी (गंभीरता) इख्तियार करती हूं।

शुजा—हाँ जी लगाकर सुना। और एक बात सुनोगी ? अगर तो सुनोगी आँखें बाहर निकल आवेंगीं, गुस्सेसे गला रुँध जायगा, रगोंसे आगकी चिनगारियाँ निकलने लगेंगीं!

पियारा—अरे बाप रे!

शुजा—अच्छा कहता हूँ—सुनो!—वह पाजी हमें पनाह देनेकी कीमत क्या चाहता है, जानती हो? वह तुम्हें चाहता है! क्या सन्नाटेमें आगइ!—करो दिल्लगी।

पियारा—जरूर! मेरी नजरमें राजाकी इज्जत बढ़ गई।—वह राजा बेशक समझदार है।

शुजा—पियारा! एसी बातें न करो। मैं पागल हो जाऊँगा। यह तुम्हारे नजदीक दिल्लगी हो सकती है, लेकिन मेरे नजदीक यह जिगरके टुकड़े टुकड़े कर देनेवाली तलवार है। -पियारा! तुम जानती हो, तुम मेरी कौन हो?

पियारा—जान पड़ता है, बीबी हूँ!

शुजा—नहीं।—तुम मेरी सल्तनत, इज्जत, हशमत, सब कुछ—दीन दुनिया और आकबत भी हो! सल्तनत नहीं पाई—लेकिन अबतक कभी उसका खयाल नहीं हुआ।—आज हुआ!

पियारा—क्यों?

शुजा—जो मेरे लिये जीने मरने का सवाल है, उसीको लेकर तुम दिल्लगी कर रही हो!

पियारा—नहीं, यह बहुत ज्यादती है; बहुत लोग दूसरा ब्याह

करते हैं, लेकिन तुम्हारी तरह किसीकी बरबादी नहीं हुई होगी।

शुजा—नहीं। मैं समझ गया।—तुम सिर्फ मुँहसे दिल्लगी करती हो। लेकिन भीतर-ही-भीतर कुढ़ी मरी जाती हो। तुम्हारे मुँहमें हँसी और आँखोंमें आँसू हैं।

पियारा—जान लिया!—नहीं। किसने कहा कि मेरी आँखोंमें आँसू हैं! यह लो (आँखें पोंछना।) अब नहीं हैं।

शुजा—अब क्या करना चाहती हो?

पियारा—मुझे बेच डालो।

शुजा—पियारा! अगर तुम मुझे चाहती हो तो यह जहर भरी दिल्लगी रहने दो। सुनो मैं क्या करूँगा, जानती हो?

पियारा—ना।

शुजा—मैं भी नहीं जानता।—औरंगजेबके पास जाऊँ?—नहीं। उससे मरना अच्छा। क्या! तुम कुछ कहतीं नहीं पियारा!

पियारा—सोचती हूँ।

शुजा—सोचो।

पियारा—(दमभर सोचकर) लेकिन लड़के-लड़की?

शुजा—क्या?

पियारा—कुछ नहीं।

शुजा—मैं क्या करूँगा, जानती हो?

पियारा—ना।

शुजा—समझमें नहीं आता। खुदकुशी (आत्महत्या)करनेको जी चाहता है,—लेकिन तुमको छोड़कर मरा भी नहीं जाता।

पियारा—और अगर मैं भी साथ चलूँ?

शुजा—सुखसे मर सकता हूँ।—नहीं, मेरे लिए तुम क्यों मरोगी!

पियारा—ना। वही हो। कल सबेरे हम निकाले हुए न जायँगे। कल जंग होगी। इन चालीस सवारोंको लेकर ही इस राज्य पर हमला करो; हमला करके बहादुरोंकी तरह मरो। मैं तुम्हारे पास खड़े होकर मरूँगी! और लड़की-लड़के—उम्मेद है, वे अपनी इज्जत आप रक्खेंगे।—क्या कहते हो?

शुजा—अच्छा।—लेकिन उससे फायदा क्या होगा?

पियारा—इसके सिवा चारा क्या है! तुम्हारे मर जाने पर मुझे कौन बचायेगा! और तुम अबतक बहादुरोंकी तरह जिन्दा रहे हो, बहादुरोंकी ही तरह मरो। इस जंगली राजाको ऐसी गंदी बात मुहसे निकालनेकी काफी सजा दो।

शुजा—यही अच्छा है। तो कल हम दोनों पास-पास खड़े होकर मरेंगे।—पियारा! तो हमारी इस जिन्दगीके मिलनेकी यही आखिरी रात है! तो आज हँसो, बातें करो, गाओ—जिस तरह अब तक तुम मुझे छाये हुए—घेरे हुए रहती थीं!—एक मर्तबा, आखिरी मर्तबा देख लूँ, सुन लूँ! अपनी सितार छेड़ो! गाओ—बहिश्त इस दुनियामें उतर आवे। सितारकी झनकार और तानसे आसमानको गुँजा दो। अपने हुस्नसे एक दफा इस अँधेरेको दबा दो। अपनी मुहब्बतसे मुझे ढक लो। ठहरो, मैं अपने सवारोंसे कह आऊँ। आज रात भर न सोऊँगा। (प्रस्थान।)

पियारा—मौत!—वही हो! मौत—जहाँ इस दुनियाकी सब उम्मेदों और ख्वाहिशोंका खातमा है, सुख-दुखका अन्त है; मौत—जो गहरी नींद यहाँ खुलती नहीं, जिस अँधेरेमें कभी सबेरा नहीं होता, जो बेहोशी और खामोशी कभी जाती नहीं। मौत!—बुरी क्या है, एक दिन तो होगी ही। तो दिन रहते ही—हाथ-पैर चलते

ही-मरना अच्छा । तो आज यह रूप, बुझते हुए चिरागकी लौ की तरह, उजली चमकसे जल उठे; यह गाना बलन्द आवाजसे आसमान पर चढ़कर सितारोंकी दुनियाको लूट ले; आराम आजका आफतकी तरह हिल उठे; खुशी दुखकी तरह रो उठे, सारी जिन्दगी एक प्यारके बोसेमें खतम हो जाय ।—आज हमारे ऐश की आखिरी रात है ।

(प्रस्थान ।)

तीसरा दृश्य ।

स्थान—आगरेका शाही किला ।

समय—रात ।

[बाहर आँधी, पानी और बिजली ।

शाहजहाँ और जोहरतउन्निसा ।]

शाह०—किसकी मजाल है कि दाराका खून करे ? मैं बादशाह शाहजहाँ खुद उसका पहरा दे रहा हूँ । किसकी मजाल है !—औरंगजेब ?—नाचीज है !—मैं अगर आँखें लाल करूँ, तो औरंगजेब डरसे काँप उठेगा ! मैं अगर कहूँ आँधी उठे, तो आँधी उठेगी; अगर कहूँ बिजली गिरे, तो बिजली गिरेगी !

(बादल गरजता है ।)

जोहरत—ओः कैसा बादल गरज रहा है । बाहर जमीन आसमान हवापानी बगैरहमें जंग छिड़नेसे हलचल मची हुई है ! और भीतर इन आधे पागल बाबाजानके दिलमें भी वैसी ही हलचल मची हुई है ! (मेघगर्जन) ओः फिर !

शाह०—हथियार लो, हथियार लो ! तलवार, भाला, तीर कमान, लेकर दौड़ो ! वे आ रहे हैं, वे आरहे हैं !—लड़ूँगा । जंगी बाजे बजाओ । झंडा खड़ा करो !—वह वे आरहे हैं ।—दूर हो,

खूनके प्यासे शैतानके गुलाम !—मुझे नहीं पहचानता ! मैं बादशाह शाहजहाँ हूँ ! हटकर खड़ा हो !

जोहरत—बाबाजान, जोशमें न आइए। चलिए आपको सुला आऊँ।

शाह०—ना। मेरे हटते ही वे दाराको मार डालेंगे।—पास न आना। खबरदार—

जोहरत—बाबाजान।—

शाह०—पास न आना। तुम लोगोंकी सांसमें जहर है;—वह सांस बँधे हुए गंदे पानीकी हवासे भी बढ़कर जहरीली है, सड़ी हड्डीसे भी बढ़कर बदबूदार है ! कहता हूँ, आगे कदम न बढ़ाना।

जोहरत—बाबाजान ! रात ज्यादह बीत गई है। सोने चलिए।

[जहानाराका प्रवेश।]

जहा०—कैसा पुरदर्द नज्जारा है ! बे-बापकी लड़की, औलादके गममें पागल हुए बुड्ढेको तसल्ली दे रही है। मगर उसके ही कलेजेमें धकधक करके आग जल रही है ! कैसा पुरदर्द और पुरअसर नज्जारा है !—देख जाओ औरंगजेब ! अपनी करतूत देख जाओ !

जोहरत—फूफी ! तुम उठ क्यों आईं ?

जहा०—बादलोंके गरजनेसे आँख खुल गई !—अब्बाजान फिर पागलोंकी तरह बक रहे हैं ?

जोहरत—हाँ फूफी।

जहा०—दवा दी है ?

जोहरत—दी है।—लेकिन मालूम नहीं, अबकी होश आनेमें देर क्यों हो रही है।

शाह०—किसने किया ! किसने किया !

जोहरत—क्या बाबाजान !

शाह०—खून ! खून ! वह खून निकल रहा है ! तमाम फर्श भीग गया ।—देखूँ ! (दौड़कर दाराके कल्पित रुधिरको अपने दोनों हाथोंमें मलकर) अभीतक गर्म है—धुआँ उठ रहा है ।

जहा०—अब्बा ! इतनी रात बीतगई, अभीतक आप नहीं सोये ?

शाह०—औरंगजेब ! मेरी तरफ देखकर हंस रहा है ? हँस ! नहीं पाजी ! तुझे सजा दूँगा !—खड़ा रह खूनी ! हाथ जोड़कर खड़ा हो !—क्या !—माफी माँगता है ? माफी !—माफी नहीं दी जा-सकती । तूने सोचा था, मैं अपना लड़का समझकर तुझे माफ कर दूँगा ?—ना ! तुझे भूसीकी आगमें जलानेका हुक्म देता हूँ ।—जाओ, ले जाओ ।

जहा०—अब्बा, सोने चलिए !

जोहरत—आइए बाबाजान । (हाथ पकड़ती है ।)

शाह०—क्या मुमताज ! तुम उसकी तरफसे माफी माँगती हो ! नहीं, मैं माफ नहीं करूँगा । मैंने उसे उसके जुर्मकी सजा दी है । उसने दाराका खून किया है ।

जहा०—नहीं अब्बा, खून नहीं किया । चलकर सोइए ।

शाह०—खून नहीं किया ? खून नहीं किया ?—सच, खून नहीं किया ? तो फिर मैंने यह क्या देखा ! ख्वाब ?

जहा०—हाँ अब्बा ख्वाब ।

शाह०—तब भी अच्छा है ! लेकिन यह बड़ा बुरा ख्वाब था । अगर सच हो !—क्यों जोहरत ! रो रही है !—तो क्या यह ख्वाब नहीं है ? ख्वाब नहीं हैं ? ओ-हो-हो-हो-हो-!

(मेघका गरजना ।)

जोह०—यह क्या हो रहा है बाहर ! आजकी रात ही क्या क्यामतकी रात है !—सब पागल हो उठे हैं,—पानी, आग, हवा, आसमान, जमीन—सब पागल हो उठे हैं ।—ओः कैसी खौफनाक रात है !

शाह०—यह सब क्या जहानारा ?

जहा०—अब्बा ! रात ज्यादह हो गई है । सोइए । आप पागल तो हैं नहीं ।

शाह०—नहीं, मैं पागल नहीं हूँ । समझ गया, समझ गया ।—जहानारा बाहर यह सब क्या हो रहा है ?

जहा०—बाहर एक क्यामत हो रही है ! वह सुनिए अब्बाजान —बादल गरज रहा है ! वह सुनिए—पानी जोरसे बरस रहा है ! वह सुनिए—हवाकी झुमक ! बारबार बिजली कड़क रही है । पानी का सोता मानों उमड़ चला है । आँधी उस पानीको जमीन पर ती-रकी तरह पहुँचा रही है ।

शाह०—करो पाजियो ! खूब ऊधम करो, खूब शैतानी करो । यह जमीन चुपचाप सब सह लेगी । इसने तुम्हें पैदा ही क्यों किया था !—इसने तुम्हें अपनी गोदमें पाल-पोसकर इतना बड़ा क्यों किया था ! तुम सयाने हुए हो । अब क्यों मानोगे !—उसने जैसा किया वैसा फल पाया । करो पाजियो ! क्या करेगी वह ? ढेरके ढेर आ-गके शोले उगलेगी ? उगले, वे शोले आसमानमें जाकर दूने जोरसे उसीकी छाती पर पड़ेंगे और उसे जला देंगे । वह समुंदरमें लहरें उठाकर गुस्सेसे फूल उठेगी ? फूल उठे, वे लहरें उसीकी छाती पर लंबी साँसोंकी तरह बेकार हो होकर रह जायँगी, भीतर रुकी हुई भाप (गर्मी)से वह भूचालमें हिल उठेगी ? लेकिन डर नहीं है ।

उससे खुद उसीकी छाती फट जायगी, तुम्हारा वह कुछ न कर सकेगी !—अपाहिज्ज बुढ़िया ! वह बेचारी क्या कर सकती है ? सिर्फ अनाज दे सकती है, पानी दे सकती है, फूल फल दे सकती है । और कुछ नहीं कर सकती। करो, उसके ऊपर जुल्म करो। उसकी छातीको सितमके कुल्हाड़ोंसे चीरते चले जाओ ! वह कुछ न कर सकेगी !—करो पाजियो !—मैया ! एक दफा गरज उठ सकती हो मैया ? क्यामतकी आवाजसे, सैकड़ों सूरजोंकी तरह जलकर फटकर, चौचीर होकर—इस खाली आसमानमें छिटक जा सकती हो मैया ?—देखूँ, वे कहाँ रहते हैं ? (दाँत पीसना ।)

जहा०—अब्बा ! इस बेकार गुस्सेसे क्या होगा ! चलिए, सोइए ।

शाह०—सच बेटी—बेकार है ! बेकार है ! बेकार है !

(मेघगर्जन ।)

जोहरत—ओः कैसी रात है फूफी ! ओः ! कैसी-खौफनाक है !

शाह०—जी चाहता है जहानारा, कि इस रातके आँधी पानी और अँधेरेमें एक बार खूब तेजीसे दौड़ूँ । और ये सफेद बाल नोचकर, इस हवामें उड़ाकर, इस बरसातमें बहा दूं। जी चाहता है कि अपनी छाती खोलकर बिजलीके आगे कर दूँ। जी चाहता है कि यहाँसे अपनी रूह निकालकर खुदाको दिखाऊँ ! वह फिर गरज रहा है,—बादल ! तुम बारबार क्यों बेकार गरज रहे हो ? अपनी चोटसे जमीनकी छातीके टुकड़े टुकड़े कर सकते हो ? अँधेरे !—कैसा अँधेरा है !—तू सूरज और तारोंको एक दम निगल कर नेस्तनाबूद कर सकता है ?

जहा०—वह फिर !—

तीनों—ओः ! कैसी रात है !

चौथा दृश्य ।

स्थान—ग्वालियरका किला ।

समय—सबेरा ।

[सुलेमान और महम्मद ।]

सुले०—सुना महम्मद ! फैसलेमें चचाको मौतकी सजा दी गई है !

मह०—फैसलेमें नहीं भाई, फैसलेका ढोंग रचकर । सिर्फ बाकी थे यही चचा ! आज उनका भी खातमा हुआ !

सुले०—महम्मद ! तुम्हारे ससुर सुल्तान शुजाकी मौत कैसे हुई ?

मह०—ठीक मालूम नहीं ! कोई कहता है, वे मय बीबीके दरियामें डूब गये। कोई कहता है, वे मय बीबीके लड़कर मरे और लड़की-लड़कोंने खुदकुशी (आत्महत्या) कर ली।

सुले०—तो उनके खान्दानमें कोई नहीं रह गया !

मह०—नहीं।

सुले०—तुम्हारी बीबीने सुना है ?

मह०—सुना है। वह कल रात भर रोती रही;सोई नहीं ।

सुले०—महम्मद ! तुम्हें इतना बड़ा रंज है ! सह सकते हो ?

मह०—और तुम्हें यह बड़ा आराम है ! माँ-बापसे मिलने निकले थे, मगर उनसे मुलाकात भी नहीं हुई

सुले०—फिर उसी बातकी याद दिला रहे हो ! महम्मद, तुम इतने निठुर हो !—तुम्हारे अब्बाने क्या तुम्हें यहाँ मुझे इसी तरह जलानेके लिए भेजा है ! तुम्हें तो मुझे बहलाना और तसल्ली

देना चाहिए—

महू०—भाई साहब ! अगर इस कलेजेका खून देनेसे तुम्हें कुछ भी तसल्ली हो तो कहो, मैं अभी छुरी भोंक लूँ !

सुले०—सच कहते हो महम्मद ! इस रंजके लिये दिलासा है ही नहीं । अगर बिल्कुल भुला दे सकते हो, अगर गुजरे हुएको एक-दम मिटा दे सकते हो तो मिटा दो !

मह०—क्या ऐसी कोई तरकीब नहीं है ? भाईसाहब ! क्या ऐसा कोई जहर नहीं है कि—

सुले०—वह देखो महम्मद !—सिपरको देखो ।

[पुलके ऊपर सिपरका प्रवेश ।]

सुले०—वह देखो उस बच्चेको–मेरे छोटे भाई सिपरको देखो ! देखो इस गूँगी बुतसूरतको ! छातीके ऊपर दोनों हाथ बाँधे एकटक दूर सूनसानकी तरफ चुपचाप ताक रहा है ! ऐसा खौफनाक और पुरदर्द नज्जारा कभी देखा है महम्मद ?—इसको देखकर भी क्या तुम अपने रंजका खयाल सोच सकते हो !

मह०—ओ: कैसा खौफनाक है !—सच कहा ! हमारा रंज मुँहसे कहा जा सकता है । लेकिन यह रंज बयान नहीं किया जा सकता । बच्चा जब रोता है, तब पास ही अगर किसीके कराहनेका शोर उठे, तो डरसे बच्चेका रोना थम जाता है । वैसे ही हमारा रंज इस रंजके आगे खौफसे चुप हो जाता है ।

सुले०—उसे देखो, वह दोनों आँखें मूँदे दोनों हाथ मल रहा है ! शायद सदमेसे चिल्लाना चाहता है, मगर आवाज नहीं निकलती !—सिपर ! सिपर ! भाई !

(एक बार सुलेमानकी तरफ देखकर सिपरका प्रस्थान ।)

मह०—भाईसाहब !

सुले०—महम्मद !

मह०—मुझे माफ करो !

सुले०—तुमसे क्या खता हुई है भाई !

मह०—नहीं भाई साहब, मुझे माफ करो । इतने गुनाहका बोझ अब्बाजान सँभाल नहीं सकेंगे । इसीसे आधा गुनाह मैं अपने सिर लेता हूं । मैं बड़ा भारी गुनहगार हूं । मुझे माफ करो ।

(घुटने टेक देना ।)

सुले०—उठो भाई !—शरीफ नेक बहादुर ! मैं तुम्हें माफ करूँगा ? तुम जो सह रहे हो वह अपनी खुशीसे ईमानके लिए । मैं ही सिर्फ बदनसीब हूँ !

मह०—तो कहो, मुझसे तुम्हें कुछ मलाल नहीं है । भाइ कहकर मुझे गलेसे लगा लो ।

सुले०—मेरे भाई ! (गले लगाना ।)

मह०—वह देखो चचाजान (मुराद) को लोग कत्लके लिए लिये जा रहे हैं।

[सुलेमान उधर देखता है । पुलके ऊपर पहरेके साथ मुरादका प्रवेश ।]

मुराद—(ऊँचे स्वरमें) या अल्लाह ! अपने गुनाहोंकी सजा मैं पा रहा हूँ। इसका मुझे रंज नहीं है। लेकिन औरंगजेब क्यों बच रहा है ?

नेपथ्यमें—कोई नहीं बचेगा। काँटेकी तौल बदला मिल जायगा ।

सुले०—यह किसकी आवाज है ?

मह०—मेरी बीबीकी ।

नेप०—उसको जो सजा मिलेगी, उसके आगे तुम्हारी यह सजा तो इनाम है ।—कोई नहीं बचेगा । कोई नहीं बचेगा ।

मुराद—(उल्लासके साथ) उसे भी सजा मिलेगी ! तो मुझे कत्लगाहमें ले चलो । मुझे अब कुछ रंज नहीं है ।

(पहरेके साथ मुरादका प्रस्थान ।)

सुले०—महम्मद ! यह क्या ! तुम एकटक उधर ही ताक रहे हो ? क्या देखते हो ?

मह०—दोजख । इसके सिवा और भी क्या कोई दोजख है ? या खुदा वह कैसा होगा ?

पाँचवाँ दृश्य ।

स्थान—औरंगजेबकी बाहरी बैठक ।

समय—आधी रात ।

[अकेले औरंगजेब ।]

औरंग०—जो किया—दीनके लिए । अगर और किसी तरह मुमकिन होता !—(बाहरकी तरफ देखकर) ओः कैसा अँधेरा है !—कौन जिम्मेदार है !—मैं !—यह फैसला है ! वह कैसी आवाज है ?—नहीं, हवा की आहट है !—यह क्या ! किसी तरह इस खयालको दिलसे दूर नहीं कर सकता । रातको नींदकी खुमारीसे ढुलक पड़ता हूँ, मगर नींद नहीं आती ! (लंबी साँस लेता है) ओः ! कैसा सन्नाटा है ! इतना सन्नाटा क्यों है ! (टहलता है, फिर एकाएक खड़े होकर) वह क्या है । फिर वही दाराका कटा हुआ सिर !—शुजाकी खूनसे तर लाश !—मुरादका धड़ !—जाओ सब ! मुझे यकीन नहीं । अरे ये फिर वे ही लोग !—मुझे घेर कर नाच रहे हैं !—कौन हो तुम ? धुऐंकी चमकदार चोटीकी तरह बीचबीचमें—जागते हुए भी सोतेकीसी हालतमें—मुझे देख पड़ते हो !—चले जाओ !—वह मुरादका धड़ मुझे पुकार रहा है, दाराका सिर

मेरी तरफ एकटक ताक रहा है, शुजा हँस रहा है।—यह सब क्या है !—ओः (आँखें बंद कर लेना, फिर खोलना) जाने दो ! गया ! ओः !—बदनमें तेजीके साथ खून चक्कर मार रहा है। सिर पर मानों किसीने पहाड़ लाद दिया है।

[दिलदारका प्रवेश ।]

औरंग०—(चौंककर) दिलदार ?

दिल०—जहाँपनाह !

औरंग०—यह सब मैंने क्या देखा ?—जानते हो ?

दिल०—इन्साफके पर्देके ऊपर गर्म पछतावेकी परछाहीं।—तो शुरू हो गया ?

औरंग०—क्या ?

दिल०–पछतावा। जानता था कि जरूर ही होगा। इतना बड़ा कुदरती कानूनके खिलाफ काम—कायदेका इतना बड़ा उलट फेर–कुदरत क्या बहुत दिनों तक सह सकती है ?—कभी नहीं।

औरंग०—दिलदार कायदेका उलट फेर क्या ?

दिल०—यही बूढ़े बापको नजरबंद रखना जानते हैं ! जहाँपनाह, आपके अब्बा आज आपकी बेरहमी देखकर पागल हो रहे हैं !—उसके ऊपर यह एकके ऊपर एक भाइयोंका खून ! इतना बड़ा अजाब क्या यों ही चला जायगा ?

औरंग०—कौन कहता है; मैंने भाइयोंका खून किया है ? यह काजियोंका फैसला है।

दिल०—हमेशा औरोंको धोखा देते रहनेसे क्या जहाँपनाहको यह भी यकीन हो गया है कि आप अपनेको भी धोखा दे सकते हैं ? यही सबसे बढ़कर मुश्किल है। आप भाइयोंको गला घोटकर मार

डाल सकते हैं; लेकिन इन्साफको जल्दी गला घोंटकर न मार सकेंगे। हजार उसका गला घोटिए, तब भी उसकी धीमी, गहरी, ढकी हुई, टूटीफूटी आवाज—दिलके भीतरसे. रह रहकर सुनाई ही देगी। —अब अपने आमालोंका नतीजा भोगिए ।

औरंग०—जाओ तुम यहाँ से । कौन हो तुम दिलदार—जो औरंगजेबको नसीहत करने आये हो ?

दिल०—मैं कौन हूँ औरंगजेब ! मैं हूँ मिर्जा महम्मद नियामतखाँ हाजी ।

औरंग०—नियामतखाँ हाजी !—एशियाके सबसे बढ़कर मशहूर आकिल दानिशन्द नियामतखाँ !

दिल०—हाँ औरंगजेब ! मैं वही नियामतखाँ हूँ ! सुनो, मैं शाही मामलोंकी जानकारी हासिल करनेके लिए, इत्तिफाकिया इस घरेलू झगड़ेके चक्करमें आकर पड़ गया था । वही जानकारी हासिल करनेके लिए मैं नीच मसखरा बना, और एकबार एक मामूली चालाकीमें भी शरीक हुआ ।—लेकिन जो जानकारी लेकर मैं आज यहाँसे जाता हूँ—जान पड़ता है, उसे न ले जाता तो अच्छा था !—औरंगजेब ! क्या तुमने यह सोचा था कि मैं तुम्हारे रुपयोंके लिए अबतक तुम्हारी गुलामी कर रहा था ? इल्ममें इस वक्त भी वह शान है कि वह मगरूर दौलतके सिर पर लात मार देता है बादशाह सलामत मैं जाता हूँ ! (जाना चाहता है ।)

औरंग०—जनाब !

दिल०—ना, तुम मुझे लौटा न सकोगे ! औरंगजेब !—मैं जाता हूँ । हाँ एक बात कहे जाता हूँ । तुम सोचते हो, इस जिन्दगीकी बाजी तुमने जीत ली ?—नहीं, यह तुम्हारी जीत नहीं है औरंगजेब ! यह

तुम्हारी हार है। बड़े गुनाहकी बड़ी सजा होती है !—बर्बादी। तनुज्जुली ! तुम जितना अपनी तरक्की समझ रहे हो, सचमुच, उतना ही तुम नीचे गिरते जा रहे हो। उसके बाद जब यह जवानीका नशा उतर जायगा, जब धुँधली नजरसे देखोगे कि अपने और बहिश्तके बीचमें तुमने कैसा गढ़ा खोद रक्खा है, तब तुम उधर देखकर काँप उठोगे।—याद रक्खो ! (प्रस्थान।)

[औरंगजेब सिर झुकाये दूसरी तरफसे जाता है।]

छठा दृश्य।

स्थान—आगेरका किला। शाहीमहलका बरामदा।

समय—तीसरा पहर।

[जहानारा और जोहरत उन्निसा बैठा बातें कर रही हैं।]

जहा०—बेटी जोहरत उन्निसा ! औरंगजेबके ऐसा देखनेमें सीधा, हँसमुख, मीठी छूरी और कमीना आदमी तुमने और भी कहीं देखा है !

जोहरत—ना। मुझे एक तरहका खौफ लगता है फूफो ! भीतर इतना बे रहम, बाहर इतना सीधा; भीतर इतना शहजोर, बाहर इतना बेचारा; भीतर इतना जहरीला और बाहर इतना मीठा !—यह भी मुमकिन है ! मुझे खौफ लगता है।

जहा०—लेकिन मेरे दिलमें उसके लिए एक तरहकी इज्जतका खयाल पैदा होता है। ताज्जुबसे सन्नाटेमें आजाती हूँ कि आदमी इस तरह हँस सकता है—और साथ ही साथ खूनी शेरकी तरह लालच भरी निगाहसे देख सकता है;—ऐसी नर्मी और सहूलियतसे बातें कर सकता है—जब कि साथ ही साथ उसके भीतर-ही-भीतर हसदकी आग सुलग रही है; खुदाके आगे इस तरह हाथ जोड़ सक-

ता है--जब कि साथ ही साथ दिलमें कोई शैतनतका नया मनसूबा गाँठ रहा है ।—बलिहारी !

जोहरत—बाबाजानको इस तरह कैद कर रक्खा है, फिर भी सल्तनतके कामोंमें उनकी राय माँग भेजता है । उनके सामने ही एक एक करके उनके बेटोंका खून करता जाता है—फिर भी हर मर्तबा उनसे माफी माँग भेजता है ! जैसे बड़ी भारी शर्म, बड़ा भारी लिहाज है ! अजीब आदमी है !—वह लो, बाबाजान आ रहे हैं ।

[शाहजहाँका प्रवेश ।]

शाह०—देख, कैसा अपने आपको सजाया है मैंने ! जहानारा, देख । जोहरत उन्निसा, देख ! औरंगजेब कहीं इन जवाहरोंको चुरा न ले जाय—इसीसे मैं इन्हें पहने पहने घूमता हूँ । कैसा देख पड़ता हूँ ! (जोहरतसे) मुझसे शादी करनेको तेरा जी नहीं चाहता ?

जोहरत—फिर हवास जाता रहा । पागलपन बीचबीचमें चाँद पर बादलकी तरह आकर चला जाता है ।

शाह०—(सहसा गंभीर होकर ।) लेकिन खबरदार ! ब्याह न करना । (नीचे स्वरसे)लड़का होगा तो तुझे कैद कर रक्खेगा, तेरे जेवर छीन लेगा । ब्याह न करना ।

जहा०—देखती हो बेटी ! यह पागलपन नहीं है । इसके साथ होश-हवाश भी हैं । यह मानों 'शायरीमें रोना' है ।

जोहरत—दुनियामें जितने पुरदर्द नज्जारे हैं, उनमें अक्लमन्द-पागलका ऐसा पुरदर्द नज्जारा शायद और नहीं है । एक खूबसूरत मूरत जैसे टूट कर बिखरी पड़ी हुई है ।—ओः बड़ा ही पुरदर्द है ।

(आँखोंपर आँचल रखकर प्रस्थान ।)

शाह०—मैं पागल नहीं हुआ हूँ जहानारा ! सँभलकर बातचीत

कर सकता हूँ—कोशिश करनेसे अपना मतलब समझा सकता हूँ।

जहा०—यह मैं जानती हूँ अब्बाजान !

शाह०—लेकिन मेरा दिल टूट गया है। इतना बड़ा सदमा उठाकर भी जिन्दा हूँ, यही ताज्जुब है। दारा, शुजा, मुराद,—सबको मार डाला !—और उनका एक लड़का भी बदला लेनेके लिए नहीं रहा ! सबको मार डाला !

[औरंगजेबका प्रवेश ।]

शाह०—यह कौन ? (भय और विस्मयके भावसे) यह—यह तो बादशाह है !

जहा०—(आश्चर्यसे)यह तो सचमुच ही औरंगजेब है !

औरंग०—अब्बा !—

शाह०—मेरे हीरे मोती लेने आया है ! न दूँगा—न दूँगा। अभी सबको लोहेकी मुँगरियोंसे चूर चूर कर डालूँगा ! (जानाचाहताहै।)

औरंग०—(सामने आकर) नहीं अब्बा ! मैं हीरे-जवाहरात लेने नहीं आया।

जहा०—तो जान पड़ता है, बापको मारने आये हो। अच्छा है बापका खून ही क्यों बाकी रह जाय !—यह भी हो जाय।

शाह०—मारेगा—मेरा खून करेगा ! कर, औरंगजेब। मुझे कत्ल कर !—उसके बदलेमें ये सब जवाहरात मैं तुझे दूँगा; और—मरनेके वक्त तुझे इस मेहरबानीके लिए दुआ देकर मरूँगा। ले—मेरी जान ले ले।

औरंग०—(एकाएक घुटने टेककर)मुझे इससे भी बढ़कर गुनहगार न बनाइए। अब्बा ! मैं गुनहगार—भारी गुनहगार हूँ। उसी गुनाहकी आगसे जलजलकर खाक हुआ जा रहा हूँ। देखिए अब्बा

यह ढीली देह, ये गढ़ोंमें धसी हुई आँखें, ये सूखे ओठ, यह पीला और उतरा हुआ चेहरा । ये मेरी गवाही देंगे ।

शाह०—दुबला हो गया है । सचमुच, दुबला हो गया है ।

जहा०—औरंगजेब ! दीवाचे (भूमिका) की जरूरत नहीं है । यहाँ एक ऐसा आदमी मौजूद है जो तुमको खूब जानता है । कहो, कौनसा नया शैतनतका मनसूबा गाँठकर आये हो ! कहो अब क्या चाहते हो ?

औरंग०—अब्बासे माफी ।

जहा०—माफी ! औरंगजेब, यह तो तुमने खूब नया ढंग निकाला !

औरंग०—मैं जानता हूँ बहन कि—

जहाँ०—चुप रहो ।

शाह०—कहने दे, जहानारा । कहो, क्या कहना चाहते हो औरंगजेब ?

औरंग०—और कुछ नहीं कहना चाहता, सिर्फ आपसे माफी चाहता हूँ । (जहानारा व्यंग्यकी हँसी हँसती है ।)

औरंग०—(एक बार जहानाराकी ओर देखकर शाहजहाँसे) अगर आप मेरी इस इल्तिजाको जालसाजी समझें तो अब्बाजान आइए मेरे साथ; मैं इसी दम महलका फाटक खोले देता हूँ; और आपको आगरेके तख्त पर सबके सामने बैठाकर बादशाह मानकर आपकी ताजीम करता हूँ । यह मैं अपना ताज आपके पैरों पर रक्खे देता हूँ ।

(मुकुट उतारकर शाहजहाँके पैरों पर रखना ।)

शाह०—मेरा दिल पसीजा जाता है, पसीजा जाता है ।

औरंग०—मुझे माफ कीजिए अब्बा ! (दोनों पैर पकड़ना ।)

शाह०—बेटा ! (औरंगजेबको उठाकर अपनी आँखें पोंछना ।)

जहा०—औरंगजेब यह तुमने अच्छा तमाशा किया ।

शाह०—बोल नहीं जहानारा !—बेटा मेरा मेरे पैर पकड़कर मुझसे माफी माँग रहा है । मैं क्या माफी दिये बिना रह सकता हूँ ?—हायरे बापका कलेजा ! इतनी देर तक तू क्या इसीके लिए आफत मचाये था ! घड़ी भरमें सारा गुस्सा गलकर पानी हो गया !

औरंग०—आइये अब्बा—आपको फिर आगरेके तख्त पर बठाऊँ और बैठाकर मक्केशरीफ जाकर अपने गुनाहोंका कफारा करनेकी कोशिश करूँ !

शाह०—ना, मैं अब फिर बादशाह होकर तख्त पर नहीं बैठना चाहता । मेरे दिन पूरे हो आये हैं !—इस सल्तनतको तुम भोगो ! बेटा ! ये हीरे, जवाहरात और ताज तुम्हारे हैं ।—और माफी !—औरंगजेब—औरंगजेब ! नहीं, उन बातोंको इस वक्त याद न करूँगा । औरंगजेब ! तेरे सब कसूर मैंने माफ कर दिये । (आँखें बंद कर लेते हैं ।)

जहा०—अब्बा ! दाराके खूनीको माफी !—

शाह०—चुप !—जहानारा ! इस वक्त मेरे आराममें खलल न डाल । उन्हें तो अब पा नहीं सकता ।—सात बरस सख्त तकलीफमें बिताये हैं, इतने दिनोंतक भीतरी आगसे जलता रहा हूँ । रंजमें पागल हो गया हूँ । देखती तो है । एक दिन तो खुश हो लेने दे ! तू भी औरंगजेबको माफ कर दे बेटी ।—औरंगजेब ! जहानारासे माफी माँगो ।

औरंग०—मुझे माफ करो बहन !—

जहा०—तुझमें माफी मागनेकी हिम्मत है ?—अब्बाकी तरह

मैं जईफ नहीं हुइ ! लुटेरोंके सरदार ! खूनी ! दगाबाज !—

शाह०—जहानारा यह भी तेरी ही तरह बे माँका है—तेरी ही तरह यतीम है ! माफ कर!—इसकी माँ अगर इस वक्त जिन्दा होती, तो वह क्या करती जहानारा ? अपनी औलादकी मोहब्बत इसकी माँ मेरे पास जमा कर गई है ।—क्या जहानारा ! अब भी चुप है ! आँख उठाकर देख, इस शामके वक्त इस जमनाकी तरफ देख—देख वह कैसी साफ है ! देख इस आसमानकी तरफ—देख उसका रंग कैसा गहरा है ! देख इस चमनकी तरफ—देख वह कैसा खूबसूरत है ! और देख यह पत्थर बने हुए मोहब्बतके आँसुओंका ढेर; यह जुदाईके सदमेकी हमेशा बनी रहनेवाली कहानी ! यह खड़ा, चुप, बेदाग, सफेद महल। इस ताजमहलकी तरफ आँख उठाकर देख—कैसा पुरदर्द है । इन सबकी तरफ देखकर औरंगजेबको माफ कर—और यह सोचनेकी कोशिश कर कि तू इस दुनियाको जितना खराब समझती है वह उतनी खराब नहीं है —जहानारा ।

जहा०—औरंगजेब ! यहाँ तुम्हारी पूरी तौरसे जीत हुई ! औरंगजेब—अपने इस जईफ और लबेजान बापके कहनेसे मैंने तुम्हें माफ कर दिया। (दोनों हाथोंसे मुँह ढक लेना ।)

[बेगसे जोहरतउन्निसाका प्रवेश ।]

जोहरत—लेकिन मैंने माफ नहीं किया खूनी ! सारी दुनिया चाहे तुझे माफ कर दे, पर मैं माफ नहीं करूँगी । मैं तुझे बददुआ देती हूँ—गुस्सेमें भरी हुई नागिनकी तरह गर्म साँस लेकर मैं तुझे बददुआ देती हूँ । उस बददुआकी वहशतनाक परछाहीं जैसे एक खौफकी तरह खाते-पीते-सोते-जागते तेरे पीछे पीछे फिरे । सोतेमें उस

बद्दुआका बोझ पहाड़की तरह तेरी छाती पर रखा रहे। उस बद्-दुआकी खौफनाक आवाज तेरी खुशी और फतहयाबीके बाजोंमें बेसुरी होकर गूँजती रहे। तूने मेरे बापका खून करके जो सल्तनत हासिल की है, मैं बद्दुआ देती हूँ, तू बहुत दिनोंतक जी, और सल्तनत कर।—वही सल्तनत तेरे लिए काल हो। वह तुझे एक गुनाहसे दूसरे गहरे गुनाहके गढ़ेमें ढकेलती रहे। मरते वक्त तेरे इस जलते हुए सिर पर खुदाके रहमकी एक छींट भी न पड़े।

(प्रस्थान।)

(शाहजहाँ, औरंगजेब और जहानारा, तीनों सिर झुकाये चुप खड़े रहते हैं।)

[पर्दा गिरता है।]

समाप्त।